# मास्टर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत)

# Master of Arts (Sanskrit)

## द्वितीय सेमेस्टर - एम0ए0एस0एल - 508

# नाटक एवं नाट्यशास्त्र

**उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139**

Toll Free : 1800 180 4025

Operator : 05946-286000

Admissions : 05946-286002

Book Distribution Unit : 05946-286001
Exam Section : 05946-286022
Fax : 05946-264232
Website : http://uou.ac.in

## पाठ्यक्रम समिति

**कुलपति (अध्यक्ष),**
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

**प्रोफे0 ब्रजेश कुमार पाण्डेय,**
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्यायन संस्थान,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

**प्रोफे0 रमाकान्त पाण्डेय,**
राष्ट्रीय संस्कृत संस्था,जयपुर परिसर, राजस्थान

**प्रोफे0 एच0पी0शुक्ल-संयोजक,**
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

**डॉ0 देवेश कुमार मिश्र,**
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

## पाठ्यक्रम सम्पादन एवं संयोजन

**डॉ0 नीरज कुमार जोशी**
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी., संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

| इकाई लेखन | खण्ड एवं इकाई संख्या |
| --- | --- |
| **डॉ0 देवेश कुमार मिश्र**<br>सहायक आचार्य ,संस्कृत विभाग उ0 मु0 वि0 वि0 | प्रथम खण्ड |
| **प्रो0 पुष्पा अवस्थी विभागाध्यक्षा,**<br>एस.एस.जे.परिसर कुमायुँ वि0 वि0 अल्मोड़ा | द्वितीय खण्ड |
| **डॉ0 राधेश्याम गंगवार (एसो0 प्रो0)**<br>राजकीय महिला महावि0 विकास नगर, देहरादून | तृतीय एवं चतुर्थ खण्ड |
| **डॉ0 डी0 एस0 तिवारी**<br>राजधानी कालेज , राजा गार्डेन दिल्ली | पंचम खण्ड |

**कापीराइट @** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

**प्रकाशन वर्ष :** 2021, **ISBN - 978-93-84632-24-3**

**पुस्तक का शीर्षक - नाटक एवं नाट्यशास्त्र** **MASL- 508**
**प्रकाशक**: (उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय) -263139 **मुद्रक:**

**नोट** : - इस अध्ययन सामग्री का प्रकाशन छात्र हित में शीघ्रता के कारण किया गया है सम्पादित संस्करण का प्रकाशन अगले वर्ष सम्भव है। इस सामग्री का उपयोग अन्यत्र कहीं भी उ0 मु0 वि0 की लिखित या प्रशासनिक अनुमति के बिना नहीं किया जा सकता है।

# अनुक्रम


## तृतीय खण्ड: उत्तररामचरितम् का विश्लेषण पृष्ठ संख्या 1-4

इकाई 1 : भवभूति एवं उनकी कृत्तियों का सामान्य परिचय **5-18**

इकाई 2 : उत्तररामचरितम् का नाट्यशास्त्रीय मूल्यांकन **19-30**

इकाई 3 : उत्तररामचरितम् के प्रधान एवं गौण रसों की मीमांसा **31-42**

इकाई 4 : उत्तररामचरितम् के पात्रों का चरित्र-चित्रण **43-55**

इकाई 5: उत्तररामचरितम् की भाषा-शैली **56-65**

## चतुर्थ खण्ड: उत्तररामचरितम् प्रथम एवं द्वितीय अंक पृष्ठ संख्या 66

इकाई 1: उत्तररामचरितम् प्रथम अंक का पूर्वार्द्ध **67-84**

इकाई 2: उत्तररामचरितम् प्रथम अंक का उत्तरार्द्ध **85-104**

इकाई 3: उत्तररामचरितम् द्वितीय अंक का पूर्वार्द्ध **105-121**

इकाई 4: उत्तररामचरितम् द्वितीय अंक का उत्तरार्द्ध **122-137**

## पंचम खण्ड:उत्तररामचरितम् तृतीय एवं चतुर्थ अंक पृष्ठ संख्या 138

इकाई 1: उत्तररामचरितम् तृतीय अंक का पूर्वार्द्ध **139-171**

इकाई 2: उत्तररामचरितम् तृतीय अंक का उत्तरार्द्ध **172-197**

इकाई 3: उत्तररामचरितम् चतुर्थ अंक का पूर्वार्द्ध **198-214**

इकाई 4: उत्तररामचरितम् चतुर्थ अंक का उत्तरार्द्ध **215-237**

# द्वितीय सत्रार्द्ध / SEMESTER- II
# खण्ड - 3
# उत्तररामचरितम् का विश्लेषण

# इकाई 1- भवभूति एवं उनकी कृतियों का सामान्य परिचय

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 भवभूति: एक परिचय
  1.3.1 जीवनवृत्त
  1.3.2 जन्मस्थान
  1.3.3 पाण्डित्य
1.4 भवभूति की कृतियों का सामान्य परिचय
1.4.1 मालतीमाधव
1.4.2 महावीरचरितम्
1.4.3 उत्तररामचरितम्
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 1.1 प्रस्तावना:-

भारतीय नाट्य एवं नाट्यशास्त्र के अन्तर्गत उत्तररामचरित के विश्लेषण से सम्बन्धित यह प्रथम इकाई है। इसमें आप भवभूति एवं उनकी कृतियों का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगें। करुणावतार महाकवि भवभूति संस्कृत नाटककारों की प्रथम पंक्ति में गिने जाते हैं। बाह्य जगत् के सौन्दर्य पर मुग्ध विद्वान् नाट्य के क्षेत्र में भी कालिदास को प्राथमिकता प्रदान करते हैं, परन्तु आन्तरिक सौन्दर्य को पहचानने वालों की दृष्टि में भवभूति का स्थान विश्व के समस्त कलाकारों से आगे है।

भवभूति की तीन रचनाएँ उपलब्ध है। ये तीनों रूपक हैं जिनमें प्रथम मालती माधव एक प्रकरण है । इसमें मालती और माधव नामक दो प्रेमियों की कथा निबद्ध है । दूसरा महावीर चरित नाटक है जिसमें राम के प्रारम्भिक जीवन से लेकर राज्याभिषेक तक की कथा चित्रित की गई है। तीसरा उत्तर रामचरित नाटक, राम के राज्याभिषेक के बाद से लेकर सीता निर्वासन की मुख्य घटना पर आधारित है ।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महाकवि भवभूति के जीवनवृत्त और समय आदि को समझा सकेंगे तथा उनकी कृतियों का सम्यक् विवचेन कर सकेंगे।

## 1.2 उद्देश्य:-

**प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भवभूति के—**

- जीवन वृत्त से अवगत हो सकेंगे।
- स्थितिकाल को समझ सकेंगे।
- व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगें।
- पाण्डित्य को समझ पायेंगे।
- मालतीमाधव प्रकरण को समझ सकेंगे ।
- मालतीमाधव में प्रेम और सौन्दर्य की अनुभूति कर सकेंगे ।
- महावीरचरित की वस्तुयोजना को समझा सकेंगे ।
- महावीरचरित की कथावस्तु का औचित्य जान सकेंगे ।
- उत्तररामचरित की कथावस्तु को समझ सकेंगे ।
- उत्तररामचरित की विषयवस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे ।

## 1.3 भवभूति: एक परिचय:-

संस्कृत साहित्य की यह परम्परा रही है कि कवि या लेखक अपना परिचय नहीं देते रहे है। जिसने दिया भी वह संक्षिप्त ही और उसके आधार पर उसके जीवन चरित तथा समय पर सम्यक् प्रकाश नहीं पड़ता। परन्तु भवभूमि के सम्बन्ध में वैसी बात नहीं है। अपने रूपकों की प्रस्तावना में उन्होंने अपने कुल, गुरु और पाण्डित्य आदि का संक्षिप्त परिचय दिया है। यहाँ आप भवभूति के जीवन वृत्त, स्थितिकाल तथा पाण्डित्य का विहंगम अवलोकन करेंगे।

### 1.3.1 जीवनवृत्त:-

करुणा के उत्पूर तटाक से करुण रस को निर्बाध प्रवाहित करने वाले भवभूति ने अपने विषय में महावीरचरित तथा मालतीमाधव की प्रस्तावनाओं में स्पष्ट संकेत किया है। इनका जन्म कश्यप वंश के उदुम्बर नामक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पूर्वज कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा को पढ़ने वाले आहिताग्नि थे। वे विदर्भ देश के अन्तर्गत पष्पुर नामक नगर के निवासी थे। इनके पूर्वजों ने वाजपेय और सोमयाग जैसे बडे-बडे यज्ञ किये थे। ये लोग अपने समय में प्रचलित सभी विद्याओं के प्रकाण्ड विद्वान् थे। भवभूति ने अपने पांचवे पूर्वज का महाकवि नाम से निर्देश किया है। यह महाकवि नाम पितृकृत न होकर कार्यकृत प्रतीत होता है, जिससे सिद्ध होता है कि भवभूति को विद्या और कविता दोनों पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुई थीं। इनके बाबा का नाम गोपाल भट्ट और पिता का नाम नील कण्ठ था। इन्होंने स्वयं को जतुकर्णी पुत्र लिखा है, जिससे स्पष्ट है कि इनकी माता का नाम जतुकर्णी था। इनके पिता ने इनका नाम श्रीकण्ठ रखा था, पर ये काव्य जगत् में भवभूति के नाम से प्रसिद्ध हो गये। इस प्रसिद्धि का कारण इनके द्वारा देवी पार्वती की वन्दना में लिखा गया एक श्लोक था जिसमें इन्होंने पार्वती के स्तनों को भवभूति सिताननौ कहा था।

### 1.3.2 स्थितिकाल:-

भवभूति संस्कृत साहित्य जगत् की विलक्षण विभूति हैं। उन्होंने अपने नाटकों में  अपना एवं अपने परिवार का पर्याप्त परिचय दिया है, परन्तु अपने जन्म एवं स्थितिकाल की कोई सूचना नहीं दी है। फिर भी उपलब्ध अन्तः एवं बाह्य प्रमाणों के आधार पर उनका काल निर्णय किया जा सकता है।

भवभूति की भाषा-शैली पर बाणभट्ट का प्रभाव दिखाई देता है। भवभूति के तीनों नाटकों में प्रमुखतः मालती माधव में बाणभट्ट की शैली का प्रभाव प्रतीत होता है। बाणभट्ट हर्षवर्धन (606-648 ई0) के दरबारी कवि थे। इसलिए बाणभट्ट का समय सप्तम शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। बाणभट्ट ने हर्षचरित के आरम्भ में ही अपने पूर्ववर्ती कवियों एवं ग्रन्थों की चर्चा की है। उनमें भास, कालिदास, सातवाहन, प्रवरसेन एवं आढ्य राज आदि कवियों तथा वासवदत्ता, सेतुबंध तथा बृहत्कथा इत्यादि ग्रन्थों का

उल्लेख किया है। परन्तु भवभूति एवं उनकी कृतियों का संकेत कहीं नहीं किया है। इससे पता चलता है कि भवभूति बाणभट्ट के परवर्ती नाटककार है।

वामन ने अपने काव्यालंकार सूत्रवृत्ति में भवभूति के पद्यों को उद्धृत किया है। पी.वी.काणे ने अपने उत्तरराम चरित की प्रस्तावना में वामन को 8वीं शताब्दी के आस-पास माना है। राजशेखर (880-920 ई0) ने बाल रामायण में अपने को भवभूति का अवतार माना है।

कल्हण की राजतरंगणी के अनुसार भवभूति और वाक्पतिराज कान्यकुब्ज (कन्नौज) के राजा यशोवर्मा के राजकवि थे। राजतरिड्.गणी से ज्ञात होता है कि कश्मीर के राजा ललितादित्य ने यशोवर्मा को पराजित किया था। डॉ0 स्टोन ने इस घटना को 736 ई0 के आस-पास निर्धारित किया है। यशो वर्मा के आश्रित वाक्पतिराज और भवभूति भी इसी समय होने चाहिए। वाक्पतिराज ने एक 'गउडवहो' नामक प्राकृतगाथा काव्य लिखा है, जिसमें उन्होंने भवभूति की बड़ी प्रशंसा की है। वाक्पतिराज के इस काव्य का समय इसमें वर्णित एक सूर्य ग्रहण की गणना के अधार पर डॉ0 जैकोवी ने 733 ई0 निर्धारित किया है। निःसन्देह भवभूति इस समय से पूर्व ही रहें होंगे। इस प्रकार भवभूति के समय की पूर्व सीमा 606 ई0 और परसीमा 733 ई0 निर्धारित होती है।

## 1.3.3 पाण्डित्यः-

'वाग्वैविभूति' के अनन्य आराधक भवभूति अनेक शास्त्रों के मर्मज्ञ थे। इनकी कृतियों में इनके अगाध पाण्डित्य का परिचय प्राप्त होता है। इनके पूर्वज अध्यवसायी एवं धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। भवभूति की ज्ञान गरिमा का आधार उनका पैतृक संस्कार था। उनके वैदिक एवं दार्शनिक ज्ञान का प्रवाह मालतीमाधव के प्रथम अंक में ही होने लगता हैं, यद्यपि वे इसके निरर्थक पाण्डित्य-प्रदर्शन के पक्ष में नहीं थे। वाणी उनकी जिह्वा पर वशवर्तिनी बनकर रहती थी। उत्तरराम चरित के भरतवाक्य में भी उनको 'शब्दब्रह्मविद्' कहा गया है। शास्त्र सिद्ध होने के साथ ही रससिद्ध कवि बनकर भवभूति ने नाट्य शास्त्र की परम्परा के विपरीत संस्कृत काव्यजगत् में एक नया आयाम स्थापित किया है। करुण को ही अंगीरस स्वीकार किया है एवं अन्य रसों को इनका विवर्तमात्र कहा है। उत्तर रामचरित में प्रयुक्त विवर्त वेदान्त के विवर्तवाद का संकेत देता है।

मालतीमाधव के पंचम अंक में योग और दर्शन दोनों का सामंजस्य प्राप्त होता है। मालती माधव के ही नवम अंक में योग दर्शन के व्यावहारिक ज्ञान का उद्गार प्रकट होता है। भवभूति सांख्य दर्शन के अच्छे ज्ञाता थे। उत्तर रामचरित के पंचम अंक में चन्द्रकेतु का यह वचन- **'अपरेऽपि प्राचीनमान सत्व प्रकाशाः स्वयं सर्वं मन्त्रदृशः पश्यन्ति'** सांख्य के सत्त्वगुण का परिचायक है। न्यायदर्शन के शब्द निग्रहस्थान' का प्रभाव भी सौधातकि और दाण्डायन के वार्तालाप में देखने को मिलता है।

भवभूति वैदिक साहित्य में पारंगत थे। उनकी कृतियों में वैदिक ज्ञान का उल्लेख अनेक स्थलों पर प्राप्त होता है। उत्तर रामचरित के द्वितीय अंक में बैराज लोकों का वर्णन ऋग्वेद के मन्त्र के समान ही किया गया है। इसी प्रकार चौथे अंक में ऋग्वेद के मन्त्र का ही अनुसरण है । महावीर चरित के प्रथम एवं द्वितीय अंक में इनकी अथर्ववेद की विद्वता प्रकट होती है। उनकी रचना में वैदिक शैली का प्रभाव परिलक्षित होता है जैसे-'**अरुन्धती-अक्षरं ते ज्योतिः प्रकाश्यताम्। सत्वां पुनातु देवः परो रजसां यः एष तपति।**'उनके नाटकों में औपनिषदिक ज्ञान का प्रभाव एवं मन्त्रों का सप्रसंग प्रयोग प्राप्त होता है। उत्तरामचरित में जनक के कथन '**अन्धतामिस्रा ह्यसूर्या नाम ते लोकाः प्रेत्य तेभ्यः प्रतिविधीयन्ते य आत्मघातिन' इत्येव मृषयो मन्यन्ते।**' में ईशावास्योपनिषद् के मन्त्र का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पडता है। महावीर चरित के प्रथम श्लोक में ही उपनिषदों में वर्णित गूढ तत्वों का सन्निवेश है। उत्तररामचरित के चतुर्थ अंक में अरुन्धती कथनबृहदारण्यकोपनिषद् का स्मरण कराता है। धर्मशास्त्र और राजनीति में निपुणता उनकी रचनाओं में यथासन्दर्भ देखने को मिलती है। उनको वर्णाश्रम व्यवस्था के ज्ञान के साथ ही अतिथि सेवा अनुष्ठान नियम आदि का भी समुचित ज्ञान था । राजनीति में कुशलता का परिचय उत्तररामचरित के पांचवे अंक में देखने को मिलता है; जब दोनों कुमार एक दूसरे को लक्ष्य करके कहते हैं-''**वीराणां समयो हि दारुणरसः स्नेहक्रमं बाधते।**'' महाकवि को कामशास्त्र का अच्छा ज्ञान था । मालती माधव में अनेक स्थलों पर कामशास्त्र का प्रभाव दिखाई देता है। सप्तम अंक में बुद्धरक्षिता का कथन '**नववधू विरुद्धरभसोपक्रमस्खलन**' कामसूत्र के नियमों का परिचायक है। उनकी कृतियों में अनेक सूक्तियां उनके नीतिपरक एवं मनोवैज्ञानिक वैशिष्ट्य को प्रमाणित करती है। साथ ही, उन्होंने अपनी कृतियों की प्रस्तावनाओं में अपने को 'पदवाक्यप्रमाणज्ञ' ठीक ही कहा है अर्थात् वे व्याकरण (पद) मीमांसा (वाक्य) और न्याय (प्रमाण) के विद्वान् थे । इस प्रकार भवभूति विविध शास्त्रों एवं विद्याओं में पारंगत थे ।

## अभ्यास प्रश्न 1-

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क. भवभूति के वंश का नाम है ?
ख. भवभूति के जन्म का परिवार है ?
ग. भवभूति के पूर्वज किस शाखा के आहिताग्नि है ?
घ. वे किस देश के निवासी थे ?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क. भवभूति ने अपने पांचवे पूर्वज का क्या नाम निर्देश किया है ?
ख. भवभूति ने स्वयं को किसका पुत्र लिखा है ?

ग. भवभूति के पिता ने इनका क्या नाम रखा था ?

घ. भवभूति की प्रसिद्धि का कारण किसकी वन्दना में लिखा श्लोक था ?

3- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

क. भवभूति संस्कृत साहित्य जगत् की ....................... विभूति हैं।

ख. मालती माधव में ............... की शैली का प्रभाव प्रतीत होता है।

ग. पी.बी.काणे ने बामन को .................... के आस-पास माना है।

घ. भवभूति के समय की परसीमा ................... निर्धारित होती है।

4- सत्य/असत्य बताइए:

क. भवभूति बाणभट्ट के परवर्ती नाटककार है।

ख. भवभूति के पिता का नाम नीलकण्ठ था।

ग. भवभूति हर्षवर्धन के दरबारी कवि थे।

घ. वाक्पतिराज राजतरंगिणी के लेखक हैं।

5- सही विकल्प छांटकर लिखिए:

1; ‘वाग्वैविभूति के अनन्य आराधक महाकवि हैं।

क. भवभूति

ख. बाणभट्ट

ग. वाक्पतिराज

घ. कालिदास

## 1.4 भवभूति की कृतियों का सामान्य परिचय:-

भवभूति की प्रसिद्धि उनकी तीन रचनाओं के कारण ही रही है। उनकी उपलब्ध तीन रचनाओं में ‘‘महावीरचरित’’ और उत्तररामचरित’’ सात-सात अंकों के नाटक हैं और ‘‘मालती माधव’’ दस अंकों का एक प्रकरण। इन रचनाओं के कालक्रम के विषय में विद्वानों में मतभेद है। उत्तररामचरित को प्रायः सभी आलोचक कवि की अन्तिम कृति मानते हैं; किन्तु महावीर चरित और मालती माधव के रचनाक्रम के विषय में पर्याप्त मतभेद है। पण्डित टोडरमल, डॉ0 भण्डारकर, चन्द्रशेखर पाण्डेय आदि महावीर चरित को कवि की प्रथम कृति मानते हैं। कुछ विद्वानों का विचार है कि भवभूति ने अन्य अनेक रचनाएँ की होंगी, जिनका उचित सम्मान नहीं हुआ, तब उन्होंने मालती माधव प्रकरण की रचना की, जिसमें अपने आलोचकों के प्रति उनकी खीज स्पष्ट व्यक्त हुई है; किन्तु उसका भी अधिक

सम्मान नहीं हुआ तब वे महावीर चरित की रचना में प्रवृत्त हुए। इसके बाद भी जब उन्हें यथेष्ट सम्मान नहीं मिला; तब वे उत्तररामचरित की ओर उन्मुख हुए और प्रारम्भिक आलोचना के बाद अपने जीवन में ही एक उच्च कोटि के कलाकार की ख्याति प्राप्त करने में सफल हुए। उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

## 1.4.1 मालतीमाधव:-

भवभूति की प्रथम नाट्यकृति मालती माधव है। यह 10 अंको का प्रकरण है। इसमें मालती और माधव के प्रेम की काल्पनिक कथा चित्रित की गई है। भूरिवसु और देवरात क्रमशः पावती और विदर्भ के राजमन्त्री थे। उन्होंने यह प्रण किया था कि वे अपने पुत्र पुत्रियों का परस्पर विवाह करेंगे। समय पर देवरात के पुत्र और भूरिवसु के पुत्री उत्पन्न हुई। भूरिवसु देवरात के पुत्र माधव के साथ अपनी प्रतिज्ञानुसार मालती का विवाह करना चाहते हैं, परन्तु राजा का साला और मित्र (नर्मसुहृत्) मालती से अपना विवाह करना चाहता है। राजा का समर्थन भी उसे प्राप्त है। माधव का एक साथी मकरन्द है और नन्दन की बहिन मदयन्तिका मालती की सहेली है। मालती और माधव एक शिव मन्दिर में मिलते हैं; वहीं मदयन्तिका को मकरन्द एक सिंह से बचाता है। तभी वे एक दूसरे पर अनुरक्त हो जाते हैं। इधर राजा मालती और नन्दन का विवाह कराने के लिए तैयार है। माधव अपनी प्रेम सिद्धि के लिए श्मशान में तन्त्रसिद्धि कर रहा है कि उसे एक स्त्री की चीख सुनाई पड़ती है। वहाँ जाने पर उसे पता चलता है कि अघोरघण्ट और उसकी शिष्या कपालकुण्डला मालती को चामुण्डा की बलि चढाने का उपक्रम कर रहे हैं। माधव अघोरघण्ट को मारकर मालती को बचा लेता है। राजा के सैनिक ढूंढते हुए श्मशान पहुंचते है और मालती को ले आते हैं। मालती और नन्दन के विवाह की तैयारी की जाती है, परन्तु कामन्दकी (भूरिवसु की शुभ चिन्तिका तापसी) की चतुरता से मकरन्द का विवाह नन्दन से हो जाता है और कामन्दकी शिव मन्दिर में ले जाकर मालती माधव का गन्धर्व विवाह करा देती है। इधर प्रथम मिलन पर मकरन्द नन्दन को पीट देता है। नन्दन वहाँ से चला जाता है। मदयन्तिका अपनी भाभी को समझाने जाती है, पर उसे अपना प्रेमी जानकर उसके साथ भाग जाती है, परन्तु सैनिकों द्वारा मकरन्द पकड़ लिया जाता है। यह सुनकर माधव मालती को छोड़कर अपने मित्र की सहायता करने के लिए चल पड़ता है। इसी बीच अपने गुरु का बदला लेने के लिए कपालकुण्डला मालती को चुराकर श्रीपर्वत पर ले जाती है। उधर सैनिकों और माधव-मकरन्द का भयंकर युद्ध होता है। राजा उनकी वीरता से प्रसन्न होकर उन्हें छोड देता है। माधव मकरन्द के साथ विक्षिप्तावस्था में विन्ध्य पर्वत पर मालती की खोज में घूम रहा है। वहीं कामन्दकी की शिष्या सौदामिनी बताती है कि मालती इसकी कुटिया में सुरक्षित है। इस समाचार को मकरन्द, भूरिवसु, मदयन्तिका आदि को देता है। बाद में मालती माधव के मिलन के साथ ही मकरन्द मदयन्तिका का विवाह सम्पन्न हो जाता है। वस्तुयोजना की दृष्टि से मालती माधव की कथा बहुत विशृंखलित है। लम्बे-लम्बे समास और संवाद उसकी नाटकीयता में व्याघात उपस्थित करते है। यह प्रकरण महाकवि भास के 'अविमारक' से प्रभावित प्रतीत होता है।

## 1.4.2 महावीरचरित:-

यह सात अंकों का नाटक है। इसमें श्री रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का वर्णन है। मालती माधव की अपेक्षा यह नाटक अधिक संगठित है। कवि ने इसमें अनेक कल्पनाएँ की हैं। आरम्भ में ही रावण को सीता विवाह का अभिलाषी चित्रित करके कवि ने नाटक में संघर्ष की अवतारणा कर दी है। रामचन्द्र जी धनुष तोड़कर सीता जी से विवाह करते है। रावण अत्यन्क्रुद्ध होता है, उसका मन्त्री माल्यवान् अपनी कूटनीति का प्रयोग करता है। पहले तो वह परशुराम को राम के विरुद्ध भड़काकर भेजता है पर जब यह युक्ति असफल हो जाती है तब वह सूर्पणखा को मन्थरा वेश में भेजकर कैकयी से राम को वन भेजने का षडयन्त्र करता है। वन में निवास करते समय माल्यवान् ही सीता हरण कराता है और बाली को भड़काता है। बाली राम से युद्ध करने आता है और मारा जाता है। अन्त में राम सुग्रीव की सहायता से लंका पर चढ़ाई करते हैं और रावण वध के अनन्तर पुष्पक विमान से अयोध्या लौट आते हैं।

महावीरचरित, मालतीमाधव से अधिक गठा हुआ होने पर भी वर्णनों की अधिकता, सटीक चरित्र-चित्रण के अभाव एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की न्यूनता के कारण प्रथम श्रेणी का नाटक नहीं कहा जा सकता है।

## 1.4.3 उत्तररामचरित:-

यह भवभूति का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। इसमें कवि ने अपनी कल्पना का प्रयोग करके अद्भुत सृष्टि की है। सात अंकों में निबद्ध इस नाटक में रामचन्द्र जी के उत्तररामचरित का वर्णन है। इसे महावीर चरित का उत्तरभाग ही समझा जा सकता है। प्रथम अंक में राम को दुर्मुख नामक दूत से सीतापवाद विषयक सूचना मिलती है और वे प्रजारंजन के लिए उनका त्याग कर देते हैं। इसकी भूमिका बड़े ही कौशल से संयोजित की गई है। चित्रदर्शन के अवसर पर स्वयं सीता जी गंगा जी का दर्शन करने की इच्छा व्यक्त करती हैं और गंगादर्शन के लिए उनका जाना अनजाने में ही राम से बिछुड़ जाना होता है। दूसरे अंक का प्रारम्भ 12 वर्ष के बाद होता हैं आत्रेयी नामक तापसी तथा वासन्ती नामक वनदेवी के सम्भाषण से ज्ञात होता है कि राम ने अश्वमेघ यज्ञ प्रारम्भ कर दिया है और महर्षि वाल्मीकि किसी देवता के द्वारा सौंपे गये दो प्रखर बुद्धि बालकों का पालन कर रहे हैं। राम दण्डकारण्य में प्रवेश कर शुद्रमुनि शम्बूक का वध करते हैं। तृतीय अंक में तमसा और मुरला दो नदियों के वार्तालाप से ज्ञात होता है कि परित्यक्त होने के अनन्तर सीता जी प्राण-विसर्जन करने के लिए गंगा जी में कूद पडीं और वहीं उन्होंने लव-कुश को जन्म दिया। गंगा जी ने उनके पुत्रों की रक्षा करके वाल्मीकि जी को समर्पित कर दिया है। आज उनकी बारहवीं वर्षगांठ है, इसलिए भगवती भागीरथी ने सीताजी को आज्ञा दी है कि वे अपने कुल के उपास्यदेव भगवान् सूर्य की उपासना करें। उन्हें भागीरथी का वरदान है कि उन्हें पृथ्वी पर देवता भी नहीं देख सकते, पुरुषों की तो बात ही क्या है? गंगा जी को यह बात ज्ञात है कि

अगस्त्याश्रम से लौटते समय रामचन्द्र जी पंचवटी के दर्शन अवश्य करेंगे, कहीं ऐसा न हो के पूर्वानुभूत दृश्य का स्मरण कर वे विक्षिप्तचित्त हो जायें। इसलिए उन्होंने सीता जी को राम का दर्शन करने की योजना बनाई है और उनकी देखरेख के लिए उन्होंने (तमसा) को उनके साथ भेजा है। इसके अनन्तर भगवान् रामचन्द्र जी का प्रवेश होता है। वे पंचवटी प्रवेश में वनदेवी वासन्ती के साथ पूर्वानुभूत दृश्यों को देखकर सीता की स्मृति से अत्यन्त व्याकुल होते हैं। सीता अदृश्य रूप में उन्हें स्पर्श करके प्रबुद्ध करती है। छाया नामक तृतीय अंक में सीता के हृदय की शुद्धि हो जाती है। चतुर्थ अंक में वाल्मीकि आश्रम में जनक, कौशल्या, वसिष्ठ आदि का आगमन होता है। कौशल्या और जनक का मिलन होता है। वहीं एक क्षत्रिय बालक (लव) को ये देखते हैं। अन्य ब्रह्मचारियों द्वारा रामचन्द्रजी के यज्ञाश्व की सूचना सुनकर वह भाग जाता है। पांचवे अंक में यज्ञाश्व के रक्षक चन्द्रकेतु से लव का वाद-विवाद होता है और वे युद्ध करने के लिए तैयार हो जाते हैं, यद्यपि उनमें एक दूसरे के प्रति प्रेम उमड़ता है। छठे अंक में एक विद्याधर युगल के द्वारा दोनों के युद्ध का वर्णन प्राप्त होता है। इसी बीच रामचन्द्र जी के आ जाने से युद्ध रुक जाता है। कुश भी सूचना पाकर आ जाता है। राम के हृदय में उनके प्रति अत्यन्त प्रेम उमड़ पडता है। परन्तु उन्हें यह ज्ञात नहीं हो पाता कि ये उन्हीं की सन्तान है। सम्मेलन नामक सातवें अंक में गर्भांक नाटक का प्रयोग होता है। वहीं वाल्मीकि की योजना से सीता-राम का मिलन।

**अभ्यास प्रश्न 2**

1- एक शब्द में उत्तर दीजिएः

क. महावीरचरित नाटक में कुल कितने अंक है ?
ख. भवभूति के प्रकरण ग्रन्थ का नाम क्या है ?
ग. उत्तररामचरित में अंकों की संख्या कितनी है ?
घ. मालती माधव में कुल कितने अंक हैं ?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिएः

क. पं0 टोडरमल आदि किस नाटक को भवभूति की प्रथम कृति मानते हैं।
ख. प्रायः सभी आलोचक किस नाटक को भवभूति की अन्तिम कृति मानते हैं।
ग. भूरिवसु और देवरात क्रमशः किन राज्यों के राजमंत्री थे ?
घ. नन्दन की वहिन मदयन्तिका किसकी सहेली है?

3- निर्देशानुसार उत्तर दीजिएः

क. महावीर चरित में कहाँ तक की घटनाओं का वर्णन हैं?
ख. पुष्पक विमान में विशेषण पद बताइए।

ग. महावीर चरित में रावण के मंत्री का नाम क्या है?
घ. किस अंक में सीता के हृदय की शुद्धि होती है?

4- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क. वन में निवास करते समय ................ सीता का हरण कराता है।
ख. दुर्मुख नामक दूत से ...................... विषयक सूचना मिलती है।
ग. राम दण्डकारण्य में प्रवेश कर ............ शम्बूक का वध करते हैं।
घ. वाल्मीकि आश्रम में कौशल्या और ............ का मिलन होता है।

5- सत्य/असत्य बताइएः

क. राजा मालती और माधव का विवाह कराने को तैयार हैं।
ख. माधव अघोरघण्ट का वध करता है।
ग. कपालकुण्डला मालती को चुराकर विन्ध्य पर्वत पर ले जाती है।
घ. कामन्दकी मालती-माधव का गन्धर्व विवाह कराती है।

6- सही विकल्प छांटकर लिखिएः

उत्तररामचरित के अन्तिम अंक का नाम है-

a. चित्रदर्शन
b. छाया
c. गर्भांक
d. सम्मेलन

## 1.5 सारांशः-

भवभूति संस्कृत साहित्य के देदीप्यमान रत्न हैं महत्व की दृष्टि से कालिदास के अनन्तर इन्हें स्थान दिया जाता हैं। उनकी रचनाओं ने संस्कृत साहित्य में एक नवीन आभा प्रदान की है। वे विदर्भ (बरार) के पद्मपुर नगर के निवासी थे। उन्होंने उदुम्बरवंशी ब्राह्मणों के परिवार में जन्म लिया था। ये ब्राह्मण बड़े ही आदरणीय, धर्मनिष्ठ, सोमरस का पान करने वाले और वेद के ज्ञाता थे। इनके बाबा का नाम भट्टगोपाल, पिता का नाम नीलकण्ठ और माता का नाम जतुकर्णी था। इनके गुरु का नाम ज्ञाननिधि था। वे वास्तव में ज्ञान के निधि ही थे। भवभूति को विद्वपैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुई थी। समस्त शास्त्रों में उनकी अप्रतिहत गति थी। वाणी अनुचरी की भांति उनका अनुसरण किया करती थी। भवभूति की प्रसिद्धि उनकी तीन रचनाओं के कारण ही रही है। इनमें मालती माधव दस अंकों का प्रकरण है।

महावीर चरित और उत्तर रामचरित सात सात अंकों के नाटक हैं। इसके अतिरिक्त उनके कुछ श्लोक यत्र तत्र प्राप्त होते हैं। ये श्लोक उनकी दूसरी कृतियों की कल्पना के लिए बाध्य करते हैं; जैसे- सदुक्ति कर्णामृत में उद्धृत पद्य एवं शार्ङ्.धर पद्धति के कुछ पद्य भवभूति की लुप्त रचना के संकेत देते हैं। फिर भी उनकी तीन रचनाएँ ही उपलब्ध हैं।

## 1.6 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| तटाक | - | तालाब |
| निर्बाध | - | बाधारहित |
| उदुम्बर | - | एक ब्राह्मवंश |
| आहिताग्नि | - | ब्राह्मण, जो यज्ञ की पावन अग्नि को अभिमन्त्रित करते हैं। |
| श्रीकण्ठ | - | भवभूति कवि का विशेषण |
| अध्यवसायी | - | दृढ़संकल्प वाला |
| प्रवर सेन | - | सेतुबन्ध महाकाव्य के रचयिता |
| धर्मनिष्ठ | - | धार्मिक |
| वाग्वैविभूति | - | महाकवि की आराध्य शक्ति |
| शब्दब्रह्मविद् | - | वेद का विद्वान् |
| अरुन्धती | - | वसिष्ठ की पत्नी |
| औपनिषदिक | - | उपनिषदों पर आधारित |
| असूर्या | - | सूर्यरहित, प्रकाशहीन |
| प्रखर बुद्धि | - | मेधावी |
| कूटनीति | - | धोखे में डालने वाला मार्ग |
| अनुष्ठान | - | धार्मिक कार्यनिष्पादन |
| दारुण | - | कठोर |
| पद | - | व्याकरण शास्त्र |
| वाक्य | - | तर्कशास्त्र |
| प्रमाण | - | न्यायशास्त्र |
| श्मशान | - | शवस्थान |
| तन्त्रसिद्धि | - | अतिमानव शक्ति प्राप्त करने के लिए मन्त्र-यन्त्र की साधना |
| सटीक | - | समुचित, टीका सहित |

यज्ञाश्व - यज्ञ का घोड़ा

## 1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

**अभ्यास प्रश्न 1**

1-

क. कश्यप

ख. उदुम्बर

ग. तैत्तिरीय

घ. विदर्भ

2-

क. भवभूति ने अपने पांचवे पूर्वज का महाकवि नाम निर्देश किया है।

ख. भवभूति ने स्वयं को जतुकर्णीपुत्र लिखा है।

ग. भवभूति के पिता ने इनका नाम श्रीकण्ठ रखा था।

घ. भवभूति नाम की प्रसिद्धि का कारण पार्वती की वन्दना में लिखा श्लोक था।

3- क विलक्षण

ख बाणभट्ट

ग 8वीं शताब्दी

घ 733 ई0

4- क . सत्य

ख सत्य

ग असत्य

घ असत्य

5. भवभूति

**अभ्यास प्रश्न 2**

1. क. सात

ख. मालती माधव

ग. सात

घ. दस

2-

क. पं0 टोडरमल आदि महावीरचरित को भवभूति की प्रथम कृति मानते है।

ख. प्रायः सभी आलोचक उत्तररामचरित को भवभूति की अन्तिम कृति मानते है।

ग. भूरिवसु और देवरात क्रमशः पावती और विदर्भ के राजमन्त्री थे।

घ. नन्दन की वहिन मदयन्तिका मालती की सहेली है।

3- क. महावीर चरित में श्रीरामचन्द्र के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का वर्णन है।

ख. विशेषण पद पुष्पक है।

ग. महावीर चरित में रावण के मन्त्री का नाम माल्यवान् है।

घ. छाया नामक तृतीय अंक में सीता के हृदय की शुद्धि होती है।

4- क. माल्यवान

ख. सीतापवाद

ग. शूद्रमुनि

घ. जनक

4- क. असत्य

ख. सत्य

ग. असत्य

घ. सत्य

6- सम्मेलन

## 1.8 सन्दर्भ ग्रन्थः-

1- भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या- डॉ0 कृष्णकान्त शुक्ल; (1986-87) साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

2- भवभूति, उत्तररामचरितम्; व्याख्या- आचार्य प्रभुदत्त स्वामी (1988) ज्ञान प्रकाशन, मेरठ-2

## 1.9 सहायक पाठ्य सामग्री:-

1- डा. दयाशंकर तिवारी, भवभूति के नाटकों की ध्वनि सिद्धान्त परक समीक्षा, 2009, विद्यानिधि प्रकाशन, खजूरी खास, दिल्ली-94

2- भवभूति, मालतीमाधवम्, व्याख्या-डॉ0 गंगासागर राय, (2002) चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी-1

## 1.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1- भवभूति के जीवनवृत्त, समय और पाण्डित्य को स्पष्ट कीजिए।

2- मालतीमाधव के कथानक का संक्षेप में उल्लेख कीजिए।

3- महावीरचरित की कथावस्तु का विवेचन कीजिए।

4- उत्तररामचरित की कथावस्तु का विश्लेषण कीजिए।

# इकाई 2: उत्तररामचरितम् का नाट्यशास्त्रीय मूल्यांकन

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2. 3 उत्तररामचरित की कथावस्तु और नाट्य
2.3.1 कथावस्तु का स्रोत और उसमें परिवर्तन
2.3.2 वस्तु विन्यास
2.4 उत्तररामचरित की नाटकीय विशेषताएं
2.4.1 नाटकीय संवाद
2.4.2 चरित्र चित्रण
2.4.3 प्रकृतिचित्रण
2.4.4 भाषा शैली
2.4.5 रसयोजना
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 सहायक पाठ्यसामग्री
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 2.1 प्रस्तावना:-

भारतीय नाट्य एवं नाट्यशास्त्र के अध्ययन से सम्बन्धित दूसरी इकाई है। पूर्व इकाई में आप भवभूति एवं उनकी कृतियों से सामान्य परिचय प्राप्त किये। इसके अन्तर्गत आप उत्तररामचरित की नाटकीय विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। उत्तररामचरित का कथानक वाल्मीकि रामायण से लिया गया है। रामायण की मूलकथा को अधिकाधिक नाटकीय बनाने के लिए भवभूति ने उसमें कई सुन्दर कल्पनाएं की है जिन्हें कुछ विद्वानों ने मूलकथा में परिवर्तन की संज्ञा दी है, वास्तव में भवभूति ने राम और सीता के पुनर्मिलन के अतिरिक्त रामायण की मूल में कोई ऐसा परिवर्तन नहीं किया है जिससे कथा प्रवाह अपने निश्चित स्थान को छोड़कर इधर-उधर बहता दिखाई देता हो। भवभूति ने मुख्य कथावस्तु को नाटकीय रूप प्रदान करने के लिए जो उद्भावनाएं की है वे नदी की धारा पर बनाये गये नवीन घाटों के समान ही हैं। उन्हें कथा की मूल धारा में परिवर्तन नहीं कहा जा सकता है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तररामचरित के नाट्य को समझा सकेंगे तथा भारतीय नाट्य विद्या का विश्लेषण कर सकेंगे।

## 2.2 उद्देश्य:-

**इस इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तररामचरित की-**

- कथावस्तु को समझ सकेंगे।
- कथावस्तु के स्रोत और कविकृत परिवर्तनों को जान सकेंगे।
- वस्तुविन्यास से अवगत हो सकेंगे।
- नाटकीय संवाद समझ सकेंगे।
- पात्रों के चरित्र से परिचित हो सकेंगे।
- प्रकृति-चित्रण का वैशिष्ट्य समझ सकेंगे।
- भाषा-शैली को समझ सकेंगे।
- रस योजना को जान सकेंगे।
- पताका स्थानक को पहचान पायेंगे।
- विष्कम्भक को परिभाषित कर सकेंगे।
- नाटकीय विशेषताएँ आत्मसात् कर सकेंगे।

## 2.3 उत्तररामचरित की कथावस्तु और नाट्य

## 2.3.1 कथावस्तु का स्रोत और उसमें परिवर्तन:-

उत्तररामचरित की कथावस्तु रामायण पर आधारित है, किन्तु नाटकीय स्वरूप प्रदान करने के लिए भवभूति ने उसमें अनेक परिवर्तन किये है। निःसन्देह उनकी प्रतिभा के बल से उत्तररामचरित का कथानक एक नवीन रूप में अवतीर्ण हुआ हैं 'पद्मपुराण' में श्री रामकथा का यह प्रसंग उत्तररामचरित की घटनाओं से मिलता है। इसी आधार पर वेलवल्कर प्रभृति विद्वानों का विचार है कि भवभूति के उत्तररामचरित का श्रोत वहीं पुराण था, किन्तु पुराणों की निश्चित तिथि निर्धारित न होने तथा उनमें समय-समय पर अनेक प्रक्षेप होने के कारण यह विचार हृदयंगम प्रतीत नहीं होता। बहुत सम्भव है उत्तररामचरित की रचना के अनन्तर किसी ने उसके आधार पर वह प्रसंग पद्मपुराण में जोड़ दिया हो। भवभूति ने रामायण की कथा में निम्नलिखित परिवर्तन किये हैं-

1- रामायण की कथा दुःखान्त है। सीता पृथ्वी में समा जाती हैं और राम हाथ मलते रह जाते हैं, किन्तु संस्कृत नाट्यशास्त्र के नियमों का ध्यान रखते हुए भवभूति ने उसे सुखान्त चित्रित किया है। राम-सीता, लव-कुश आदि के सुखद मिलन के साथ नाटक समाप्त होता है।

2- प्रथम अंक में चित्रवीथी की कल्पना कवि के उर्वर मस्तिष्क की उपज है। मूलकथा में उसका उल्लेख नहीं है। इस प्रयोग से राम के उत्तर चरित के साथ पूर्वचरित भी संयोजित कर दिया गया है।

3- शम्बूक की कथा यद्यपि रामायण में भी मिलती है, परन्तु उत्तररामचरित के द्वितीय अंक में वह एक नये रूप में प्रस्तुत की गई है, जिससे राम पंचवटी में पहुँच सके।

4- तृतीय अंक में छाया सीता की कल्पना कवि की मौलिक सूझ है। छाया सीता की अवतारणा नाटकीय दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है। पंचवटी में राम का वासन्ती से मिलना भी कवि की अपनी उद्धावना है। इस पात्र की सृष्टि करके कवि ने राम के हृदय का सच्चा चित्र दर्शकों के सामने रखने में अपूर्व सफलता पाई है।

5- चतुर्थ अंक में वसिष्ठ, अरुन्धती, जनक आदि को वाल्मीकि आश्रम में एकत्रित करना भी कवि का ही कौशल है।

6- रामायण की कथा में यज्ञाश्व चुराने के प्रसंग में राम और लव-कुश का युद्ध वर्णित है और इसमें राम की पराजय भी दिखलाई गई है, परन्तु भवभूति ने बड़ी कुशलता से अपने नायक की मान रक्षा की है। उन्हें ऐसी असमंजसकारी परिस्थिति से बचाया है। युद्ध लव और चन्द्रकेतु में ही दिखाया गया है, जो कि समन्वय आदि के कारण औचित्य पूर्ण है। युद्धवर्णन से राम के मंच पर आने में सहायता मिलती है।

7- सातवें अंक में 'गर्भांक' कवि का नूतन प्रयोग है। उत्तर राम चरित का प्रारम्भ भी नाटक से है और अन्त भी।

## 2.3.2 वस्तु विन्यास:-

उत्तररामचरित में भवभूति का वस्तु विन्यास बड़ा ही कलापूर्ण है। कथावस्तु को अंकों में इस प्रकार विभाजित किया गया है कि आगामी घटनाचक्र पर उसका प्रभाव पड़ता चला जाता है।'चित्रदर्शन' नामक प्रथम अंक में ही हम नाटक के सुखान्त होने की सूचना पाते है- **''सर्वथा ऋषयो देवताश्चश्रेयो विधास्यन्ति''**। सीता के पुत्रों को जृम्भकास्त्रों की प्राप्ति, गंगा और पृथ्वी के द्वारा सीता की आगामी सहायता- सबका बीज इसी अंक में मिल जाता है। पताका स्थानकों के सुन्दर प्रयोग कथा को और भी अधिक प्रभावशाली बना देते हैं। राम के **'किमस्या न प्रेयो यदि परम सह्यस्यु विरहः'** कहने पर प्रतिहारी का यह कहना 'देव! उपस्थितः और राम का घबराकर यह पूछना- अयिकः? और प्रतिहारी का यह उत्तर देना - **''आसन्न परिचारको देवस्य दुर्मुखः''** पताकास्थानक के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रकार के प्रयोग अनेक स्थलों पर नाटक के सौन्दर्य को बढ़ाते हैं।

दूसरे अंक की धटनाएँ बारह वर्ष के अनन्तर होती हैं। प्रजा पालन के लिए शम्बूक का वध करने के लिए राम दण्डकारण्य में आते हैं। कवि ने इन बारह वर्षो के बीतने का संकेत प्राकृतिक परिवर्तनों के आधार पर बडी कुशलता से किया है। नदियों कि धाराएँ बदल गई हैं, सीता के पालतू पशु पक्षी बड़े हो गये है। परन्तु राम के हृदय मे सीता काप्रेम ज्यों का त्यों है। वह प्रेम दण्डकारण्य में आकर एकदम प्रदीप्त हो उठता है। रामचन्द्र जी के चरित्र का विकास इस अंक में बडे ही मनोवैज्ञानिक ढंग से दिखाया गया है।

सीता के हृदय की शुद्धि के लिए तीसरा अंक अवतरित किया गया है। इस अंक का नाम छाया रखा गया है। पंचवटी के पूर्वानुभूत दृश्यों के देखकर राम का फूट-फूट कर रोना निस्सन्देह सीता के परित्याग शल्य को उखाड फेकता है और उनके हृदय में जो कुछ रोष था, दूर हो जाता है।**'अहमेवैतस्य हृदयं जानामि ममैषः'** कहकर वे अपने हृदय का परम विश्वास व्यक्त करती हैं। हिरण्य प्रतिमा का समाचार सुनकर तो उनका समस्त आक्रोश श्रद्धा और विश्वास में परिवर्तित हो जाता है। सीता का अदृश्य रूप में वर्णन कवि की मौलिक सूझ है। बहुत से आलोचकों ने इस अंक पर यह आरोप लगाया है कि इसके कारण नाटक की गतिशीलता में विघ्न उपस्थित होता है। परन्तु इस अंक में बाह्य गतिशीलता नहीं, आन्तरिक गतिशीलता है।

चतुर्थ अंक में कारुण्य की गहराई से निकलकर दर्शक कुछ विश्रान्ति का अनुभव करता है। इस अंक की घटनाआं का सम्बन्ध दूसरे अंक की धटनाओं से है, वहाँ आत्रेयी और वासन्ती के

वार्तालाप से अरुन्धती, कौसल्या और वसिष्ठ जी के वाल्मीकि आश्रम में गमन, लव-कुश, राम के अश्वमेध यज्ञ, यज्ञ के अश्व की रक्षा में संलग्न चन्द्रकेतु, वाल्मीकि के काव्यादि के सम्बन्ध मे चर्चा हुई थी। यहाँ उन तथ्यों का विस्तार दृष्टिगत होता है चतुर्थ अंक के अन्त से ही पाँचवे अंक की भूमिका प्रारम्भ हो जाती है और घटनाचक्र बडी तीव्रता से बढ़ता है।

छठे अंक की भूमिका दूसरे अंक से ही प्रारम्भ हो जाती है। शम्बूक वध करके राम विमान से अयोध्या लौटते समय वाल्मीकि आश्रम में भी जायेंगे, यह सम्भवना होती है। रगमंच पर उनके प्रवेश के लिए कवि ने समुचित भूमिका प्रस्तुत की है। लव-कुश से उनका मिलन बड़ी चातुरी से कराया गया है। नाटक के चरमावधि तक पहुँचने के लिए इस अंक की महत्ता स्वतःसिद्ध है। उपसंहार में सातवें अंक का गर्भांक बडा ही महत्वपूर्ण है। यह अंक समग्र नाटक की कथावस्तु का संक्षेप में परिचय प्रस्तुत कर देता है। तृतीय अंक का छाया चित्र सप्तम अंक में वास्तविक रूप धारण कर लेता है। अंक की महत्ता स्वतः सिद्ध है। उपसंहार में सातवें अंक का गर्भांक बडा ही महत्वपूर्ण है। यह अंक समग्र नाटक की कथावस्तु का संक्षेप में परिचय प्रस्तुत कर देता है। तृतीय अंक का छाया चित्र सप्तम अंक में वास्तविक रूप धारण कर लेता है। उत्तररामचरित में विष्कम्भकों का प्रयोग भी कुशलता से हुआ है। उनमें सभी आवश्यक घटनाओं की सूचना दे दी गई है।

नाट्यशास्त्र की दृष्टि से इसकी कथावस्तु प्रख्यात है। नायक धीरोदात्त है। नायिका स्वकीया है। इसमें प्रतिनायक या प्रतिनायिका का अभाव है। अर्थ प्रकृतियों, अवस्थाओं, सन्धियों का यथास्थान चारुता से सन्निवेश किया गया है।

## अभ्यास प्रश्न 1

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क. उत्तररामचरित्र में राम किस कोटि के नायक हैं ?

ख. उत्तररामचरित्र की घटनाएँ किस पुराण मे मिलती है ?

ग. लव कुश को प्रप्त अस्त्रों का क्या नम है ?

घ. प्रथम और द्वितीय अंक की घटनाओं के मध्य कितने वर्ष का अन्तर है ?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क. उत्तररामचरित की कथावस्तु किस पर आधारित है ?

ख. द्वितीय अंक में किसकी कथा नये रूप में चित्रित की गई है ?

ग. तृतीय अंक में किसकी कल्पना कवि की मौलिक सूझ है ?

घ. रामायण में किस प्रसंग में राम और लव कुश का युद्ध वर्णित है ?

3- रिक्त स्थानों कि पूर्ति कीजिए:

क. उत्तररामचरित ......................... बडा ही कलापूर्ण है।

ख. सातवें अंक में ..................... कवि का नूतन प्रयोग है।

ग. प्रजापालन के लिए ............राम दण्डकारण्य में आते है।

घ. दण्डकारण्य में आकर ...का प्रेम एकदम प्रदीप्त हो उठता है।

4- सत्य/असत्य बताइएः

क. सीता के हृदय की शुद्धि के लिए तीसरा अंक अवतरित किया गया है।

ख. छठे अंक की भूमिका पहले अंक से ही प्रारम्भ हो जाती है।

ग. चतुर्थ अंक के अन्त से ही पांचवे अंक की भूमिका प्रारम्भ हो जाती है।

घ. उत्तररामचरित में विष्कम्भकों का प्रयोग भी कुशलता से हुआ है।

5- सही विकल्प छांटकर लिखिएः

नाटक के सुखान्त होने की सूचना मिलती है-

क- प्रथम अंक में ख- द्वितीय अंक में

ग- तृतीय अंक में घ- चतुर्थ अंक में

## 2.4 उत्तररामचरित की नाटकीय विशेषताएं

### 2.4.1 नाटकीय संवाद:-

उत्तररामचरित में नाटकीय संवाद अधिकांशतः छोटे और सहज बोधगम्य है। कभी-कभी छोटे-छोटे वाक्य बड़े-बड़े अर्थों की अभिव्यक्ति करते हैं। सीता का‘वत्स! इयमप्यपरा का ?’ पूछना, लक्ष्मण का ‘आर्ये! दृश्यतां द्रष्टव्यमेतत्’ यह कहना, वन देवता का ‘हन्त’ तर्हि पण्डितः संसारः’ कहना उनके सारगर्भित कथोपकथनों के उदाहरण हैं। भवभूति के संवाद इस नाटक में न तो ‘मालती माधव’ की तरह दीर्घसमासयुक्त है और न ही ‘महावीरचरित’ की भाँति उनमें शब्दों का अकाण्ड ताण्डव तथा श्लथत्व ही है। उत्तररामचरित में श्लोंकों को विभक्त करके संवादोपयोगी रूप देने में भवभूति बहुत सफल हुए हैं।

### 2.4.2 चरित्र चित्रण:-

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से ‘उत्तररामचरित’ एक सफल नाटक है। राम प्रजा पालक हैं और प्रजाहित के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर सकते हैं। सीता ‘करुणस्य मूर्तिः’ अथवा शरीरिणी विरहव्यथा’ होने पर भी अपने लोकोत्तर तेज से नाटक के प्रत्येक क्षेत्र को आभासित कर रही हैं। लक्ष्मण आज्ञापालक कर्तव्य निष्ठ, गम्भीर और कुछ तेजस्वी स्वभाव के चित्रित किये गये हैं। कौशल्या विपत्ति की मारी हुई, जनक दुर्भाग्यग्रस्त होने पर भी क्षात्र धर्म से प्रदीप्त हैं। लव-कुश बाल-सुलभ चापल्य से युक्त होने पर भी वीरता से युक्त हैं, चन्द्रकेतु राजकुमार होने पर भी विनय और वीरता से युक्त हैं। तमसा, वासन्ती,

आत्रेयी, नारी गुणों के साथ ही अपनी-अपनी भूमिकाएँ चित्रित करने में पूर्णतः सफल हुई हैं। अष्टावक्र, वाल्मीकि मितभाषी ऋषियों के रूप में चित्रित किये गये हैं। सुमन्त्र स्वामिभक्त, वात्सल्यपूर्ण और नीतिज्ञ हैं। दण्डायन और सौधातकि अनध्यायप्रिय छात्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऋषि पत्नी अरुन्धती परम साध्वी के रूप में हमारे सामने आती हैं। दुर्मुख तो दुर्मुख है ही।भवभूति की प्रतिभा की सशक्त तूलिका से ये सभी चित्र बडे ही प्राणवान् चित्रित किये गये हैं। यद्यपि उनके ये चित्र बहुत भड़कीले नहीं हैं; परन्तु इनमें जो गम्भीर-प्रभावोत्पादन क्षमता है वह किसी को मन्त्र-मुग्ध किये बिना नहीं रह सकती।

## 2.4.3 प्रकृति-चित्रण:-

उत्तररामचरित में प्रकृति का बहुत ही सुन्दर चित्रण किया गया है। वहाँ के द्रुम और मृग भी सीता-राम के बन्धु-बान्धव हैं, मयूर भी सीता का स्मरण करता है। वृक्ष भी पुष्पों से राम को अर्ध्य प्रदान करते हैं और उनके रुदन पर पत्थर भी फूट-फूट कर रोने लगते हैं। प्रकृति वर्णन में भवभूति का कौशल इस बात से आंका जाना चाहिए कि उन्होंने पंचवटी में सभी पशु-पक्षी युगल रूप में चित्रित किये हैं, जबकि राम और सीता ही अकेले-अकेले हैं। राम के हृदय को रुला-रुला कर 'काव्य न्याय' दिखाने में कवि ने अपूर्व सफलता प्राप्त की है। विदूषक अभाव भी इस नाटक की अन्य विशेषता है।

## 2.4.4 भाषा शैली:-

भवभूति ने सरस्वती को अपनी अनुगामिनी कहा है, जो सर्वथा सत्य है। वास्तव में वे वाणी के ब्रह्मा है। भाषा उनकी अनुचरी है। वह उनके भावों के अनुरूप ढलकर स्वयम् आ उपस्थित होती है। शृंगार और करुण के प्रसंग में वे कोमल पदावली का प्रयोग करते हैं। वीर, भयानक, वीभत्स और रौद्र के अवसरों पर उनकी पदावली तदनुरूप कठोर प्रतीतहोने लगती है। बालकों के मुख से बालकों की, वृद्धों के मुख से वृद्धों की, ऋषियों के मुख से ऋषियों की भाषा का प्रयोग जैसा उत्तर रामचरित में मिलता है, वह अन्यत्र नहीं है। भावातिरेक के कारण कभी कभी कवित्व नाटकत्व से बढ़ जाता है और नाटकीय गतिशीलता दबी हुई सी प्रतीत होती है।

## 2.4.5 रस योजना:-

उत्तररामचरित की रस योजना के सम्बन्ध में प्रायः सभी आलोचकों ने करुण रस को ही अंगीरस के रूप में ही स्वीकार किया है। उनकी मान्यता का आधार भवभूति का अपना ही श्लोक **'एको रसः करुण एव निमित्त भेदात्......'** है। इन विद्वानों के मत में भवभूति करुण रस के ही समर्थक थे और नाट्य शास्त्र के नियमों को चुनौती देकर वीर और शृंगार के स्थान पर करुण को अंगीरस स्वीकार किया है।

यह विचार कि भवभूति एकमात्र करूण के ही समर्थक थे, उचित प्रतीत नहीं होता। यदि उन्हें केवल करुण रस ही अभीष्ट होता तो वे 'रसः करुण एव कहते, एकः विशेषण उन्होंने अपने नाटक के तृतीय अंक के लिए ही दिया है। अतः भवभूति अन्य रसों को स्वीकार न करते हों, यह बात नहीं है। उत्तररामचरित में उन्होंने 'जनितात्यद्भुतरसः' और 'वीरो रसः किमयम्' आदि रसान्तरों का स्पष्ट उल्लेख किया है। अतः भवभूति को केवल 'करुण रस' का ही समर्थक मानना सत्य का अपलाप करना है। वे करुण के पक्षपाती हो सकते हैं, किन्तु रसान्तरों के विरोधी नहीं।

भवभूति ने व्यंजना से अपने नाटक की ओर संकेत किया है-'उत्तररामचरित' सदृश मंगलकारी नाटक कठिनता से ही (देखने या पढ़ने को) मिलता है। यह नाटक सभी अवस्थाओं में सुख दुःख का अनुपम अद्वैत है। इसमें सर्वत्र आनन्द और करुण की स्रोतस्विनी प्रवाहित होती रहती है। इस नाटक को देखने अथवा सुनने अथवा पढ़ने से हृदय अपार विश्राम का लाभ करता है। कहीं भी रस की धारा विच्छिन्न नहीं होती। हृदय में सत्वोद्रेक होने से तम का आवरण नष्ट हो जाने के कारण यह प्रेम तत्वमय प्रतीत होता है।

**अभ्यास प्रश्न 2**

1- एक शब्द में उत्तर दीजिएः

क. उत्तररामचरित में किस प्रकार के संवाद सहज बोधगम्य है।
ख. चरित-चित्रण की दृष्टि से उत्तररामचरित कैसा नाटक है?
ग. सीता नाटक के किस क्षेत्र को आभासित कर रही हैं?
घ. जनक किस धर्म से प्रदीप्त हैं?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिएः

क. उत्तररामचरित में किस रस को अंगीरस स्वीकार किया है?
ख. श्रृंगार और करुण के प्रसंग में भवभूति किस पदावली का प्रयोग करते हैं?
ग. भावातिरेक के कारण कभी-कभी कवित्व किससे बढ़ जाता है?
घ. उत्तररामचरित में सर्वत्र किसकी स्रोतस्विनी प्रवाहित होती रहती है?

3- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क. लव-कुश बाल सुलभ चापल्य से युक्त होने पर भी .......... से युक्त है।
ख. अष्टावक्र, वाल्मीकि .......... ऋषियों के रूप में चित्रित किये गये हैं।
ग. ऋषि पत्नी .......... परमसाध्वी के रूप में हमारे सामने आती हैं।
घ. सुमन्त्र स्वामिभक्त .......... और नीतिज्ञ हैं।

4- सत्य/असत्य बताइएः

क. उत्तररामचरित सभी अवस्थाओं में सुख दुःख का अनुपम अद्वैत है।
ख. भवभूति को केवल करुण रस का ही समर्थक मानना सत्य का अपलाप करना है।
ग. रौद्र के अवसर पर भवभूति की पदावली तदनुरूप कठोर प्रतीत नहीं होती है।
घ. उत्तररामचरित के द्रुम और मृग भी सीता-राम के बन्धु-बान्धव नहीं है।

5- सही विकल्प छांटकर लिखिएः

वास्तव में वाणी के ब्रह्मा है।

क- भास ख- कालिदास

ग- भवभूति घ- कृष्ण मिश्र

## 2.5 सारांशः-

कथावस्तु का आधार रामायण, 2- नाटकीय स्वरूप प्रदान करने के लिए कथावस्तु में अनेकानेक परिवर्तन, 3- रामायण की दुःखान्त कथा का सुखान्त चित्रण, 4- चित्रवीथी की कल्पना द्वारा रामचन्द्र के उत्तरचरित के साथ पूर्वचरित का मेल, 5- छाया सीता तथा वासन्ती की कल्पना से राम के हृदय का सच्चा चित्र प्रस्तुत 6- वसिष्ट, अरुन्धती, जनक आदि का वाल्मीकि आश्रम में सम्मेलन, 7- लव और चन्द्रकेतु के मध्य युद्ध दिखाकर नायक के मान की रक्षा, 8- गर्भांक नाटक द्वारा कथावस्तु का संक्षेप में परिचय, 10- छोटे, सहज और बोधगम्य संवाद, 11- राष्ट्र एवं समाज के लिए आदर्श चरित्र-चित्रण, 12- बहुत ही रमणीय एवं अद्भुत प्रकृति वर्णन, 13- देश, काल, पात्र एवं भावानुरूप भाषा शैली 14- करुण रस का पूर्ण परिपाक 15- सर्वत्र विदूषक का अभाव।

## 2.6 शब्दावलीः-

| | | |
|---|---|---|
| नाटकीय | - | नाटक सम्बन्धी |
| प्रतिज्ञा | - | वादा |
| कथानक | - | छोटी कहानी |
| प0पुराण | - | अठारह पुराणों में एक पुराण |
| वेल्वल्कर | - | एक पाश्चात्य विद्वान् |
| नाट्यशास्त्र | - | नाट्य विज्ञान, नृत्य, गीत तथा अभिनय सम्बन्धी विद्या |
| चित्रवीथी | - | तस्वीर, एलबम |
| कल्पना | - | आविष्कार |

| | | |
|---|---|---|
| शम्बूक | - | एक शूद्र तपस्वी |
| पंचवटी | - | दण्डकारण्य का एक भाग |
| मानरक्षा | - | सम्मान की रक्षा |
| चन्द्रकेतु | - | लक्ष्मण का पुत्र |
| पताका स्थानक | - | प्रासंगिक कथा की सूचना जो अप्रत्याशित रूप से प्रदर्शित की जाय |
| दुर्मुख | - | राम का गुप्तचर |
| गर्भांक | - | अंक के बीच मं विष्कम्भक जैसा, उ0रा0 के सातवे अंक में कुश और लव के जन्म का दृश्य |
| हृदयशुद्धि | - | हृदय की पवित्रता |
| आक्रोश | - | निन्दा, उच्च स्वर से रोना या शब्द करना। |
| रंगमंच | - | नाट्यशाला |
| प्रख्यात | - | प्रसिद्ध |
| स्वकीया | - | अपनी |
| प्रतिनायक | - | खलनायक |
| विदूषक | - | हास्यपात्र |
| संवाद | - | वार्तालाप |
| अकाण्डताण्डव | - | क्रोध पाण्डित्यादि का अप्रासंगिक प्रदर्शन |
| श्लथत्व - | | शिथिलता |
| चापल्य | - | चंचलता |
| विष्कम्भक | - | अर्थोपक्षेपक |
| तूलिका | - | कूंची |
| युगल | - | जोड़ा |
| बलिदान - | | देवता को नैवेद्य अर्पण करना |
| अनुचरी | - | सेविका |
| अंगीरस | - | प्रधान रस |
| स्रोतस्विनी | - | नदी |

## 2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. धीरोदात्त

ख. पद्मपुराण

ग. जृम्भकास्त्र

घ. बारह

2-उत्तररामचरित की कथावस्तु रामायण पर आधारित है।

- क. द्वितीय अंक में शम्बूक की कथा नये रूप में चित्रित की गई है।
- ख. तृतीय अंक में छाया सीता की कल्पना कवि की मौलिक सूझ है।
- ग. रामायण में यज्ञाश्व चुराने के प्रसंग में राम और लव-कुश का युद्ध वर्णित है।

3-

- क. वस्तुविन्यास
- ख. गर्भांक
- ग. शम्बूक का वध करने के लिए
- घ. राम

4-

- क. सत्य
- ख. असत्य
- ग. सत्य
- घ. सत्य

5- क प्रथम अंक में

अभ्यास प्रश्न 2

1-

- क. नाटकीय
- ख. सफल
- ग. प्रत्येक
- घ. क्षात्र

2-

- क. उत्तररामचरित में करुणरस को अंगीरस स्वीकार किया है।
- ख. श्रृंगार और करुण के प्रसंग में भवभूति कोमल पदावली का प्रयोग करते है।
- ग. भावातिरेक में कवित्व नाटकत्व से बढ़ जाता है।
- घ. उत्तररामचरित में सर्वत्र आनन्द और करुणा की स्रोतस्विनी प्रवाहित होती है।

3-

- क. वीरता
- ख. मितभाषी
- ग. अरुन्धती
- घ. वात्सल्यपूर्ण

4-

क. सत्य

ख. सत्य

ग. असत्य

घ. असत्य

5- ग भवभूति

## 2.8 सन्दर्भग्रन्थ:-

1.भवभूति, उत्तररामचरितम् व्याख्या- डॉ0 कृष्णकान्त शुक्ल; (1986-87), साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

2. भवभूति, उत्तररामचरितम्; व्याख्या- आचार्य प्रभुदत्त स्वामी (1988), ज्ञान प्रकाशन मेरठ-2

## 2.9 सहायक पाठय सामग्री:-

1- डॉ0 दयाशंकर तिवारी, भवभूति के नाटकों की ध्वनि सिद्धान्त परक समीक्षा (2009) विद्यानिधि प्रकाशन, खजूरी खास, दिल्ली-94

2- भवभूति, मालती माधवम्, व्याख्या- डॉ0 गंगासागर राय (2002) चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी-1

## 2.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1- उत्तररामचरित की नाटकीय विशेषताएँ बताइए।

2- उत्तररामचरित की कथावस्तु के स्रोत एवं उसमें कवि द्वारा किये गये परिवर्तनों की विवेचना कीजिए।

3- उत्तररामचरित के वस्तु विन्यास पर एक सारगर्भित निबन्ध लिखिए।

4-सोदाहरण सिद्ध कीजिए कि उत्तररामचरित संस्कृत साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नाटक है।

# इकाई : 3 - उत्तररामचरितम्  के प्रधान एवं गौण रसों की मीमांसा

इकाई संरचना


3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 उत्तररामचरितम्  के प्रधान एवं गौण रसों की मीमांसा

3.3.1 खण्ड एक- उत्तररामचरित में प्रधान रस

3.3.2 खण्ड दो- उत्तररामचरित में गौण रस

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

## 3.1 प्रस्तावना:-

भारतीय नाट्य एवं नाट्यशास्त्र के अध्ययन से सम्बन्धित यह तीसरी इकाई है। इससे पूर्व इकाई में आप उत्तररामचरित में नाट्य का अध्ययन कर चुके है। इस इकाई में आप उत्तररामचरित के प्रधान एवं गौण रसों का अध्ययन करेंगे। भारतीय काव्यशास्त्र के इतिहास में रस सिद्धान्त सर्वाधिक प्राचीन सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठित है। इसका प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ भरतमुनि का नाट्यशास्त्र है। इसका रस विषयक मूल सूत्र **'विभाभानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'** है। उत्तरकाल में इस सूत्र की अनेक व्याख्याएँ होती रही हैं। इस सूत्र के अनुसार विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव के संयोग से रस निष्पत्ति होती है। उत्तररामचरित में रामायण के उत्तरकाण्ड की कथावस्तु को नाटकीयता प्रदान करके भवभूति ने शृंगार, करुण, वीर, अद्भुत आदि रसों का सुन्दर चित्रण किया है। इसमें प्रधान रस करुण है तथा अन्य रसों का गौण रूप में परिपाक हुआ है।

## 3.2 उद्देश्य:-

**इस इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तररामचरित के—**

- अंगीरस करुण का विश्लेषण कर सकेंगें।
- गौणरसों की मीमांसा कर सकेंगे।
- करुण तथा करुण विप्रलम्भ का अन्तर स्पष्ट कर पायेंगे।
- आदर्शदाम्पत्य प्रेम से अवगत हो सकेंगे।
- सात्तिवक प्रेम की व्याख्या कर सकेगे।
- शृंगार के संभोग पक्ष का मर्यादित चित्र प्रस्तुत कर सकेंगे।
- रौद्र तथा वीर रस में अन्तर समझ सकेंगे।
- शिष्ट तथा गम्भीर हास को जान पायेंगे।
- ट्रेजेडी का मूल स्वरूप समझ सकेंगे।
- रसाभिव्यक्ति से परिचित हो सकगे।

## 3.3 उत्तररामचरितम् के प्रधान एवं गौण रसों की मीमांसा

### 3.3.1 खण्ड एक- उत्तररामचरित में प्रधान रस:-

उत्तररामचरित में प्रधान रस 'करुण' है अथवा 'करुण-विप्रलम्भ'? इस विषय में विद्वानों में बड़ा मतभेद है। कुछ विद्वानों का मत है कि उत्तररामचरित में करुणविप्रलम्भ अंगीरस है। उनके कथन

का आशय है **'एको रसः करुण एव'**-इत्यादि (3.47) श्लोक में करुण शब्द को करुण विप्रलम्भपरक मानना चाहिए, क्योंकि करुण रस का स्थायिभाव शोक है। उसमें पुनर्मिलन की आशा नहीं रहती, किन्तु करुणविप्रलम्भ में पुनर्मिलन की आशा बनी रहती है। यहाँ नाटक में सीता को तमसा के **-'अस्तु देवता प्रसादात् पश्यन्ती प्रियं भूयाः' 'विधिस्तवानुकूलो भविष्यति'** आदि वाक्यों से राम के पुनर्मिलन में विश्वास है तथा राम को भी लव-कुश को देखने के बाद सीता मिलन की आशा बलवती होती चली गई है और तदनुसार नाटक के अन्त में राम और सीता का पुनर्मिलन होता है। राम का **'क्रव्यादिभिरंगलतिका नियतं विलुप्ता** (3.28) आदि विलाप बहुत कुछ सीता के अत्यय की संभावना पर आधारित है। उन्हें सीता-विनाश की कोई पक्की सूचना नहीं है। इन सब बातों को देखते हुए 'करुणविप्रलम्भ' इस नाटक में प्रधान रस मानना चाहिए।

दूसरी तरफ अन्य विद्वानों का मत है कि उत्तररामचरित में 'करुण' अंगी रस है। व्याख्याकार वीरराघव इसी विचार से सहमत हैं। **'एवं च रसान्तरा पेक्षया प्रकृतित्वमेव करुणस्य'** इति। घनश्याम भी नाटक में शृंगार और वीर रस के अंगित्व को प्रायिक मानते हुए 'करुण भी नाटक में अंगीरस हो सकता है, अतः उत्तररामचरित करुण रस प्रधान होते हुए भी नाटक है-ऐसा कहते हैं। यह करुण करुणविप्रलम्भ से भिन्न है। करुण विप्रलम्भ शृंगार का एक भेद है, जिसमें रति स्थायिभाव होता है, किन्तु करुण रस स्वतन्त्र रस है जिसमें शोक स्थायिभाव रहता है। उत्तररामचरित में विभाव, अनुभाव, सात्त्विक और व्यभिचारी भावों से अभिव्यक्त होकर शोक ही स्थायिभाव है, जो चर्वण दशा में करुण रस में परिणत हो जाता है। यों तो करुण रस का आरम्भ इस नाटक में प्रारम्भ से ही दिखलायी देता है, किन्तु तृतीय अंक में वह अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँचा हुआ प्रतीत होता है। वहाँ राम का करुण क्रन्दन, दीर्घोच्छवास, परिदेवन और मोहागम सीता के हृदय में ही नहीं, अपितु सामाजिकों के भी अन्तःकरण में रस के प्रति स्वाभाविक सहानुभूति उत्पन्न कर देते हैं। उक्त भाव करुण रस के अभिनय में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। उत्तररामचरित करुण रस-प्रधान है- कवि ने अपने निम्नलिखित श्लोक से इसी बात की ओर संकेत किया है-

**एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्**
**एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्**
**भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान्।**
**आवर्त बुद्बुदतरंगमयान्विकारा-**
**नम्भो यथा सलिलमेव तु तत्समग्रम्।।**

जैसा कि करुण रस के विषय में आचार्यो का मत है कि राम को सीता समागम की बिल्कुल आशा नहीं रह गयी है। वे समझते हैं कि सीता नहीं रह गयी है, उसे मरे बारह वर्ष हो गये, अब उसका नाम भी नहीं रहा। रह गयी नाटक के सुखान्त वाली बात; इस विषय में इतना ही निवेदन है कि नाटक की कथा का आधार वाल्मीकि कृत रामायण है। रामायण में सीता के निधन में कथा का अवसान होता

है। चूँकि नाट्यशास्त्र के अनुसार नाटक की कथा का अवसान सुखद होना चाहिए; अतः इस नियम के निर्वाह के लिए तथा राम जैसे कर्तव्यनिष्ठ और धर्मप्रिय व्यक्ति के लिए दुःखद अवसान उचित नहीं। इसलिए भी कवि ने कथावस्तु में परिवर्तन कर राम सीता के मिलन में कथा का अवसान किया है; जिसका सारा श्रेय गंगा और पृथ्वी जैसी देवता, वाल्मीकि जैसे महर्षि, वसिष्ठ पत्नी अरुन्धती जैसी सती शिरोमणि को है। इस विषय में माननीय डॉ0 विद्या निवास मिश्र का कथन भी ध्यान दिये जाने योग्य है- करुणरस का स्थायिभाव शोक, इष्टनाश से उत्पन्न हुआ होता है। यह इष्ट व्यक्ति, धारणा, धर्म आदि कुछ भी हो सकता है। पश्चिमी दृष्टि से ट्रेजेडी का मूल होता है- आशाभंग। उस दृष्टि से देखने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि राम के मन में यह आशा थी कि सीता का परित्याग करके हम लोक को प्रसन्न कर लेंगे और हमारे इस त्याग का महत्व समझा जायेगा। किन्तु होता यह है कि लोग भूल जाते हैं कि सीता का त्याग भी हुआ है और उन्हें यह आभास ही नहीं होता कि राजा (राम) ने सीता का त्याग करके अपने को कितना तोड़ लिया है। जिसे प्रसन्न करने के लिए त्याग किया गया, उसने राजा के दुःख को दुःख नहीं समझा, यही ट्रेजेडी का मूल है। यह ट्रेजेडी सीता के मिलने से भी दूर नहीं होती। राम लक्ष्मण से यही कहते हैं कि सीता की पवित्रता के विषय में गंगा और पृथ्वी की बात मुझे क्यों सुनाते हो? लोगों से कहो, वे सुनें। इससे स्पष्ट है कि लोगों के प्रति राम का अमर्ष जाता नहीं है, वह ज्यों का त्यों बना रह जाता है। राम का 'सर्वमिदमनुभवन्नपि न प्रत्येमि'- यह वाक्य इस स्थायी दुःख को और भी रेखांकित करता है।

इस प्रकार यह नाटक ऊपर से देखने में तो सुखान्त है, किन्तु भीतर से आदि से अन्त तक करुण बोध से आर्द्र है। ऊपर से देखने पर तो कथा का अवसान राम और सीता के मिलन में है, किन्तु वस्तुतः मिलन होता नहीं, क्योंकि सीता और राम दोनों टूट चुके हैं।लोगों को प्रताड़ित करने के लिए ही मिलन होता है। दैवी शक्तियों के सहयोग से लोगों की कुबुद्धि का मार्जन तो हो जाता है, किन्तु राम और सीता को अपने दुःख की समाप्ति पर विश्वास नहीं है। राम के मन में होता है कि सब कुछ घटित हो रहा है पर मुझे विश्वास नहीं हो रहा है और सीता के मन में यह शल्य है कि क्या आर्यपुत्र को मेरा दुःख दूर करने की कला अभी याद है। दोनों के द्वारा केवल लोकमंगल और लोकरंजन के लिए किया गया यह करुण बलिदान दोनों के हृदय में स्थायी वेदना के रूप में कीलित हो गया है।अतः उत्तररामचरित में करुण अंगीरस है- यही मानना समीचीन है।

## अभ्यास प्रश्न-1

1- एक शब्द में उत्तर दीजिएः

क. करुण रस का स्थायिभाव क्या है?
ख. उत्तररामचरित में कौन रस प्रधान है?
ग. करुण विप्रलम्भ का स्थायिभाव क्या है?

घ. उत्तररामचरित ऊपर से देखने में कैसा है?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिएः

क. उत्तररामचरित नाटक के अन्त में किसका पुनर्मिलन होता है?
ख. तृतीय अंक में कौन सा रस अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँचता है?
ग. करुण रस का स्थायिभाव किसके नाश से उत्पन्न हुआ होता है?
घ. पश्चिमी दृष्टि से ट्रेजेडी का मूल क्या होता है?

3- सत्य/असत्य बताइएः

क. उत्तररामचरित शृंगार रस प्रधान है।
ख. लोग भूल जाते हैं कि सीता का त्याग भी हुआ है।
ग. राम और सीता को अपने दुःख की समाप्ति पर विश्वास नहीं है।
घ. इष्ट व्यक्ति, धारणा, धर्म आदि कुछ भी नहीं हो सकता है।

4- सही विकल्प छांटकर लिखिएः

क. उत्तररामचरित में लोगों की कुबुद्धि का मार्जन होता है।

क- मानव शक्तियों के सौजन्य से    ख- दैवी शक्तियों के सहयोग से

ग- भौतिक शक्तियों के सहयोग से    घ- दैहिक शक्तियों के सहयोग से

5- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क. उत्तररामचरित नाटक की कथा का आधार ............................ रामायण है।
ख. उत्तररामचरित में ट्रेजेडी सीता के मिलने से भी ......................... नहीं होती।
ग. तृतीय अंक में ........... रस अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँचा हुआ प्रतीत होता है।
घ. नाट्यशास्त्र के अनुसार नाटक की कथा का अवसान .............. होना चाहिए।

## 3.3.2 खण्ड दोः उत्तररामचरित में गौण रस:-

उत्तररामचरित में शृंगार, हास्य, रौद्र, वीर, अद्भुत आदि रसों की अंगरूप में सफल योजना है। करुण रस की पवित्र मन्दाकिनी प्रवाहित करने वाले महाकवि भवभूति को प्रस्तुत नाटक में यद्यपि शृंगार सरित्प्रवाह का प्रभूत अवसर नहीं मिला है। वस्तुतः वे सात्तिवक प्रेम के पक्षपाती हैं। इसमें उनके हृदय का गाम्भीर्य ही हेतु है। अतएव उसमें वासना का ज्वार नहीं और बाहरी कारणों की अपेक्षा भी

नहीं। वह तो आन्तरिक हेतु पर निर्भर है जो उसे गहरी आत्तीयता में निमग्न कर सात्तिवक रूप प्रदान करता है।-

**व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपिहेतु-**
**र्न खलु बहिरुपाधीन् प्रीतयःसंश्रयन्ते।। (उत्तर0 6.12)**

भवभूति ने श्रृंगार के संभोग पक्ष का चित्र पूर्वस्मृति के रूप में खींचा है, किन्तु वहाँ भी इनकी गम्भीरता ने कामचेष्टाओं के छिछोरेपन को नहीं आने दिया है और आत्मीयताके गहरे रंग से रंजित कर मनमोहक बना दिया है।-

**किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगा**
**दविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण।**
**अशिथिलपरिरम्भव्यापृतैकैकदोष्णो-**
**रविदितगतयामा रात्रिरेव व्यरंसीत्।। (उत्तर0 1.27)**

आदर्श दाम्पत्य जीवन की झांकी उत्तररामचरित में दर्शनीय एवं स्पृहणीय है। सच्चरित्रता, निष्ठा और मर्यादापूर्ण जीवन जीने वाले तथा धर्म में गहरी आस्था रखने वाले भवभूति के मत में स्त्री भोग विलास की वस्तु नहीं अपितु घर की लक्ष्मी तथा नेत्रों के लिए अमृतशलाका की भाँति शान्ति-प्रदायिनी है, वह जीवन सहचरी है और पवित्रता की मूर्ति है। अतः उनके शृंगार के चित्रण सर्वत्र शिष्ट एवं मर्यादित हैं। यही बात कवि के हास्य रस के विषय में भी चरितार्थ होती है। नाटक में विदूषक की योजना न होने से इनके गम्भीर स्वभाव का पता चलता है। इनकी यह गम्भीरता हास-परिहास को भी गम्भीर बनाकर ही प्रस्तुत करती है। चित्रवीथी में लक्ष्मण द्वारा चित्रों को दिखलाते समय उर्मिला को छोड़कर आगे बढ़ने पर सीता की-‘वत्स! इयमप्यपरा का’ इस उक्ति से लक्ष्मण लजा जाते है। यह परिहास अत्यन्त शिष्ट और मनोरम होते हुए भी कवि की गम्भीरता के कारण स्मिति तक की सीमित रह जाता है। नाटक के अन्त में सीता को मिलते समय लक्ष्मण प्रणाम करते हुए कहते हैं-‘अयं निर्लज्जो लक्ष्मणः प्रणमति’। सीता आशीर्वाद देती हैं-‘वत्स! ईदृशस्त्वं चिरंजीव।’ सीता की यह उक्ति मधुर उपालम्भ के साथ ही विनोद से भी पूर्ण है, किन्तु कवि की गम्भीरता के कारण ही इसमें उच्छ्रंखलता की गन्ध नहीं है। वस्तुतः निर्मल हास का प्रस्तुतीकरण भी गम्भीरता की अपेक्षा रखता है। यही कारण कि भवभूति हास्य के क्षेत्र में भी अन्य कवियों से अनूठे ही दिखलायी पड़ते हैं। उतररामचरित में रौद्ररस का बड़ा ही मनोहर वर्णन है। पांचवे अंक में ‘लव का राजा की सेनाओं के साथ युद्ध हो रहा है’ यह सुनकर कुश का क्षात्र तेज प्रदीप्त हो उठा। क्रोध से उसका चेहरा तमतमा उठा। बस, वह संसार में सम्राट् शब्द का अन्त कर देने पर ही तुल गया। क्षत्त्रिय जाति के शस्त्रानल को सर्वदा के लिए बुझा देने को ही उद्यत हो गया-

**दत्तेन्द्राभयदक्षिणैर्भगवतो वैवस्वतादामनो-**

**दृप्तानां दहनाय दीपितनिजक्षत्रप्रतापग्निभिः।**
**आदित्यैर्यदि विग्रहो नृपतिभिर्धन्यं ममैत्ततो**
**दीक्षास्त्रस्फुरदुग्रदीधितिशिखानीराजितज्यं धनुः।। 6.18**

इत्यादि श्लोक से युद्ध की घोषणा करता हुआ युद्धभूमि में पहुँच गया। कुश के उस स्वरूप को देखकर राम भी चकित हो गये।वीर रस के चित्रण में भवभूति का कौशल देखते ही बनता है। पांचवे अंक में हमें लव के वीर रूप का दर्शन होता है। वह क्षत्रियत्व के स्वाभिमानवश राम की भी वीरता को किसी प्रकार मान्यता देने के लिए तैयार नहीं होता है। उसकी मान्यता है कि किसी व्यक्ति विशेष में क्षात्र धर्म व्यवस्थित नहीं है। वह परशुराम जैसे ब्राह्मण के दमन में, ताड़का और बाली के वध में, खर के साथ युद्ध में तीन पग पीछे हटने में राम की अपकीर्ति ही समझता है। राम ने वैसा करके उसकी दृष्टि में वीरोचित आचरण नहीं किया। इस प्रकार लव के व्यक्तित्व में प्रखर क्षत्रियत्व, स्वाभिमान, अदम्य उत्साह और अगाध पराक्रम के दर्शन होते है। उदाहरण के लिए राम की विजयपताका छीन लेने को उद्यत उसका निम्न कथन अवलोकनीय है।

**यदि ते सन्ति सन्त्येव केयमद्य विभीषिका।**
**किमुक्तैरेभिरधुना तां पताकां हरामि वः।। 4.28**

यहाँ निश्चय ही उत्साह की अभिव्यक्ति होती है। इसी प्रकार कवि ने अधोलिखित पद्य में ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता आदि सभी वीररसोचित गुणों को एक साथ मुखरित कर दिया है-

**ज्याजिह्वया बलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रमुद्गारिघोरघ्नघर्घरघोषमेतत्।**
**ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवक्त्रयन्त्रजृम्भाविडम्बिविकटोदरमस्तु चापम्।।**

प्रथम अंक के अन्त में कवि ने अद्भुत रस की अवतारणा की है। राम सीता के प्रति अपने हृदय का अतिशय प्रेम प्रकट करते हुए उनकी प्रत्येक वस्तु को अत्यन्त प्रिय बताकर केवल विरह को अपने लिए असह्य बताते हैं। तभी प्रविष्ट होकर प्रतिहारी कहती है-'महाराज! उपस्थित है'। यह सुनकर राम आश्चर्यचकित होकर पूछते है-'अयि कः?' तदनु दुर्मुख नामक राम का व्यक्तिगत गुप्तचर उपस्थित होता है। इसी प्रकार पंचम अंक में लव अपने जृम्भकास्त्र के प्रयोग से जब चन्द्रकेतु के सैनिकों को स्तब्ध कर देता है तो आश्चर्य चकित सुमन्त्र जृम्भकास्त्र का इतिहास प्रस्तुत करने लगते हैं।

## अभ्यास प्रश्न – 2

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क. वस्तुतः सात्तिवक प्रेम के पक्षपाती कवि कौन हैं?
ख. सात्तिवक प्रेम किस हेतु पर निर्भर है?
ग. उत्तररामचरित में कैसे दाम्पत्य जीवन की झांकी दर्शनीय है?

घ. भवभूति के मत में कौन भोगविलास की वस्तु नहीं है?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिएः

क. निर्मल हास का प्रस्तुतीकरण किसकी अपेक्षा रखता है?
ख. उत्तररामचरित में किस रस का बड़ा ही मनोहर वर्णन है?
ग. युद्ध को सुनकर किसका क्षात्र तेज प्रदीप्त हो उठा?
घ. कुश के स्वरूप को देखकर कौन चकित हो गये?

3- सत्य/असत्य बताइएः

क. चौथे अंक में लव के वीर रूप का दर्शन होता है।
ख. लव राम की विजय पताका छीन लेने को उद्यत होता है।
ग. राम सीता के विरह को अपने लिए सह्य बताते हैं।
घ. लव के व्यक्तित्व में अगाध पराक्रम के दर्शन होते हैं।

4- सही विकल्प छांटकर लिखिएः

क. भवभूति के मत में स्त्री है।

| | |
|---|---|
| क- विलास की वस्तु | ख- घर की लक्ष्मी |
| ग- शान्ति की मूर्ति | घ- घर की सदस्य |

5- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क. भवभूति ने संभोग शृंगार का चित्र ............................ में रूप में खींचा है।
ख. प्रविष्ट होकर प्रतिहारी कहती है-‘ ....................................! उपस्थित है।
ग. जृम्भकास्त्र के प्रयोग से लव चन्द्रकेतु के सैनिकों को ................ कर देता है।
घ. कुश क्षत्रिय जाति के शास्त्रानल को ........... के लिए बुझा देने को उद्यत हो गया।

## 3.4 सारांशः-

प्रायः सभी आलोचकों ने उत्तररामचरित में ‘करुण’ रस को ही अंगी रस के रूप में स्वीकार किया है। इन विद्वानों के मत में भवभूति करुणरस के ही समर्थक थे और नाट्य शास्त्र के नियमों को चुनौती देकर वीर और शृंगार के स्थान पर करुण को अंगीरस स्वीकार किया है। यह विचार कि भवभूति एक मात्र करुण के ही समर्थक थे, उचित प्रतीत नहीं होता। यदि उन्हें केवल करुण रस ही अभीष्ट होता

तो वे 'रसः करुण एव' कहते, 'एकः' विशेषण उन्होंने अपने नाटक के तृतीय अंक के लिए ही दिया है। जहाँ तक 'करुण' निमित्त भेद से भिन्न-भिन्न पात्रों में विभिन्न रूप से प्रतिबिम्बित हो रहा है। भवभूति अन्य रसों को स्वीकार न करते हों, यह बात नहीं है, उत्तररामचरित में उन्होंने, 'जनिताव्यद्भुतरसः' और वीरो रसः किमयम्' आदि रसान्तरों का स्पष्ट उल्लेख किया है। अतः भवभूति को केवल 'करुणरस' का ही समर्थक मानना सत्य का अपलाप करना है, वे करुण के पक्षपाती हो सकते है, किन्तु रसान्तरों के विरोधी नहीं। उत्तररामचरित करुण रस प्रधान नाटक है। यह सभी अवस्थाओं में सुख-दुःख का अनुपम अद्वैत है। इसमें सर्वत्र आनन्द और करुणा की स्रोतस्विनी प्रवाहित होती रहती है। कहीं भी रस की धारा विच्छिन्न नहीं होती। इसमें शृंगार, वीर, अद्भुत आदि रस अंग है।

## 3.5 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| विप्रलम्भ | - | शृंगार के दो मुख्य भेदों में से एक |
| विधि | - | भाग्य |
| अनुकूल | - | मनोवांछित |
| क्रव्य | - | कच्चा मांस खाने वाले, शेर, चीता आदि |
| अंगी | - | प्रधान |
| क्रन्दन | - | आर्तनाद, विलाप करना |
| दीर्घोच्छवास | - | लम्बी सांस |
| परिदेवन | - | शोकसन्तप्त, दुःखी |
| मोहागम | - | घबराहट, बेहोशी का होना |
| अन्तःकरण | - | मन |
| अभिनय | - | नाटकीय प्रदर्शन |
| घोषणा | - | सार्वजनिक एलान, प्रकथन |
| क्षत्रियत्व | - | क्षत्रिय होने का भाव |
| दमन | - | वश में करने वाला |
| ताड़का | - | एक राक्षसी, सुकेतु की पुत्री |
| बाली | - | एक प्रसिद्ध वानरराज का नाम |
| स्वाभिमान | - | गौरव |
| अगाध | - | अथाह |

| | | |
|---|---|---|
| पराक्रम | - | साहस, बहादुरी |
| विजयपताका | - | विजय का झंडा |
| विभीषिका | - | त्रास, डराने के साधन |
| उद्यत | - | तैयार, तत्पर |
| गुप्तचर | - | जासूस, छिपकर घूमने वाला |
| स्तब्ध | - | संज्ञाहीन |
| सुमन्त्र | - | चन्द्रकेतु का सारथि |
| ग्रास | - | भोजन |
| घोर | - | भयंकर, डरावना |
| यन्त्र | - | कोई भी उपकरण या मशीन |
| चाप | - | धनुष |

## 3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्नों -1 खण्ड-एक

1.
   - क. शोक
   - ख. करुण
   - ग. रति
   - घ. सुखान्त

2.
   - क. उत्तररामचरित नाटक के अन्त में राम सीता का मिलन होता है।
   - ख. तृतीय अंक में करुण रस अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँचता है।
   - ग. करुण रस का स्थायिभाव इष्टनाश से उत्पन्न हुआ होता है।
   - घ. पश्चिमी दृष्टि से ट्रेजेडी का मूल आशाभंग होता है।

3.
   - क. असत्य
   - ख. सत्य
   - ग. सत्य
   - घ. असत्य

4. दैवी शक्तियों के सहयोग से

5.

क. वाल्मीकि कृत

ख. दूर

ग. करुण

घ. सुखद

अभ्यास प्रश्नों -2 खण्ड-दो

1.

क. भवभूति

ख. आन्तरिक

ग. आदर्श

घ. स्त्री

2.

क. निर्मल हास का प्रस्तुतीकरण गम्भीरता की अपेक्षा रखता है।

ख. उत्तररामचरित में रौद्र रस का बड़ा ही मनोहर वर्णन है।

ग. युद्ध को सुनकर कुश का क्षात्र तेज प्रदीप्त हो उठा।

घ. कुश के स्परुप को देखकर राम चकित हो गये।

3.

क. असत्य

ख. सत्य

ग. असत्य

घ. सत्य

4.

क- घर की लक्ष्मी

5.

क. पूर्वस्मृति

ख. महाराज

ग. स्तब्ध

घ. सर्वदा

## 3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1.भवभूति, उत्तररामचरितम्- व्याख्या- डॉ0 रमाकान्त त्रिपाठी (2008) चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी-1

2.भवभूति, उत्तररामचरितम्- व्याख्या- डॉ0 कृष्णकान्त शुक्ल; (1986-87) साहित्यभण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

## 3.8 सहायक ग्रन्थ सूची:-

1. भवभूति, उत्ातररामचरितम्- व्याख्या- आचार्य प्रभुदत्त स्वामी (1988) ज्ञान बुक डिपो, सुभाष बाजार, मेरठ नगर-2

2.भरतमुनि, नाट्यशास्त्र- अनु0 डॉ0 रघुवंश (1964) मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली

## 3.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1 उत्तररामचरित में प्रधान रस करुण है' इस कथन की विवेचना कीजिए ?

2. उत्तररामचरित में गौण रसों की मीमांसा कीजिए ?

3. उत्तररामचरित में प्रधान एवं गौण रसों की व्याख्या कीजिए ?

# इकाई : 4 उत्तररामचरित के पात्रों का चरित्र-चित्रण

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मुख्य भाग: खण्ड एक (उत्तररामचरित पुरुष पात्र)
  4.3.1 भगवान् राम
  4.3.2 लव और कुश
  4.3.3 अन्य पात्र
4.4 खण्ड दो (स्त्री पात्र)
  4.4.1 सीता
  4.4.2 कौशल्या
  4.4.3 अरुन्धती
  4.4.4 आत्रेयी
  4.4.5 वासन्ती
  4.4.6 अन्य पात्र
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
4.9 सहायक पाठ्य सामग्री
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 4.1 प्रस्तावना:-

नाट्य एवं नाट्यशास्त्र के अध्ययन से सम्बन्धित यह चौथी इकाई है पूर्व इकाई में आप उत्तररामचरित के प्रधान एवं गौण रसों के विषय में जान चुके हैं। इस इकाई में आप उत्तररामचरित के

पात्रों के चरित्र का अध्ययन करेंगे।पात्रों के चरित्र-चित्रण में प्रायः चार विशेषताओं का समावेश होता है- 1. आदर्श 2. जातिगत स्वभाव 3. व्यक्तिगत स्वभाव 4. सामान्य स्वभाव प्रतिभाशाली कवि इन विशेषताओं को ध्यान में रखकर ही अपने पात्रों के चरित्र चित्रण में प्रवृत्त होता है।

उत्तररामचरित की कथावस्तु रामायण से गृहीत होने के कारण इसके पात्र लोकविश्रुत है; किन्तु कवि ने अपनी प्रतिभा, कल्पना और प्रौढ़, उक्तियों से इनमें नये जीवन का सन्निवेश किया है। कथावस्तु को उदात्त एवं व्यापक स्वरुप प्रदान करने के लिए कवि ने कुछ नये पात्रों की सृष्टि की है; जिनमें वनदेवी वासन्ती, तपस्विनी आत्रेयी, सौधातकि, दण्डायन, तमसा, मुरला, भागीरथी आदि पात्र हैं। भवभूति की प्रतिभा से ये सभी पात्र बड़े ही जीवन्त रूप में चित्रित किये गये हैं।

## 4.2 उद्देश्यः-

**इस इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तररामचरित के—**

- पात्रों के आदर्श स्वरूप को समझ सकेंगे।
- पात्रों के जातिगत स्वभाव को पहचान सकेंगे।
- पात्रों के व्यक्तिगत स्वभाव को समझ सकेंगे।
- नायक का चरित्र-चित्रण कर सकेंगे।
- पुरुष पात्रों के चरित्र का विश्लेषण कर सकेंगे।
- नायिका का चरित्र-चित्रण कर सकेगे।
- स्त्री पात्रों से परिचित हो सकेंगे।
- पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर सकेंगे।
- धीरोदात्त नायक के गुणों को समझ सकेंगे।
- दाम्पत्य प्रेम से अवगत हो सकेंगे।
- अमूर्त पात्रों का औचित्य जान पायेंगे।

## 4.3 मुख्य भागः खण्ड एक (उत्तररामचरित में पुरूष पात्र):-

## 4.3.1 भगवान् रामः-

श्री रामचन्द्र जी 'उत्तररामचरित' के दिव्यादिव्य धीरोदात्त नायक हैं। वे आदर्श पति, आदर्श पिता तथा आदर्श राजा के रूप में चित्रित किये गये हैं। एक पत्नीव्रत की वे साक्षात् मूर्ति है। सीता के निर्वासित होने के बाद अश्वमेध यज्ञ में वे उसकी हिरण्यमयी प्रतिमा को ही सहधर्मचारिणी के रूप में नियुक्त करते हैं। संसार में इससे अधिक उत्कृष्ट एक पत्नीव्रत का उदाहरण मिलना यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। राम आदर्श राजा हैं, प्रजानुरंजन ही उनका महान् व्रत है। वे लोकरंजन के लिए स्नेह, दया, सौख्य और यहाँ तक कि जो उनके गृह ही लक्ष्मी थी, नयनों की अमृत शलाका थी, उनका जीवन थी और दूसरा हृदय भी, उस प्राणप्रिया जानकी को भी सर्वथा परिपूता जानते हुए भी वन में निर्वासित कर अपने जीवन के समस्त सुखों की तिलांजलि दे देते हैं। यहाँ वे आदर्श राजा के रूप में वज्र से भी कठोर बन जाते हैं, किन्तु उसके बाद ही अश्वमेध यज्ञ में सीता की हिरण्यमयी प्रतिभा को ही सहधर्मचारिणी नियुक्त कर आदर्श पति के रूप में कुसुम से भी अधिक मृदु बन जाते हैं।

राम सीता निर्वासन रूप नृशंसकर्म के लिए बराबर अपने आपको धिक्कारते रहते है। सकरुण होकर भी राम लोकरंजन के लिए ही शम्बूक पर प्रहार करने में हिचकते हुए दाहिने हाथ को कोसते हैं- 'रे दक्षिण हस्त! ब्राह्मण बालक को जिलाने के लिए शूद्र मुनि पर तलवार का प्रहार कर। इस विषय में हिचक क्यों करता है? अरे तू तो परिपूर्ण गर्भ से खिन्न प्रियतमा सीता का परित्याग करने में पटु राम का हाथ है। अतः तुझमें करुणा कहाँ से आयी? निर्दय व्यक्ति का अंग होने होने के कारण तू भी करुणाहीन हो कर शूद्र तापस पर प्रहार कर।'

राम के इस कथन में उनकी आत्मग्लानि स्पष्ट है। पंचवटी में पहुचने पर उनकी यह आत्मग्लानि और अधिक तीव्र हो जाती है-'जहाँ मैने सीता के साथ अपने घर की भाँति वे सुखमय दिवस बिताये थे, जिसकी बड़ी-बड़ी चर्चाएँ करते हुए ही हम लोग अयोध्या में भी रहते थे, आज प्रियतमा का विनाश करने वाला पापी राम एकाकी इस पंचवटी को किस मुँह से देखे ? राम ने लोकानुरंजन के लिए सीता निर्वासन तो करा दिया, किन्तु सीता के प्रति उनके स्नेह में तनिक भी मलिनता नहीं आयी, प्रत्युत वह उत्तरोत्तर प्रगाढ होता चला गया। सीता को भी छाया अंक में इस बात का स्पष्टतः ज्ञान हो जाता है।

वहाँ राम का मूच्र्छत होना और सीता के करस्पर्श से चेतना प्राप्त करना सीता के लिए अपने प्रति राम के प्रगाढ स्नेह का स्पष्ट प्रमाण है, किन्तु राम का यह स्नेह सामान्य स्नेह की भाँति छिछला, उद्दण्ड एवं उच्छृंखल नहीं है। वह मर्यादा से बंधा हुआ है और पुटपाक के समान भीतर ही भीतर सुलगता रहता है, फिर भी कभी-कभी उमड़कर प्रलापों के माध्यम से व्यक्त हो ही जाता है। षष्ठ अंक में युद्ध क्षेत्र में कुश और लव को देखकर उनके सीता पुत्र होने की सम्भावना से राम का हृदय वात्सल्य से भर जाता है। संक्षेप में भवभूति के राम आदर्श राजा, आदर्श पति तथा आदर्श पिता सभी कुछ हैं।

## 4.3.2 लव और कुशः-

ये दोनों यमज भ्राता राम के पुत्र हैं। ये अपने पिता के समान ही रूपवान् और समस्त गुणों के आश्रय हैं। स्वयं वाल्मीकि ने ही अपने आश्रम में इनका पालन-पोषण किया तथा क्षत्रियोचित संस्कार कर उन्हें सम्पूर्ण विद्याएँ प्रदान की। जृम्भकास्त्र इन्हें जन्मतः स्वतः सिद्ध हैं। वाल्मीकि ने रामायण के कुछ अन्तिम भाग को छोड़कर शेष पूरा का पूरा लव और कुश को याद कराया था। जन्मक्रम से कुश ज्येष्ठ था। वाल्मीकि के आश्रम में रहने के उद्देश्य से वसिष्ठ, अरुन्धती, कौसल्यादि रानियाँ और जनक आते हैं। उस समय उनके आगमन के उपलक्ष में आश्रम में अनध्याय हो जाने से आश्रम के वटुक खेलते-कूदते एवं कोलाहल करते हैं। उन्हीं में क्षत्रिय वटुकोचित वेशभूषा धारण किये हुए लव को भी जनक आदि ने देखा। उन्हें उसमें राम की छाया स्पष्ट दिखलायी पड़ी और वात्सल्यवश उन लोगों ने उसे अपने पास बुलाया। लव विनय के साथ उनके समीप जाकर 'एष तो लवस्य शिरसा प्रणामपर्यायः' कहकर उन सब का अभिवादन करता है। पराक्रमी और तेजस्वी होने के साथ ही लव विनय सम्पन्न शिष्टाचार का पालन करने वाला भी है। वह क्षत्रियत्व के स्वाभिमानवश राम की वीरता की भी वीरता को किसी प्रकार मान्यता देने के लिए तैयार नहीं होता है। वह परशुराम जैसे ब्राह्मण के दमन में, ताड़का और बाली के वध में, खर के साथ युद्ध में तीन पग पीछे हटने में राम की अपकीर्ति समझता है। उसकी मान्यता है कि राम ने वैसा करके वीरोचित आचरण नहीं किया; किन्तु युद्धस्थल में राम के उपस्थित होने पर उन पुण्यानुभाव दर्शन महापुरुष को देखते ही लव का सारा विरोध विश्रान्त हो जाता है। वह अभिमानपूर्वक 'मृष्यन्त्विदानीं लवस्य बालिशतां तातपादः' कहकर अपनी धृष्टता के लिए क्षमायाचना करता है। इस प्रकार लव में भोलेपन के साथ ही प्रखर क्षत्रियत्व, स्वाभिमान, अदम्य उत्साह और अगाध पराक्रम में भी दर्शन होते हैं। विनय, शिष्टाचार आदि तो आश्रम में पले होने के कारण उसमें स्वभावतः ही थे।

कुश को वाल्मीकि ने स्वरचित सन्दर्भ के साथ भरतमुनि के पास भेजा था। वहाँ से लौटते ही उसने सुना कि लव का राजा की सेनाओं के साथ युद्ध हो रहा है। बस, वह संसार में सम्राट् शब्द का अन्त कर देने पर ही तुल गया। क्षत्रिय जाति के शस्त्रानल को सर्वदा के लिए बुझा देने को उद्यत हो गया। 'उतेन्द्राभयदक्षिणैः'-इत्यादि श्लोक से युद्ध की घोषणा करता हुआ युद्धभूमि में पहुँच गया। कुश का उस समय का स्वरूप देखकर राम भी चकित हो गये। वे कहने लगे-'इस क्षत्रिय बालक में सामर्थ्य का अनिर्वचनीय उत्कर्ष है। इसकी दृष्टि तीनों लोकों के बलोत्कर्ष को तृण के समान तिरस्कृत कर रही है। इसकी धीर और गर्वभरी चाल पृथ्वी को अवनमित सी कर रही है। बाल्यावस्था में भी पर्वत के समान यह गुरुता धारण किये हुए है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो मूर्तिमान् वीररस अथवा गर्व ही चला आ रहा हो।' लव ने कुश के समीप जाकर प्रणतिपूर्वक सारी स्थिति बतलायी और उसे शान्त रहने के लिए कहा। कुश तो किसी क्षत्रिय के प्रति विनय निन्ध समझता था, किन्तु लव ने उसे समझाया कि राम हमारे धर्म पिता हैं, क्योंकि वे चन्द्रकेतु के ज्येष्ठ पिता हैं और चन्द्रकेतु मेरा प्रिय मित्र है। अतः कुश

ने लव के साथ राम के पास पहुँचकर उनका अभिवादन किया तथा उनके दर्शन से स्वयं को कृतकृत्य किया। राम भी वात्सल्यवश उसका आलिंगन कर आनन्दित हुए।

## 4.3.3 अन्य पात्र:-

उत्तररामचरित में लक्ष्मण आज्ञापालक, कर्तव्यनिष्ठ, गम्भीर और कुछ तेजस्वी स्वभाव के हैं। शत्रुघ्न परम धैर्यशाली, स्वामिभक्त योद्धा हैं। जब लवणासुर से संत्रस्त यमुनातीरवासी ऋषियों का समूह राम की शरण में पहुँचकर रक्षार्थ प्रार्थना करता है तो राम का आदेश मिलते ही वे राक्षस लवण का संहार करने निकल पड़ते हैं तथा उसका वध करके ऋषिगणों को अभयदान करते हैं। जनक अवसादग्रस्त होकर भी क्षात्रतेज से प्रदीप्त हैं। सुमन्त्र स्वामिभक्त, वात्सल्यपूर्ण और नीतिज्ञ हैं। चन्द्रकेतु राजकुमार होने पर भी विनय और वीरता से सम्पन्न हैं। अष्टावक्र और वाल्मीकि दोनो मितभाषी हैं। दण्डायन और सौधातकि अनध्याय प्रिय छात्र हैं। दुर्मुख राम का आसन्नपरिचारक है।

## अभ्यास प्रश्न-1

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क- श्री रामचन्द्र जी किस प्रकृति के नायक हैं?
ख- श्री रामचन्द्र कैसे राजा हैं?
ग- कुश का स्वरूप देखकर कौन चकित हो गये?
घ- श्री रामचन्द्र जी का आसन्न परिचारक कौन है?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क- कौन अपने दाहिने हाथ को कोसते हैं?
ख- यमज भ्राता लव और कुश किसके पुत्र हैं?
ग- लव को देखकर राम का हृदय किससे भर जाता है?
घ- कौन वटुक संसार से सम्राट् शब्द का अन्त करने पर ही तुल गया?

3- सत्य/असत्य बताइए:

क- दण्डायन स्वाध्याय प्रिय छात्र है।
ख- शत्रुघ्न ऋषिगणों को अभयदान करते हैं।
ग- लक्ष्मण धैर्यशाली और स्वामिभक्त योद्धा हैं।
घ- श्री रामचन्द्र कुश का आलिंगन कर आनन्दित हुए।

4- सही विकलप छांटकर लिखिएः

क- अष्टावक्र और वाल्मीकि दोनों ऋषि है।

क- बहुभाषी ख- मितभाषी

ग- मधुरभाषी घ- मृदुभाषी

5- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क- श्री रामचन्द्र आदर्श राजा .................. तथा आदर्श पिता सभी कुछ है।
ख- श्री रामचन्द्र का स्नेह पुटपाक के समान .................. सुलगता रहता है।
ग- लव ने कुश के पास जाकर ........................... सारी स्थिति बतलायी।
घ- सुमन्त्र स्वामिभक्त, वात्सल्पूर्ण और .......................................... हैं।

## 4.4 खण्ड दो (उत्तररामचरित में स्त्री पात्र)

### 4.4.1 सीताः-

भगवती सीता प्रस्तुत नाटक की नायिका हैं। उनको विश्व का भरण पोषण करने वाली भगवती वसुन्धरा ने जन्म दिया है। ब्रह्मा के समान राजा जनक उनके पिता हैं। वे सूर्यकुल के राजाओं की बहू हैं। राम को सीता का सब कुछ प्रिय है। यदि कुछ अप्रिय है तो वह है उसका विरह। सीता के राम के प्रति कितना अगाध प्रेम तथा आदरभाव था, इसकी झलक **'तस्मै कोपिष्यामि यदि तं प्रेक्षमाणा आत्मनः प्रभविष्यामि'-** सीता के इस वचन से मिलती है; किन्तु विधि की विडम्बना ऐसी रही कि कुलीनता और आचार से साक्षात् देवी सीता को भी भगवान् राम की प्रजानुरंजन की प्रतिज्ञा में साधन बनना पड़ा।

जहाँ राम, वसिष्ठ, अरुन्धती और कौशल्या आदि रानियों द्वारा गर्भभरालसा सीता के लिए पूर्ण सुख-सुविधा देने की बात सोची गयी थी, वहाँ उलटे उनको घोर अरण्य में नाना कष्ट झेलने के लिए छोड़ दिया गया।

अपने अकारण निर्वासन के लिए सीता के हृदय का, राम के स्नेह की पूर्णता में शंकालु होना स्वाभाविक है। फिर भी सीता की ओर से अपने स्नेह की पूर्णता में किसी प्रकार की मलिनता या कभी नहीं आने पायी है। 'अयि कठोर! यशः किल ते प्रियं किमयशो ननु घोरमतः परम्'- वासन्ती का यह कठोर उपालभ्भ सुनकर सीता कहती है- सखि वासन्ति! त्वमेव दारुणा कठोर च, यैवं प्रलपन्तं प्रलापयसि'। सीता का यह वचन उनके स्नेह की निर्मलता का स्पष्ट प्रमाण है।

सीता वह मन्दभागिनी माता है कि जिसके पुत्र तो हुए, किन्तु उन पुत्रों की बाल्यावस्था का सुख न तो उसके प्रिय राम को प्राप्त हो सका और न ही पूर्णतः उसे। सीता को तो पता है कि मेरे दो पुत्र पैदा हुए हैं। वे वाल्मीकि के आश्रम में पल रहे हैं; किन्तु राम को इसका भी पता नहीं है। इस प्रकार से सीता का दुःख भी राम के ही दुःख की तरह ऐकान्तिक है। सीता अपने पुत्रों से बारह वर्ष बाद जब मिलती हैं, तो मानों वे दोनों उन्हें दूसरे जन्म में मिल रहे हां। वे कहती हैं-**'चिरस्य परिष्वजेथां मां पुनर्जन्मान्तरगतां जननीम्।'**

## 4.4.2 कौसल्या:-

उररामचरित में सीता विपत्ति की मारी नारी के रूप में चित्रित हैं। रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक के बाद वे द्वादश वर्ष तक चलने वाले यज्ञ के लिए अपने जामाता ऋष्यशृग के आश्रम में चली जाती हैं और वहाँ से अष्टावक्र के माध्यम से राम को सन्देश भेजती है कि रघुकुल की वधू सीता को जो भी गर्भदोहद हो उसकी पूर्ति अवश्य की जानी चाहिए। कौसल्या अपनी पुत्री के समान सीता के प्रति वात्सल्यभाव रखती हैं। यज्ञ समाप्त होने पर जब उन्हें यह ज्ञात होता है कि राम ने सीता का बहिष्कार कर दिया है तो वे अत्यन्त दुःखी होती हैं और अयोध्या नहीं लौटना चाहतीं, अपितु वाल्मीकि आश्रम में निवास करने पर विचार करती हैं। वहाँ वसिष्ठ की आज्ञा से वे जनक से मिलती है। जनक के लिए कौसल्या का दर्शन घाव पर नमक के समान है। वे भी जनक को अपना मुँह नहीं दिखाना चाहतीं। जनक उपालम्भ के साथ गृष्टि से कौसल्या का कुशल वृतान्त पूछते है। गृष्टि उन्हें बताते हैं कि कौसल्या ने क्रुद्ध होकर रामचन्द्र जी का परित्याग कर दिया है। जनक के रोष के साथ वे मूचर्छित हो जाती हैं, तब जनक अपने कमण्डलु के जल के छींटों से स्वस्थ करते है।

## 4.4.3 अरून्धती:-

महर्षि वसिष्ठ की पत्नी हैं। उत्तररामचरित की नाटकीय अवतारण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। उनकी तथा वसिष्ठ जी की देखरेख में ही राम की माताएँ ऋण्यशृंग के आश्रम में जाती हैं। वसिष्ठ के समान ही अरुन्धती विद्वमण्डली में प्रतिष्ठित हैं। अतः कौसल्या से मिलते समय जनक पहले उन्हें प्रणाम करते हैं। वे आशीर्वाद देती है। रामचन्द्र भी उनके सम्मानार्थ प्रस्तुत होते हैं। गंगा और पृथ्वी भी परम पवित्र आचरण वाली सीता को अरुन्धती को सौंपती हैं। वे सीता को रामचन्द्र के लिए जीवनदान की आज्ञा देती हैं तथा समस्त पुरवासियों और जनपदवासियों को सम्बोधन करती हैं। अनन्तर रामचन्द्र को आदेश देती हैं कि अब वे सोने की प्रतिभा के स्थान पर साक्षात् सीता को अश्वमेध यज्ञ में नियुक्त करें। तभी राम सीता को स्वीकार करते हैं।

## 4.4.4 आत्रेयी:-

उत्तररामचरित में आत्रेयी वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में अध्ययन करने वाली तापसी है। दण्डकारण्य में वनदेवता अर्ध्यदेकर उसका स्वागत करती हैं वनदेवी वासन्ती के पूछनेपर वह बताती है कि आश्रम में उपस्थित अध्ययन सम्बन्धी विघ्न के कारण वह अगस्त्य आदि ऋषियों से ब्रह्मविद्या का अध्ययन करने के लिए यहाँ दण्डकारण्य में आयी है। वाल्मीकि जी के यहाँ दो विघ्नों का उल्लेख करती हुई वह कहती है कि एक तो वाल्मीकि जी आज कल रामायण का प्रणयन कर रहे हैं। दूसरे गंगा देवी ने दो अत्यन्त मेधावी बालक लाकर महर्षि को सुपुर्द किये हैं जिनका नाम कुश और लव है। उन बालकों के साथ उसका अध्ययन सम्भव नहीं है। वे बहुत शीघ्र ही विद्या ग्रहण कर लेते हैं। वह अध्ययन में उनसे पिछड़ गयी है। इसलिए यहाँ चली आयी है।आत्रेयी यह जानकर कि यह पंचवटी है और यह जनस्थान है और उसका आतिथ्य करने वाली वनदेवता वासन्ती है। सीता को यादकर अश्रुमुखी हो जाती है और वासन्ती को सीता परित्याग तथा राम के अश्वमेध यज्ञ आदि सारी घटना से अवगत करा देती है।

## 4.4.5 वासन्ती:-

आत्रेयी को आतिथ्य प्रदान करने वाली वनदेवी है। दण्डकारण्य में वह अर्घ्य देकर आत्रेयी का स्वागत करती है। वह बताती है कि यह वन आपकी इच्छानुसार उपभोग करने योग्य है। वृक्षों की छाया, जल तथा तपस्या के लिए उपयुक्त भोजन, जो कुछ भी फल मूल आदि है, वह भी आपके लिए अप्राप्य नहीं है। वह आत्रेयी से उसका परिचय पूछती है तथा संकेत से उसे अगस्त्याश्रम का मार्ग बताती है। इसके चरित्र में भारतीय नारी के आतिथ्य की झलक दिखायी देती है।

## 4.4.6 अन्य पात्र:-

स्त्री पात्रों में तमसा, मुरला और भागीरथी नदियाँ है जो महाकवि भवभूति की उर्वर कल्पना की उपज हैं। पृथ्वी भगवती सीता की माता है। विद्याधरी विद्याधर की पत्नी है और प्रतिहारी ड्योढीवान है। भवभूति की प्रतिभा तूलिका से ये सभी पात्र बड़े ही प्राणवान् चित्रित किये गये हैं। इनमें जो गम्भीर प्रभावोत्पादन क्षमता है, वह किसी को भी मन्त्रमुग्ध किये बिना नहीं रह सकती।

## अभ्यास प्रश्न- 2

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क- उत्तररामचरित की नायिका कौन है?
ख- भगवती सीता की माता कौन है?

ग- आत्रेयी कौन है?

घ- अरुन्धती के पति कौन है?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क- साध्वी सीता किसकी प्रियतमा है?

ख- श्रीरामचन्द्र की प्रतिज्ञा में किसे साधन बनना पड़ा?

ग- सीता अपने पुत्रों से कितने वर्ष बाद मिलती है?

घ- सीता को याद कर कौन अश्रुमुखी हो जाती है?

3- सत्य/असत्य बताइए:

क- कौसल्या विपत्ति की मारी नारी है।

ख- जनक पहले कौसल्या को प्रणाम करते हैं।

ग- वासन्ती आतिथ्य प्रदान करने वाली वन देवी है।

घ- तमसा, मुरला और भागीरथी स्त्री पात्र नहीं हैं।

4- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

क- जनक गृष्टि से कौशल्या का ..................वृत्तान्त पूछते हैं।

ख- सीता का दुःख भी राम के ही दुःख की तरह ............. है।

ग- गंगा और पृथ्वी भी सीता को ...................... सौंपती हैं।

घ- वाल्मीकि जी आजकल रामायण का ............. कर रहें हैं।

5- सही विकल्प छांटकर लिखिए:

क- विद्याधर की पत्नी है।

क- तारा ख- प्रतिहारी

ग- वासन्ती घ- विद्याधरी

## 4.5 सारांश:-

चरित्र चित्रण की दृष्टि से उत्तररामचरित एक सफल नाटक है। रामचन्द्र प्रजापालक राजा है। प्रजा हित में अपना सर्वस्व बलिदान कर सकते हैं। लक्ष्मण आज्ञापालक, गम्भीर और तेजस्वी हैं। जनक क्षात्र धर्म से प्रदीप्त हैं। लव-कुश बाल सुलभ चापल्य से सम्पन्न बालक हैं। चन्द्रकेतु राज कुमार होने पर भी विनय और वीरता से युक्त हैं। अष्टावक्र और वाल्मीकि मितभाषी ऋषि हैं। सुमन्त्र स्वामिभक्त, वात्सल्यपूर्ण और नीतिज्ञ हैं। दण्डायन तथा सौधातकि अनध्यायप्रिय छात्र हैं। सीता 'करुणस्य मूर्ति' अथवा शरीरिणी विहरव्यथा हैं। अपने अलोकसामान्य तेज से वे नाटक के प्रत्येक क्षेत्र

को आभासित कर रही हैं। कौसल्या विपदा की मारी हैं। अरुन्धती ऋषि वसिष्ठ की धर्मपत्नी हैं; तमसा, मुरला, आत्रेयी, वासन्ती प्रभृति नारी पात्रानुरूप अपनी-अपनी भूमिकाएँ निर्वहन करने में अक्षरशः सफल है।

## 4.6 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| एक पत्नीव्रत | - | एक पत्नी को अपनाने का नियम |
| यज्ञ | - | हवन |
| परिपूता | - | अत्यन्त पवित्र |
| लोकरंजन | - | प्रजा की प्रसन्नता |
| हिचक | - | संकोच |
| तापस | - | तपस्वी |
| प्राणप्रिया | - | प्राणों के समान प्रिय |
| अनध्याय | - | अध्ययन रहित |
| पुटपाक | - | औषधियाँ तैयार करने की विशेष पद्धति |
| छिछला | - | हलका |
| उद्दण्ड | - | भयानक |
| उच्छृंखल | - | निरंकुश, बेलगाम |
| प्रगाढ | - | तीव्र |
| अपकीर्ति | - | अपयश |
| आश्रय | - | ग्रहण करने वाला |
| प्रलाप | - | बालकलरव |
| वात्सल्य | - | (अपने बच्चों के प्रति) स्नेह |
| शिष्टाचार | - | विनम्र आचरण |
| स्वाभिमानवश | - | अहंकार के अधीन |
| वीरोचित | - | वीरों के योग्य |
| क्षात्रतेज | - | क्षत्रिय सम्बन्धी तेज |
| अवसादग्रस्त | - | दुःखी |
| नीतिज्ञ | - | नीति को जानने वाला |
| प्रेक्षमाण | - | देखता हुआ |
| पुरवासी | - | नगरवासी |
| जनपदवासी | - | गांववासी |
| तूलिका | - | सूची |

गर्भदोहद - गर्भवती स्त्री की प्रबल रुचि
परित्याग - छोड़ना
आतिथ्य - अतिथि सत्कार
वासन्ती - वन की देवी
अरून्धती - ऋषि वसिष्ठ की पत्नी
पुटपाक - औषधियाँ तैयार करने की विशेष पद्धति
छिछला - हलका
उद्दण्ड - भयानक
उच्छृंखल - निरंकुश, बेलगाम
प्रगाढ - तीव्र
अपकीर्ति - अपयश
आश्रय - ग्रहण करने वाला
प्रलाप - बालकलरव
वात्सल्य - (अपने बच्चों के प्रति) स्नेह
शिष्टाचार - विनम्र आचरण
स्वाभिमानवश - अहंकार के अधीन
वीरोचित - वीरों के योग्य
क्षात्रतेज - क्षत्रिय सम्बन्धी तेज
अवसादग्रस्त - दुःखी
नीतिज्ञ - नीति को जानने वाला
प्रेक्षमाण - देखता हुआ
पुरवासी - नगरवासी
जनपदवासी - गांववासी
तूलिका - सूची
गर्भदोहद - गर्भवती स्त्री की प्रबल रुचि
परित्याग - छोड़ना
आतिथ्य - अतिथि सत्कार
वासन्ती - वन की देवी
अरून्धती - ऋषि वसिष्ठ की पत्नी

## 4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न-1 खण्ड-एक

1-

क- धीरोदत्त

ख- आदर्श

ग- रामचन्द्र

घ- दुर्मुख

2-

क- श्री रामचन्द्र अपने दाहिने हाथ को कोसते हैं।

ख- यमज भ्राता लव और कुश श्रीरामचन्द्र जी के पुत्र हैं।

ग- लव को देखकर श्रीरामचन्द्र जी का हृदय वात्सल्य से भर जाता है।

घ- कुश संसार से सम्राट् शब्द का अन्त करने पर ही तुल गया।

3-

क- असत्य

ख- सत्य

ग- असत्य

घ- सत्य

4- मृदुभाषी

5-

क- आदर्श पति

ख- भीतर ही भीतर

ग- प्रणतिपूर्वक

घ- नीतिज्ञ

अभ्यास प्रश्न-2 खण्ड-दो

क- सीता

ख- वसुन्धरा

ग- तापसी

घ- वसिष्ठ

2-साध्वी सीता श्री रामचन्द्र की प्रियतमा है।

क- सीता को श्रीरामचन्द्र की प्रतिज्ञा में साधन बनना पड़ा।

ख- सीता अपने पुत्रों से बारह वर्ष बाद मिलती है।

ग- सीता को याद कर आत्रेयी अश्रुमुखी हो जाती है।

3-

क- सत्य

ख- असत्य
ग- सत्य
घ- असत्य

4-
क- कुशल
ख- एकान्तिक
ग- अरुन्धती
घ- प्रणयन

5- विद्याधरी

## 4.8 सन्दर्भ ग्रन्थः-

1- भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या-डॉ0 रमाकान्त त्रिपाठी (2008) चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी-

2- भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या-आचार्य प्रभुदत्त स्वामी (1988) ज्ञान प्रकाशन मेरठ-2

## 4.9 सहायक पाठ्य सामग्रीः-

1- भवभूतिउत्तररामचरितम्, व्याख्या-डॉ0 कृष्णकान्त शुक्ल (1986-87) साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

2- भवभूति, उत्तररामचरितम्: विचार और विश्लेषण, आचार्य प्रभुदत्त स्वामी, ज्ञान प्रकाशन मेरठ-2

3- भरतमुनि, नाट्यशास्त्र, अनु0डॉ0 रघुवंश (1964) मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली।

## 4.10 निबन्धात्मक प्रश्नः-

1. उत्तररामचरित के नायक भगवान् राम का चरित्र-चित्रण कीजिए?
2. उत्तररामचरित के आधार पर लव-कुश का चरित्र चित्रण कीजिए?
3. उत्तररामचरित की नायिका भगवती सीता का चरित्र चित्रण कीजिए?
4. उत्तररामचरित के स्त्री पात्रों का चरित्र चित्रण कीजिए?

# इकाई : 5 उत्तररामचरितम् की भाषा-शैली

इकाई संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 उत्तररामचरितम् की भाषा-शैली
    5.3.1 मुख्य भाग: खण्ड एक-उत्तररामचरित की भाषा
    5.3.2 खण्ड दोः उत्तररामचरित की शैली
5.4 सारांश
5.5 शब्दावली
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
5.8 सहायक पाठ्य सामग्री
5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

## 5.1 प्रस्तावना:-

नाट्य एवं नाट्यशास्त्र के अध्ययन से सम्बन्धित यह पंचम इकाई है। इससे पूर्व इकाई में आप उत्तररामचरित के पात्रों के चरित्र को समझ चुके हैं। इस इकाई में आप उत्तररामचरित की भाषा शैली का अध्ययन करेंगे। भाषा की दृष्टि से उत्तररामचरित भवभूति के अन्य नाटकों की अपेक्षा सरल है। यद्यपि एक-आध स्थल पर हमें कठिनता के भी दर्शन होते हैं। भावातिरेक के कारण कभी-कभी कवित्व नाटकत्व से बढ़ जाता है और वहाँ नाटकीय गतिशीलता दबी हुई सी प्रतीत हाती है। उनकी भाषा विषयानुसारिणी है।

भवभूति की शैली में भाषा और भाव का अद्भुत सामंजस्य है। वे भयावह दृश्यों के वर्णन में समास संकुल ओजोगुण विशिष्ट पद्य भी लिख सकते है और कोमल प्रसंगों में असमस्त और सरल रचना भी कर सकते हैं। गौडी रीति के सम्राट् होने पर भी वे वैदर्भी के उपासक है।

## 5.2 उद्देश्य:-

**इस इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तररामचरित की-**

- भाषा को समझ सकेंगे।
- शब्द विन्यास की प्रांजलता को पहचान पायेंगे।
- पात्रानुरूप भाषा के प्रयोग की परख कर सकेंगे।
- विषयानुसारिणी भाषा को समझ सकेंगे।
- भाषा का विश्लेषण कर सकेंगे।
- भाषा और भाव का सामंजस्य जान सकेंगे।
- शैली का स्वरूप समझ सकेंगे।
- गौडी रीति को समझ सकेंगे।
- वैदर्भी रीति को समझ सकेंगे।
- भाषा शैली का विवेचन कर सकेंगे।

## 5.3 उत्तररामचरितम् की भाषा-शैली

### 5.3.1 खण्ड एक: उत्तररामचरित की भाषा:-

उत्तररामचरित नाटक के प्रणेता महाकवि भवभूति ने सरस्वती को अपनी अनुगामिनी कहा है; जो सर्वथा सत्य है। वास्तव में वे वाणी के ब्रह्मा हैं और वाणी उनकी वशवर्तिनी हैं उनके पास अपार शब्द भण्डार है। उनमें शब्द चयन की अपूर्व शक्ति है। भाषा उनकी अनुचरी है; वह उनके भावों के अनुरूप ढलकर स्वयम् आ उपस्थित होती है।श्रृंगार और करुण के प्रसंग में वे कोमल पदावली का

प्रयोग करते हैं। वीर, भयानक, वीभत्स और रौद्र के अवसरों पर उनकी पदावली तदनुरूप कठोर होकर सुनने मात्र से ही उत्साह, भय, घृणा और क्रोध उत्पन्न करने लगती है। वीर, रौद्र आदि में उनकी पदावली संश्लिष्ट होकर समासबहुला हो जाती है और शृंगार तथा करुण के अवसर पर वह समास शैली का स्पर्श भी नहीं करती।निर्झर की कलकल में, वायु की सनसनाहट में, उल्लुओं और भालुओं की घर्राहट में, कबूतरों के गुटकने में उनकी भाषा स्वयं कलकल करती, सनसनाती, घर्राती और गुटकती जान पड़ती है। मेघों का गर्जन हो या बिजली का तर्जन, धनुष की टंकार हो या खड्ग की झंकार; आप शब्दों को सुनते ही, बिना अर्थ को जाने भी, वस्तु के स्वरूप का साक्षात्कार करने लगते हैं। भाषा पर ऐसा एकच्छत्र अधिकार किसी कवि का शायद ही दीख पड़े।

भवभूति उच्चकोटि के पण्डित भी हैं और उच्च कोटि के कवि भी। इनमें अपार शब्द ज्ञान भी है और अपूर्व प्रयोग सामर्थ्य भी। बालकों के मुँह से बालकों की, वृद्धों के मुँह से वृद्धों की, ऋषियों के मुँह से ऋषियों की और राजर्षियों के मुँह से राजर्षियों की भाषा का प्रयोग जैसा भवभूति की रचनाओं में मिलता है वह अन्यत्र नहीं है; उदाहरण के लिए-

**आविर्भूतज्योतिषां ब्राह्मणानां ये व्याहारस्तेषु मा संशयोऽभूत्।**
**भद्रा ह्येषावाचि लक्ष्मीर्निषक्ता नैते वाचं विप्लुतार्थां वदन्ति।।**

इस को सुनकर क्या आप यह अनुमान नहीं कर लेंगे कि यहाँ कोई ऋषि पत्नी अपने सत्यवाक् पति की बात पर अविश्वास प्रकट करने वाली राज पत्नी को हलकी सी डांट पिला रही है। इसी प्रकार चतुर्थ, पंचम और पष्ठ अंकों में चाहे लव और चन्द्रकेतु संवाद हो, चाहे जनक और लव की बातचीत हो। लव की प्रत्येक उक्ति में आपको किसी अरण्यवासी, वेदाध्यासी, क्षत्रियवटु के बोलने का स्वयम् आभास मिल जाता है।

## अभ्यास प्रश्न-1

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क- भवभूति ने सरस्वती को क्या कहा है?
ख- उच्चकोटि के पण्डित कौन हैं?
ग- भवभूति का भाषा पर कैसा अधिकार है?
घ- भवभूति की वशवर्तिनी कौन है?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क- भवभूति किस कोटि के कवि हैं?
ख- किसमें अपार शब्द ज्ञान भी है?

ग- भवभूति की भाषा निर्झर की कलकल में कैसी जान पड़ती है?
घ- भवभूति की भाषा वीर और रौद्र आदि में कैसी हो जाती है?

3- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क- भाषा उनके भावों के अनुरूप ढलकर ........... आ उपस्थित होती है।
ख- वायु की सनसनाहट में उनकी भाषा ....................... जान पडती है।
ग- शृंगार और करुण के अवसर पर वह ......... का स्पर्श भी नहीं करती।
घ- क्षत्रिय वटु के बोलने का स्वयम् ........................... मिल जाता है।

4- सत्य/असत्य बताइएः

क- भवभूति के पास अपार शब्द भण्डार है।
ख- लव अरण्यवासी क्षत्रिय वटु नहीं है।
ग- भवभूति में अपूर्व प्रयोग समर्थ्य है।
घ- भवभूति में शब्द चयन की अपूर्व शक्ति नहीं है।

5- सही विकल्प छांटकर लिखिएः

क- भवभूति की पदावली समासबहुला हो जाती है।

क- वीर और रौद्र में ख- अद्भुत और वीभत्स में

ग- शृंगार और करुण में घ- हास्य और भयानक में

## 5.3.2 खण्ड दोः उत्तररामचरित की शैली

संस्कृत साहित्यशास्त्र में वैदर्भी, गौडी, पांचाली और लाटी- इन चार रीतियों का उल्लेख है, किन्तु काव्य साहित्य में प्रायः दो ही रीतियों-वैदर्भी और गौडी का प्रयोग मिलता है। वैदर्भी वह रीति है जिसे माधुर्य के अभिव्यंजक वर्णो से पूर्ण, समास रहित अथवा स्वल्प समास युक्त ललित रचना कहते है-

**माधुर्यव्यंजकैर्वर्णैरचना ललितात्मिका।**
**अवृत्तिरलवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते।। सा.द. 9.2।।**

वैदर्भी का प्रयोग शृंगार अथवा करुण रस में कोमल भावों की अभिव्यक्ति के समय होता है। गौडी वह रीति है जिसे ओजोगुण के अभिव्यंजक वर्णो से पूर्ण, समास बहुल उद्भट रचना कहते हैं- **ओजः प्रकाश कैर्वणै र्बन्ध आडम्बरः पुनः।।समास बहुला गौ......................। (सा.द. 9.3)**

गौडी रीति का प्रयोग वीररस के वर्णन में अथवा प्राकृतिक विकट दृश्यों को प्रस्तुत करते समय किया जाता है। वहाँ ओजगुण का होना आवश्यक होता है। उत्तररामचरित में इन दोनों रीतियों का समुचित प्रयोग मिलता है। करुण रस के वर्णन में कोमल प्रसंग में वैदर्भी रीति का प्रयोग दर्शनीय है।-

**दलति हृदयं गाढोद्वेगं द्विधा तुन भिद्यते**
**वहति विकलः कायो मोहं न मुंजति चेतनाम्**
**ज्वलयति तनूमन्तर्दाहः करोति न भस्मसात्**
**प्रहरति विधि र्ममच्छेदी न कृन्तति जीवितम्।। (3.31)**

वीर रस के वर्णन में गौडी रीति का प्रयोग करते हुए कवि ने ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता आदि सभी वीर रसोचित गुणों को एक साथ मुखरित कर दिया है।

**ज्याजिह्वया वलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रमुदगारिघोरघनघर्घरघोषमेतत्।**
**ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवक्त्रयन्त्रजृम्भाविडम्बिविकटोदरमस्तु चापम्।।**

प्रकृति के विकट एवं भीषण दृश्यों के वर्णन में भवभूति द्वारा गौडी रीति का प्रयोग किया गया है, जिसमें प्रकृति का यथार्थ चित्रण है। कृत्रिमता लेशमात्र भी नहीं है।वास्तविकता और विशदता का ऐसा अनुपम सामंजस्य अन्यत्र दुर्लभ है। कवि की विलक्षणता तो इस बात में है कि उन्होंने प्रकृति के कोमल पहलू के चित्रण में भी उसी समासगर्भित पदावली वाली गौडी रीति का सफल प्रयोग किया है। कुछ विद्वान् भवभूति को गौडी रीति का आचार्य कहकर उनकी रीति को समास बहुला प्रतिपादित करते है; परन्तु यह यथार्थता नहीं है। भवभूति कहीं भी किसी भी भाषा शैली में बँधे हुए दिखाई नहीं देते। उनकी भाषा शैली वास्तव में भावानुसारिणी है, जो कोमल भावों के साथ कोमल और कठोर भावों के साथ कठोर होती चली जाती है। कठोर और उद्धत प्रसंग में भी यदि भावों की मृदुता प्रदर्शित करनी होती है तो भवभूति की भाषा तुरन्त कोमल हो जाती है। चन्द्रकेतु और लव युद्ध के लिए आमने-सामने उद्यत हैं; पर दोनों के हृदय में जब अहेतुक पक्षपात उत्पन्न हो जाता है और स्नेहात्मक तन्तु उनके हृदय को सीने लगता है, तब वे दोनों एक दूसरे पर शस्त्र छोड़ने में चिन्ता और वितर्क करने लगते हैं। भवभूति इन दोनों के वितर्क को इन शब्दों में प्रकट करते हैं-

**किंचाक्रान्त कठोर तेजसि गतिः का नाम शस्त्रं बिना**
**शस्त्रेणापि हि तेन किं न विषयो जायेत यस्येदृशः।**
**किं वक्ष्यत्ययमेव युद्धविमुखं मामुद्यतेऽप्यायुधे**
**वीराणां समयो हि दारुणरसः स्नेहक्रमं वाधते।। 5.19।।**

इस प्रकार भवभूति की शैली में भाषा और भाव का अद्भुत सामंजस्य है। वैदर्भी तथा गौडी दोनों परस्पर विरुद्ध रीतियों पर उनका समान अधिकार है।

## अभ्यास प्रश्न-2

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क- संस्कृत साहित्य शास्त्र में कितनी रीतियों का उल्लेख है?
ख- कौन सी रीति ललित रचना कहलाती है?
ग- कौन सी रीति उद्धटरचना कहलाती है?
घ- उत्तररामचरित में कितनी रीतियों का प्रयोग मिलता है?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क- वीर रस के वर्णन में किस रीति का प्रयोग किया जाता है?
ख- किस प्रसंग में वैदर्भी रीति का प्रयोग होता है?
ग- ध्वन्यात्मकता और चित्रात्मकता किस रसोचित गुण है?
घ- कुछ विद्वान् भवभूति को किस रीति का आचार्य स्वीकार करते हैं?

3- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

क- भवभूति किसी भी भाषा शैली में ............ दिखायी नहीं देते।
ख- भवभूति की भाषा शैली वास्तव में ............................ है।
ग- चन्द्रकेतु और लव ....................... आमने-सामने उद्यत है।
घ- भवभूति की शैली में ........................ अद्भुत सामंजस्य है।

4- सत्य/असत्य बताइए:

क- वैदर्भी रीति माधुर्य के व्यंजक वर्णो से पूर्ण रचना होती है।
ख- भीषण दृश्यों के वर्णन में भवभूति ने वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है।
ग- प्रकृति के कोमल पहलू के चित्रण में भी भवभूति ने गौडी रीति का प्रयोग किया है।
घ- दोनों परस्पर विरुद्ध रीतियों पर भवभूति का समान अधिकार नहीं है।

5- सही विकल्प छांटकर लिखिए:

क- गौडी रीति के प्रयोग में आवश्यक होता है-
क- प्रसाद गुण ख- माधुर्यगुण
ग- कान्ति गुण घ- ओजगुण

## 5.4 सारांश:-

- उत्तररामचरित में विषयानुसारिणी भाषा।
- भयावह दृश्यों के वर्णन में समास संकुल ओजोगुण विशिष्ट।
- कोमल प्रसंगों में असमस्त और सरल।
- सर्वत्र रस, भाव एवं पात्रों के अनुरूप।
- वैदर्भी एवं गौडी रीति का समुचित प्रयोग।
- करुण रस के वर्णन में वैदर्भी।
- वीर रस के वर्णन में गौडी रीति।
- प्रकृति के विकट एवं भीषण दृश्यों के वर्णन में गौडी रीति।
- कोमल पहलू के चित्रण में समास-गर्भित पदावली वाली गौडी रीति।
- शैली में भाषा और भाव का बेजोड़ सामंजस्य।

## 5.5 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| सरस्वती | - | वाणी और ज्ञान की अधिष्ठात्री देवता |
| अनुगामिनी | - | सहचरी |
| वशवर्तिनी | - | आज्ञाकारिणी |
| अनुचरी | - | सेविका |
| पदावली | - | शब्दों का क्रम |
| संशिलष्ट | - | सम्यक् श्लेष से युक्त |
| कलकल | - | अस्पष्टध्वनि |
| सनसनाहट | - | हवा की ध्वनि |
| घर्राहट | - | उल्लुओं और भालु आदि पशुओं की ध्वनि |
| एकच्छत्र | - | प्रभुता को दर्शाने वाला |
| सत्यवाक् | - | सत्य बोलने वाला |
| उक्ति | - | कथन |
| अरण्यवासी | - | जंगल में निवास करने वाला |
| वेदाध्यायी | - | वेदों का अध्ययन करने वाला |
| अभिव्यक्ति | - | प्रदर्शन |
| वैदर्भी रीति | - | माधुर्य व्यंजक वर्णों से पूर्ण, स्वल्प समास युक्त रचना |
| गौडी रीति | - | ओज के प्रकाशक वर्णो से पूर्ण समास बहुल उद्भट रचना |

| | | |
|---|---|---|
| ध्वन्यात्मकता | - | प्रतिध्वनि या कोलाहल से पूर्ण |
| चित्रात्मकता | - | शब्द चित्र तथा अर्थ चित्र से पूर्ण |
| भीषण | - | भयंकर |
| मुखरित | - | बजता हुआ |
| वास्तविकता | - | सच्चाई, यथार्थता |
| विशदता | - | पवित्रता, सुन्दरता |
| सामंजस्य | - | संगति |
| समासगर्भित | - | समस्त, समासों से युक्त |
| पहलू | - | पक्ष |
| स्नेहात्मकतन्तु | - | स्नेह से युक्त, सम्बन्धित |
| उद्धत | - | प्रचण्ड |
| चिन्ता | - | शोकपूर्ण विचार |
| वितर्क | - | युक्ति, विचार-विमर्श |

## 5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

खण्ड-एक

1-

क- अनुगामिनी
ख- भवभूति
ग- एकच्छत्र
घ- वाणी

2-

क- भवभूति उच्च कोटि के कवि हैं।
ख- भवभूति में अपार शब्द ज्ञान भी है।
ग- कलकल करती जान पड़ती है।
घ- संश्लिष्ट होकर समास बहुला हो जाती है।

3-

क- स्वयम्
ख- सनसनाती

ग- समास शैली

घ- आभास

4-

क- सत्य

ख- असत्य

ग- सत्य

घ- असत्य

5- वीर और रौद्र में

खण्ड-दो

1-

क- चार

ख- वैदर्भी

ग- गौडी

घ- दो

2-

क- वीर रस के वर्णन में गौडी रीति का प्रयोग किया जाता है।

ख- कोमल प्रसंग में वैदर्भी रीति का प्रयोग होता है।

ग- ध्वन्यात्मकता और चित्रात्मकता वीररसोचित है।

घ- कुछ विद्वान् भवभूति को गौडी रीति का आचार्य स्वीकार करते है।

3-

क- बँधे हुए

ख- भावानुसारिणी

ग- युद्ध के लिए

घ- भाषा और भाव का

4-

क- सत्य

ख- असत्य

ग- सत्य

घ- असत्य

5- ओजगुण

## 5.7 सन्दर्भ ग्रन्थः-

1- भवभूतिः उत्तररामचरितम्, व्याख्या-डॉ0 रमाकान्त त्रिपाठी, (2008) चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी-1

2- भवभूति, उत्तररामचरितम् (सम्पूर्ण), व्याख्या- आचार्य प्रभुदत्त स्वामी, (1988) ज्ञान प्रकाशन, मेरठ-2

## 5.8 सहायक पाठ्य सामग्रीः-

1-भरतमुनि, उत्तररामचरितम्, व्याख्या- डॉ0 कृष्णकुमार शुक्ल (1986-87) साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

## 5.9 निबन्धात्मक प्रश्नः-

1. ‘‘भवभूति का भाषा पर एकच्छत्र अधिकार है’’ इस कथन को सिद्ध कीजिए?

2. उत्तररामचरित की भाषा शैली की विवेचना कीजिए?

3. ‘भवभूति वैदर्भी तथा गौडी रीति के आचार्य हैं’ इस कथन को उत्तररामचरित के आधार पर प्रमाणित कीजिए ?

# द्वितीय सत्रार्द्ध / SEMESTER- II

## चतुर्थ खण्ड

## उत्तररामचरितम् प्रथम एवं द्वितीय अंक

# इकाई 1: उत्तररामचरितम् प्रथम अंक का पूर्वार्द्ध

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मुख्य भाग: खण्ड एक (श्लोक 1 से 13 तक)
मूल पाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी,
1.4 खण्ड दो (श्लोक 14 से 26 तक)
मूल पाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी,
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 1-1 प्रस्तावना:-

भारतीय नाट्य एवं नाट्यशास्त्र से सम्बन्धित यह प्रथम इकाई है। इसमें महाकवि भवभूति द्वारा रचित 'उत्तररामचरित ' नाटक के प्रथम अंक के पूर्वार्द्ध की विषयवस्तु है । यहाँ आप नाटक की प्रस्तावना तथा चित्रवीथी के प्रारम्भिक भाग का अध्ययन करेंगे।

सूत्रधार अपनी नट मण्डली के साथ अयोध्या में प्रवेश करता है कि राज्याभिषेक उत्सव में अभिनय दिखाकर राम को प्रसन्न करेगा., परन्तु वहाँ आने पर उसे पता लगता है कि उत्सव समाप्त हो गया है। वह राजद्वार में जाकर राम को अभिनय दिखाने का विचार करता है। वहाँ पहुँचने पर उसे विदित होता है कि पिता जनक के चले जाने पर सीता जी बहुत उदास हैं और राम उन्हें सान्त्वना देने के लिए राजद्वार से उठकर अन्तःपुर में चले गये हैं ।

सीता को सान्त्वना देते हुए राम प्रवेश करते हैं । वहीं ऋष्यशृंग के आश्रम से आये हुए अष्टावक्र वसिष्ठादि गुरुजनों का सन्देश देते हैं । तभी लक्ष्मण एक चित्रवीथी लेकर उपस्थित होते हैं। राम और सीता चित्रों को देखते हैं।इस इकाई के अध्ययन के बाद आप नाटक की प्रस्तावना को समझा सकेंगे तथा चित्रवीथी के विविध प्रसंगों का सम्यक् विश्लेषण कर सकेंगे ।

## 1.2 उद्देश्य:-

**प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप** –

- नट तथा सूत्रधार की भूमिका सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर पाएंगे ।
- अनुष्ठान का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
- ऋषि वसिष्ठ का सन्देश समझ सकेंगे ।
- राजकीय कर्तव्यों की पहचान कर सकेंगे ।
- सीता के प्रति राम की सान्त्वना को जान सकेंगे ।
- पारिवारिक शिष्टाचार की पहचान कर पाएंगे ।
- वनवासी तपस्वियों के जीवन को पहचान पाएंगे ।
- वानप्रस्थ धर्म को पहचान सकेंगे ।
- भगीरथ के राष्ट्रीय योगदान को जान सकेंगे ।
- गंगा का महत्व समझ सकेंगे ।
- गृहस्थ तपस्वियों के जीवन को पहचान पांएगे ।

# 1.3 मुख्य भाग:खण्ड एक - (श्लोक 1 से 13 तक) मूल पाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

**इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमो वाकं प्रशास्महे।**
**विन्देम देव तां वाचममृतामात्मनः कलाम् ।।1।।**

**अर्थ-** राम चरित के पूर्व वक्ताओं को सर्वप्रथम नमस्कार कहकर हम (ईश्वर से) प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर! आपकी अंशभूत अमृत तुल्य संसार को आह्लादित करने वाली उस वाणी को हम भी प्राप्त करें।

**व्याख्या**- लोकोत्तर चरित पर आधारित नाटक का शुभारम्भ करते हुए भवभूति अपने कार्य को निर्विघ्न पूर्ण करने के लिए सर्व प्रथम मंगलाचरण करते हैं। शास्त्रीय मान्यता है कि ग्रन्थ के आदि, मध्य और अन्त में मंगल करना चाहिए इसे शिरोधार्य करते हुए महाकवि भवभूति ने यह मंगल किया है। ऐसा गम्भीर और पूर्ण मंगलाचरण संस्कृत के अन्य किसी भी काव्य ग्रन्थ में नहीं है।

**टिप्पणीः-**

- पूर्वेभ्यः- यहाँ पूर्व शब्द अपने से प्रथम उत्पन्न होने वालों का बोधक है।
- इदं कविभ्यः- पूर्व कवि शब्द से कवि ने पुराने महाकवियों वाल्मीकि,व्यास कालिदास आदि का ही ग्रहण किया है।
- नमोवाकम्- यह एक ही पद है। नमस् पूर्वक वच् धातु से णमुल् प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है।
- प्र शास्महे- ये दो स्वतन्त्र पद हैं। ‘ प्र ‘ त्वरा का बोधक है। ‘शास्महे’ शास् धातु से वर्तमान में लट् लकार, उत्तम पुरुष बहुवचन का रूप है।
- विन्देम- विद्लृ धातु से प्रार्थना में लिङ् लकार, उ0,पु0, बहुवचन ।
- देव!- संबोधन पद है ।

**यं ब्रह्माणमियं देवी वाग्वश्येवानुवर्तते।**
**उत्तरं रामचरितं तत्प्रणीतं प्रयोक्ष्यते ।।2।।**

**अर्थ-** जो काव्य सृष्टि में स्वयं ब्रह्मा है । जिनका अनुसरण यह वाग्देवता सरस्वती उनकी वशवर्तिनी होकर करती है। उन्हीं भवभूति द्वारा रचित ‘उत्तर रामचरित’ का हम अभिनय प्रस्ततु कर रहे हैं।

**व्याख्या-** जो ब्रह्मा प्रजापति की अपेक्षा भी अद्भुत काव्यमयी सृष्टि करने वाले हं । सरस्वती जिनकी इच्छानुचरी हो गयी है। उन महाकवि भवभूति द्वारा रचित प्रजानुरंजन के लिए प्राणप्रिया सीता का भी निर्वासन रूप लोकोत्तर राम का चरित प्रस्तुत कर रहे हैं।

**टिप्पणी**-

- ब्रह्माणम्-यहाँ सूत्रधार ने कवि को प्रथक् न कहकर ब्रह्म में ही उसका अध्यवसान कर दिया है।
- वश्या इव- यहाँ वश् धातु से यत् प्रत्यय हुआ है; जिससे इसका अर्थ कवि की वशवर्तिनी होता है।
- उतररामचरितम्-यहाँ कवि ने 'उत्तरम्' का 'चरितम्' से सीधा सम्बन्ध वोध कराने के लिए दोनो पदों को प्रथक् प्रथक् कहा है।

**वशिष्ठाधिष्ठिता देव्यो गता रामस्य मातरः।**
**अरुन्धतीं पुरस्कृत्य यज्ञे जामातुराश्रमम् ।।3।।**

**अर्थ-** वसिष्ठ की देख रेख में राम की माताएँ अरुन्धती को आगे करके अपने जामाता ऋष्यशृंग के यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए उनके आश्रम में गयी हैं।

**व्याख्या**- वसिष्ठ मन्त्रद्रष्टा ऋषि हैं। इनके संरक्षण में अरुन्धती के साथ राज माताओं का गमन यज्ञ की पूर्णता के उद्देश्य से था। यज्ञ में गुरु और गुरुपत्नी को लेकर पहुँचना राजमाताओं ने ऋष्यशृंग पर छोड़ दिया था। यज्ञ में जाना ही राजमाताओं का प्रधान लक्ष्य था।

**टिप्पणी**-

- वसिष्ठाधिष्ठिताः- अतिशयेन वस्ता इति वसिष्ठः, तेन अधिष्ठिता कौशल्यादय इत्यर्थः।
- देव्यः- रामस्य मातरः का विशेषण है।

**कन्यां दशरथो राजा शान्तां नाम व्यजीजनत् ।**
**अपत्यकृतिकां राज्ञे रोमपादाय तां ददौ।। 4।।**

**अर्थः-** महाराज दशरथ ने शान्ता नाम की कन्या को उत्पन्न किया था। उसे कृत्रिम पुत्री के रूप में राजा रोमपाद को दे दिया था।

**व्याख्याः**- स्वर्ग पाताल आदि लोको में जिनके रथ की अप्रतिहत गति थी; ऐसे राजा दशरथ ने शान्ता नामक पुत्री को दिव्य उपाय से उत्पन्न किया था। वह उन्होंने गोद ली हुई सन्तान के रूप में अपने मित्र राजा रोमपाद को सौंप दी।

**टिप्पणीः-** अपत्यकृतिकाम्- गोद ली हुई। दूसरे के लिए अपत्य को दूसरा दाय भाग में प्रतिपादित विधि के अनुसार अपना अपत्य बना लेता है, उसे कृतक अपत्य कहा जाता है।

**सूत्रधारः-**

**सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता।**
**यथा स्त्रीणां तथा हि वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः।।5।।**

**अर्थ:-** सूत्रधार- जैसी हो, वैसी व्यवहार में लानी चाहिए। निन्दा न हो, यह कब सम्भव है ? क्यों कि स्त्रियों की साधुता की तरह वाणी की साधुता के विषय में भी लोग दुर्जन होते हैं।

**व्याख्या:**- निर्दोष या सदोष के फेर में न पड़कर जैसी जिस समय योग्य हो वैसी ही स्तुति पद्धति को व्यवहार में लाना चाहिए। जैसे स्त्रियों की साधुता के विषय में लोग कम दुर्जन नही होते, वैसे साधु वाणी भी दुर्जनों द्वारा निन्दित होती है।

**टिप्पणी:**- सर्वथा व्यवहर्तव्यम्- सर्वेण प्रकारेण इति सर्वथा सर्वथाल् ।

व्यवहर्तुं योग्यं व्यवहर्तव्यम्, विअवहृतव्य। सूत्रधार के रूप में कवि ने स्वयं अपने नाटक विज्ञान को प्रस्तुत करते हुए यहां अपनी निःशंकता व्यक्त की है। उन्हें दुर्जनों द्वारा किये जाने वाले दोषारोपण का कोई भय नही है ।

**नटः- अति दुर्जन इति वक्तव्यम्।**
**देव्या अपि हि वैदेह्याः सापवादो यतो जनः।**
**रक्षोगृहस्थितिर्मूलमग्निशुद्धौ त्वनिश्चयः।।6।।**

**अर्थ:-** नट- अति दुर्जन होते हैं, यह कहिये ।

क्योंकि जब लोग देवी सीता के भी निन्दक हैं (तब उन्हें अति दुर्जन ही कहना चाहिए) राक्षस के घर में सीता का रहना निन्दा का निश्चित कारण है। अग्नि शुद्धि के विषय में लोगों का निश्चय नहीं है।

**व्याख्या:**- सीता देहाभिमान शून्य ज्ञाननिधि जनक की पुत्री तथा अयोनिज होने से जन्म से ही पवित्र थीं। वे लंका में न कि रावण के घर में अनिच्छा से निरुद्ध थीं। दूसरे उनकी अग्नि शुद्धि को कर्णपरम्परा जानकर भी लोग निश्चय के लिए यत्न नहीं कर रहे थे। केवल निन्दा कर रहे थे। अत एव अति दुर्जन कहे जाने योग्य हैं। यहाँ वैदेही आदि साभिप्राय विशेषण प्रस्तुत होने के कारण परिकर अलंकार है।

**टिप्पणी:**-'देव्या अपि हि वैदेह्या.....' इत्यदि वाक्य में ये दोनों अलग-अलग प्रयुक्त हुए हैं। इनमे सेकोई एक निरर्थक है या फिर उसका कोई दूसरा अभिप्राय है।

**नटः- स्नेहात् सभाजयितुमेत्य दिनान्यमूनि**
**नीत्वोत्सवेन जनकोऽथ गतो विदेहान् ।**
**देव्यास्ततो विमनसः परिसान्त्वनाय**
**धर्मासनाद् विशति वासगृहं नरेन्द्रः ।।7।।**

**अर्थः**- अभिनन्दन के लिए स्नेहवश आकर और इतने दिन उत्सव के साथ बिताकर जनक आज अपने देश को गये हैं। इससे उदास मना देवी सीता को सान्त्वना देने के लिए महाराज राम धर्मासन छोड़कर अन्दर घर में चले गये हैं।

**व्याख्याः**- अपनी पुत्री सीता के प्रति स्नेह के कारण जनक मिथिला से अयोध्या आये और उत्सव के आरम्भ से समाप्ति पर्यन्त निवास करके वापस गये। अपने पिता जनक के ताजे विछोह के कारण सीता उदास हो गयीं। उनके विषाद की चिन्ता से से चिन्तित होकर राम उन्हें सान्त्वना देने के लिए वासगृह में चले गये।

**टिप्पणीः**- यह श्लोक प्रकृत नाटक का प्रस्तावना श्लोक है। इसका आरम्भ विमना सीता को सान्त्वना देते हुए राम की घटना से होता है। यह प्रयोगातिशय नामक प्रस्तावना है।

**रामः- किन्त्वनुष्ठाननित्यत्वं स्वात्रन्त्र्यमपकर्षति।**
**संकटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायैर्गृहस्थता ।।8।।**

**अर्थः**- राम- किन्तु अनुष्ठान की अनिवार्यता स्वतन्त्रता को क्षीण करती है। कभी न बुझने वाली एक ही अग्नि में सदा होम करने वालों का गृहस्थी होकर रहना वास्तव में बाधाओं से युक्त होता है ।

**व्याख्याः**- श्रीराम सान्त्वना देते हुए सीता से कहते हैं कि विश्वास करो कि पिता (जनक) जी स्नेह की कमी के कारण हमें छोड़कर नहीं गये हैं। वास्तव में अनुष्ठान की नित्यता के कारण उनका जाना अनिवार्य था। उनकी इच्छा तो अभी न जाने की रही होगी। परन्तु अनुष्ठान की नित्यता स्वेच्छा को चलने नहीं देती।

**टिप्पणीः**- आधान की हुई अग्नि में किये जाने वाले होम को अनुष्ठान कहते हैं। एक ही अग्नि में नित्य होम करने वाले अहिताग्नि कहलाते है ।

अष्टावक्र-(उपविश्य) अथ किम्? देवि, कुलगुरुर्भगवान् वसिष्ठस्त्वामि दमाह-

**विश्वंभरा भगवती भवतीमसूत**
**राजा प्रजापतिसमो जनकः पिता ते।**
**तेषां वधूस्त्वमसि नन्दिनि! पार्थिवानां**
**येषां कुलेषु सविता च गुरुर्वयं च ।। 9।।**
**तत्किमन्यदाशास्महे। केवलं वीरप्रसवा भूयाः।**

**अर्थः**- अष्टावक्र -(बैठकर) भला क्यों नहीं? देवि! आपके कुलगुरु भगवान् वसिष्ठ ने आपके लिए कहा है कि- 'वेटी! भगवती जगद्धात्री पृथ्वी ने तुम्हें जन्म दिया है और प्रजापति के समान महाराज जनक तुम्हारे पिता हैं। उन राजाओं की तुम वधू हो कि जिनके कुल में सूर्य और हम गुरु हैं; तब तुम्हें और क्या आशीष दें (केवल यही आशीष देते हैं कि) तुम वीर पुत्रों को जन्म देने वानी बनो।'

**व्याख्याः**- प्रस्तुत श्लोक वाक्य वसिष्ठ द्वारा दिये जाने वाले आशीर्वाद का पूर्वांश है। जब माता विश्वंभरा है तो पुत्री में विश्व के भरण की योग्यता स्वभावसिद्ध है । इसी प्रकार जब पिता प्रजापति के समान प्रजापालक हैं तो पुत्री में भी प्रजा के प्रति अनुराग होना स्वाभाविक है। जिस कुल का प्रादुर्भाव सविता से हुआ है ,जिसके कुलगुरु स्वयं वसिष्ठ हैं। उसके कुल की वधू को किस वस्तु का अभाव हो सकता है? अतः वसिष्ठ ने इस वाक्य को कहने के बाद 'किमन्यदाशास्महे...' कहा है।

**टिप्पणीः**-यहाँ 'कुलेशु' इस बहुवचन का प्रयोग यह दिखाने के लिए है कि यद्यपि वैवस्वत, इक्ष्वाकु, रघु आदि के रूप में इस कुल की कई पीढ़ियां हो गयी हैं, परन्तु सबका मूल प्रवर्तक एक सूर्य ही है।

आषास्महे - आङ् पूर्वक षास् धातु का लट्, उ0 पु0 बहुवचन का रूप है।

रामः-अनुगृहीता स्मः।

**लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।**
**ऋशीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति ।।10।।**

**अर्थ**- राम- हम अनुगृहीत हुए। क्यों कि - लैकिक साधुओं की वाणी अर्थ के पीछे चलती है; किन्तु वैदिकऋशियों की वाणी के पीछे अर्थ स्वयं दौड़ता है।

**व्याख्या**- लोक में सामान्यतः सुलभ सज्जनों के वचन विद्यमान वस्तु या पदार्थ का अनुसरण करते हैं। वे जैसा देखते हैं वैसा कहते हैं, किन्तु प्राचीन मन्त्रद्रश्टा ऋशियों तथा वसिश्ठ आदि मुनियों की वाणी के पीछे अर्थ वेग से दौड़ता है।

**टिप्पणी** - हि-यह हेत्वर्थ अव्यय है। यह संस्कृत में हिन्दी के 'क्यों कि' स्थान में प्रायः प्रयुक्त होता है ।

आद्यानाम्- आदौ भवा आद्याः तेशाम्- आद्यानाम्।

ऋशीणाम्-ऋशन्ति जानन्ति तपसा मन्त्रानिति ऋशयस्तेशाम्-ऋशीणाम्।

अश्टावक्रः- श्रूयताम्-

**जामातृयज्ञेन वयं निरुद्धास्त्वं बाल एवासि नवं च राज्यम्।**
**युक्तःप्रजानामनुरंजने स्यास्तस्माद्यषो यत्परमं धनं वः।। 11।।**

**अर्थः**- अश्टावक्र- सुनिये- हम ऋश्यषृंग के यज्ञ के कारण यहाँ घिरे हुए हैं, तुम बालक ही हो और राज्य नवीन है। प्रजा के अनुरंजन में तत्पर रहना। उससे तुम्हें वह यष प्राप्त होगा, जो तुम्हारा वास्तविक धन है।

**व्याख्याः**- भगवान् वसिष्ठ ने राम को जो सन्देष भेजा है, उसे अश्टावक्र सुना रहे हैं कि कि-हम वसिश्ठ आदि ऋशि जामाता ऋश्यषृंग का यज्ञ सम्पन्न कराने के लिए यहाँ ठहरने को विवष हैं। तुम(राम) स्वल्पवयस्क एवम् अनुभवहीन हो। नये राज्य में प्रजा विप्लव सम्भव है। अतः सर्वथा प्रजा

को प्रसन्न करने में निरत रहना। इससे तुम्हें संसार में चिरस्थायी यश प्राप्त होगा। सम्पूर्ण राजकार्य की सफलता से उत्पन्न धन ही राजा का परम लाभ होता है।

**टिप्पणी:**- त्वं बाल एवासि- (तुम अभी बालक ही हो) यद्यपि राम इस समय बालक नहीं हैं तथापि वसिश्ठ स्नेहवष उन्हें बालक ही समझते हैं।

जामातृयज्ञेन- इत्यादि वाक्यों द्वारा वसिश्ठ ने राम को 'बड़ों के मार्ग दर्षन से रहित, अनुभवहीन नया राजा कहा है। कुलगुरु के लिए यह आवष्यक है वे अपने नये राजा को उसके कर्तव्य का बोध करायें।।

रामः-यथा समादिषति भगवान् मैत्रावरुणिः

**स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।**
**आराधनाय लोकस्य मुंचतो नास्ति मे व्यथा ।।12।।**

**अर्थः-** राम-भगवान् वशिष्ठ का जैसा आदेष है (वैसा ही होगा )

'स्नेह, दया और सुख को, यहाँ तक कि जानकी को भी, लोकाराधन के लिए छोड़ते हुए मुझे कोई दुःख न होगा।

**व्याख्या**-यहाँ कुलगुरु के आदेश से उत्साहित राम स्वजन सम्बन्धी स्नेह, विपन्न बन्धु सम्बन्धी दया, और अपने सभी सांसारिक सुख लोकाराधन के लिए ढुकराने का उत्साह व्यक्त कर रहे हैं। राम के लिए स्नेह, दया और सौख्य का आलम्बन जानकी के सिवाय संसार में दूसरा नहीं है। जानकी उनकी सबसे अधिक स्नेहपात्र, दयापात्र और सौख्य साधन हैं, परन्तु वे लोकाराधन के लिए उन्हें भी छोड़ने के उद्यत हैं।

**टिप्पणी**- स्नेहं दयां च सौख्यं च- ये मन की सुखात्मक वृत्ति के तीन नाम हैं। हृदय की बाह्य द्रुति को स्नेह, आन्तरिक द्रुति को दया और केवल सुखितावस्था को सौख्य कहते हैं।

**उत्पत्तिपरिपूतायाः किमस्याः पावनान्तरैः।**
**तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः।।13।।**

**अर्थः**- ये तो जन्म से ही शुद्ध हैं, दूसरे पदार्थ इन्हें क्या शुद्ध करेंगे? तीर्थ का जल और अग्नि भी कहीं दूसरी वस्तुओं द्वारा शुद्ध किये जाते हैं?

**व्याख्याः**- अपने जन्म से ही पवित्र, देवयज्ञ से उत्पन्न अयोनिजा सीता को अन्य शोधकों से क्या? निसर्गशुद्ध वस्तु अन्य पदार्थों से शुद्ध करना उचित नहीं। जैसे- हरिद्वार आदि में 'गंगा जल और अग्नि ये दोनों अन्य किसी शोधक पदार्थ से शुद्धि योग्य नहीं हैं।

**टिप्पणीः**- तीर्थोदकं च वह्निश्च- अयोनिजा सीता की शुद्धि तीर्थ जल और अग्नि के समान निर्मल है। अत एव यहाँ द्रष्टान्त अंलकार है।

## अभ्यास प्रश्न-1

1. एक वाक्य में उत्तर दीजिएः-

क- उत्तररामचरित नाटक राम के किस चरित पर आधारित है?

ख- वसिष्ठ की देख रेख में राम की माताएँ कहाँ गयीं?

ग- सूत्रधार ने भवभूति को काव्य सृष्टि में क्या कहा है?

घ- सीता को किसने जन्म दिया है?

2. एक शब्द में उत्तर दिजिएः-

क- राजा धर्मासन छोड़ कर कहाँ गये?

ख- अनुष्ठान की अनिवार्यता किसे क्षीण करती है?

ग- प्रजापति के समान राजा कौन है?

घ- लौकिक साधुओं की वाणी किसके पीछे दौड़ती है?

3.सत्य/असत्य बताइएः-

क- 'हि' हेत्वर्थ अव्यय है।

ख- शान्ता दशरथ की पुत्री थीं।

ग- वसिष्ठ चन्द्रवंश के कुलगुरु थे।

घ- सीता जन्म से शुद्ध नहीं हैं।

## 1.4 खण्ड दो (श्लोक 14 से 26 तक) मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

**क्लिष्टो जनः किल जनैरनुरंजनीय**
**स्तन्नो यदुक्तमशुभं च न तत्क्षमं ते ।**
**नैसर्गिकीसुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा**
**मूर्ध्निस्थितिर्न चरणैरवताडनानि ।।14।।**

**अर्थः**- दुःखी प्रियजन स्वजनों द्वारा दुःख बांटकार बहलाने योग्य होता है। सो जो कहा गया, वह अग्नि शुद्धि रूप वचन न हमारे लिए शुभ है और न ही तुम्हारे लिये योग्य है। सुगन्धित पुष्प की मस्तक पर की गई स्थापना स्वाभाविक है, पैरों से ठोकरें मारना स्वाभाविक नहीं है।

**व्याख्याः**- अपना प्रियजन यदि किसी कारणवश दुःखी हो तो अपने लोगों का यह कर्तव्य है कि वे अनुकूल आचरण से उसे प्रसन्न रखने का प्रयास करें। इसलिए तुम्हारी अग्नि शुद्धि की बात जो लक्ष्मण के मुंह से निकल गयी है, वह हम लोगां के लिये शुभ नहीं है। हमारी दृष्टि में तुम एक सुगन्धित पुष्प जैसी हो, हम तुम्हें सदा मस्तक पर रखने योग्य समझते हैं। अतः तुम्हें ठुकराने की कभी कल्पना भी नहीं कर सकते।

**टिप्पणीः** - अनुरंज् अनीयर्= अनुरंजनीय।

**रामः** - वन्दस्व देवि, दिव्यास्त्राणि।

**ब्रह्मादयो ब्रह्महिताय तप्त्वा परःसहस्रं शरदां तपासि।**
**एतान्यदर्शन्गुरवः पुराणाः स्वान्येव तेजांसि तपोमयनि ।।15।।**

**अर्थः**- राम - देवि ! इन दिव्य अस्त्रों की वन्दना करो।
बह्मा आदि पूर्व गुरुओं ने वेद प्रतिपादित धर्म की रक्षा के लिए हजार वर्ष से भी अधिक समय तक तप करके अपने तप के तेज जैसे इन दिव्य अस्त्रों के दर्शन किये।

**टिप्पणीः**- प्रहार करने की गोपनीय विधियों के साथ जृम्भक नाम के दिव्यास्त्र शत्रु सेना को निगल जाते थे। ये कृशाश्व मुनि से विश्वामित्र को प्राप्त हुए थे। और उन्होंने राम को प्रदान किये थे। ये चेतन देवात्मा की तरह काम करते थे।

**लक्ष्मणः** - आर्ये ! पश्य पश्य।

**सम्बन्धिनो वसिष्ठादीनेष तातस्तवार्चति।**
**गौतमश्य शतानन्दो जनकानां पुरोहितः ।।16।।**

**अर्थः**- लक्ष्मण - भाभी जी ! देखिये , देखिये -
ये आपके पिताजी वसिष्ठ आदि समधियों की पूजा कर रहे हैं और ये जनक पुरोहित गौतम पुत्र शतानन्द हैं।

**व्याख्याः**- लक्ष्मण सीता को चित्र दिखाते हुए कहते हैं कि इसमें राजा जनक अपने समधियों का पूजन कर रहे हैं और उनके पुरोहित शतानन्द उनके समीप बैठे हुए हैं। इस चित्र में पुरोहित शतानन्द जी जनक के साथ दिखाये गये हैं।

टिप्पणी - वसिष्ठादीन्- वसिष्ठ आदिर्येषान्ते वसिष्ठादयस्तान् वसिष्ठप्रभृतीन्,

रामः - सुश्लिष्टमेतत्।

**जनकानां च रघूणां च सम्बन्धः कस्य न प्रियः।**
**यत्र दाता ग्रहीता च स्वयं कुशिकनन्दनः ।।17।।**

**अर्थ:-** राम - यह सुन्दर संयोग है।
जनकों और रघुओं का यह सम्बन्ध किसको प्रिय नहीं है, जिसमें विश्वामित्र ही स्वयं एक ओर से देने वाले और वही दूसरी ओर से लेने वाले हैं।

**व्याख्या:-** जनकवंशियों और रघुवंशियों का वर पिता और कन्या पिता रूपी रिश्ता किसको प्रतीतिकर नहीं है अर्थात् सभी को प्रिय है। इसमें विश्वामित्र आप ही कन्या पक्ष की ओर से देने वाले और वर पक्ष की ओर से लेने वाले हैं।

**टिप्पणी:-** यहाँ 'न' शब्द निषेध अर्थ में होता हुआ भी 'काकू' से विधि अर्थ में बदल जाता है, जिसका अर्थ - 'सभी को प्रिय है' प्रकट होता है।

**रामः- समयः स वर्तत इवैष यत्र मां**
**समनन्दयत्सुमुखि! गौतमार्पितः।**
**अयमागृहीतकमनीयकङ्कण-**
**स्तव मूर्तिमानिव महोत्सवः करः।।18।।**

**अर्थ:-** राम- हे सुमुखि! मानो यह वही समय है जिस समय गौतम द्वारा मुझे सौंपा गया आनन्द की साक्षात् मूर्ति, सुन्दर कंगना बंधा तुम्हारा यह हाथ मेरे लिये आनन्ददायी हुआ था।

**व्याख्या:-** हे प्रसन्नमुखी सीते! इस चित्र को देखते हुए अनुभव हो रहा है मानो यह वही समय है जब कि तुम्हारा कंगना बंधा हुआ हाथ शतानन्द पुरोहित द्वारा मेरे हाथ में सौंपा गया था और मुझे आनन्ददायक हुआ था।

**टिप्पणी**:- सुमुखि-शोभमानं मुखं यस्याः सा, तत् सम्बुद्धौ हे सुमुखि! अयमागृहीतकमनीयकंकणः- आगृहीतं कमनीयं कंकणं यस्मिन्।

**जीवत्सु तातपादेषु नूतने दारसंग्रहे।**
**मातृभिश्चिन्त्यमानानां ते हि नो दिवसा गताः।।19।।**

**अर्थ:-** पिता जी जिन दिनों जीवित थे, नया हम लोगों का विवाह हुआ था। हमारी सब प्रकार की चिन्ता माताएँ ही किया करती थीं। हमारे वे दिन सर्वथा चले गये।

**व्याख्या-:** पूज्य पिता जी के जीवित रहते हुए नई-नई बहुएँ आने के सुखद वातावरण में माताओं द्वारा ही जब हमारी हर बात की फिक्र रखी जाती थी। हमारे वे दिन अब सर्वथा बीत चुके हैं।

**टिप्पणी**:- यहाँ पिता जी के जीवित रहने से राजकाज की ओर से निश्चिन्तता आदि। 'वे दिवस सर्वथा चले गये'-इससे विषाद की व्यंजना की गई है।

इयमपि तदा जानकी।

**प्रतनुविरलैः प्रान्तोन्मीलन्मनोहरकुन्तलै-**

**दशनकुसुमै र्मुग्धालोकं शिशु र्दधती मुखम् ।**
**ललितललितै ज्योंत्सनाप्रायैरकृत्रिमविभ्रमै-**
**रकृत मधुरैरम्बानां मे कुतूहलमङ्गकैः ।।20।।**

**अर्थः**-यह जानकी भी उन दिनों -शिशु ही थीं। अपने छोटे और छीदे-छीदे चारो ओर बिखरे मनोहर केशों से युक्त, फूल की कली जैसे दांतों से सुशोभित भोली छवि वाले मुख को धारण करती हुई अपने सुन्दर-सुन्दर चांदनी जैसे गौरे, बनावट रहित हाव भावों वाले, बाल सुलभ कोमलता भरे प्यारे-प्यारे अंगों से हमारी माताओं के मन में कुतूहल किया करती थीं ।

**व्याख्या**:- उन दिनों यह सीता भी शिशु ही थीं। हमारी सब माताएँ इनके छोटे छोटे दातों और केशों से युक्त भोले चेहरे को और इनके बालोचित प्यारे-प्यारे कोमल अंगो को उत्कण्ठावश देखती रहती थीं। सबका जानकी पर कितना दुलार था? कैसे थे हम सब के वे दिन? समय कितना परिवर्तनशील है? यह परिवर्तन भविष्य मे क्या रंग लाये? कौन जानता है।

**टिप्पणी**:- शिशुः- भवभूति ने अल्पायु की दृष्टि से सीता को शिशु कहा है।

**इङ्गुदीपादपः सोऽयं शृङ्गवेरपुरे पुरा।**
**निषादपतिना यत्र स्निग्धेनासीत्समागमः।।21।।**

**अर्थः**- 'यह शृङ्गवेर पुर में वह हिंगोट का वृक्ष है जहाँ पहले (वनवास के दिनों में) स्नेही मित्र निषादराज से हमारी भेंट हुई थी ।

**व्याख्या**:- यह सामने (चित्र में) गुह नगर में पूर्वानुभूत हिंगोट नामक प्रसिद्ध तापस वृक्ष है जिसके समीप पहले प्रिय मित्र गुहराज से मिलन हुआ था।

**टिप्पणीः**- यह कविकृत नाटकीय निर्देश है। पादप की ओर ध्यान आकृष्ट कर कवि ने कैकेयी वृतान्त से सीता का ध्यान हटाया है।

**लक्ष्मणः- पुत्रसंक्रान्तलक्ष्मीकैर्यद्वृद्धेक्ष्वाकुभिर्धृतम्।**
**धृतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकव्रतम् ।।22।।**

**अर्थः**- लक्ष्मण- पुत्रों को राज काज सौंपकर इक्ष्वाकुवंश के बूढ़े राजा जिस वनवासी व्रत को धारण करते थे। वह पवित्र व्रत आर्य ने बाल्यावस्था में ही धारण कर लिया है।

**व्याख्या:-** अपने पुत्रों को राज काज सौंप देने वाले बूढे इक्ष्वाकुओं द्वारा जो धारण किया गया था। वह पवित्र वानप्रस्थ व्रत राम ने बाल्यावस्था में ही धारण कर लिया है।

**टिप्पणी**:- पुत्रसंक्रान्तलक्ष्मीकैः- पुत्रेषु संक्रान्ता लक्ष्मी राज्यश्री येषां ते पुत्रसंक्रान्त लक्ष्मीकाः इक्ष्वाकवः तैः।

रामः- रघुकुलदेवते! नमस्ते।

**तुरगविचयव्यग्रानुर्वीभिदःसगराध्वरे**
**कपिलमहसा रोषात्प्लुष्टान्पितुश्च पितामहान्।**
**अगणिततनूतापस्तप्त्वा तपंसि भगीरथो**
**भगवति! तव स्पृष्टानद्भिश्चिरादुददीधरत् ।।23।।**

**अर्थ:-** राम- रघुकुल की देवी! तुम्हें नमस्कार है। 'हे भगवती (गङ्गे)! सगर के यज्ञ में यज्ञीय अश्व को खोजने में व्यग्र, भमि को खोद कर पाताल में पहुँचे तथा वहाँ क्रुद्ध कपिल मुनि के तेज से दग्ध हुए, अपने पिता के भी पितामहों का भगीरथ ने शरीर के कष्टों की परवाह न कर भारी तप करके चिरकाल के अनन्तर आपके जल का स्पर्श कराकर उबारा था।

**व्याख्या**:- हे ऐश्वर्यशालिनि गंगे! हमारे पूर्वज सगर नाम के महाप्रतापी राजा कभी अयोध्या में राज्य करते थे। उनके अश्वमेध यज्ञ में छोड़े गये घोडे को इन्द्र ने चुराकर पाताल में कपिल मुनि के आश्रम में रख दिया था। सगर के पुत्र वहाँ पहुँचे और मुनि को ही घोड़े का अपहरण कर्ता समझकर उन्हें अपमानित किया। क्रुद्ध कपिल मुनि ने उन्हें अपने तेज से भस्म कर दिया। सगर की पांचवी पीढ़ी में उत्पन्न भगीरथ ने घोर तप करके आप को पृथ्वी पर उतारा और आपके पवित्र जल से अपने पूर्वजों का उद्धार किया।

**टिप्पणी**:- पितुश्च पितामहान्- यहाँ 'च' शब्द अपि शब्द के अर्थ में प्रयुक्त है। अतः इस वाक्य का अर्थ होगा-'पिता के भी पितामहों को' ।

रामः- अयि, कथं विस्मर्यते?

**अलसललितमुग्धान्यध्वसम्पातखेदा-**
**दशिथिलपरिरम्भै र्दत्तसंवाहनानि।**
**परिमृदितमृणाली दुर्बलान्यङ्गकानि**
**त्वमुरसि मम कृत्वा यत्र निद्रामवाप्ता ।।24।।**

**अर्थ:-** राम-अरे! 'वह स्थान' कैसे भुलाया जा सकता है?

जहाँ तुम रास्ते की थकान के कारण शिथिल हुए अपने उन सुन्दर सुकुमार अंगों को, जो कि मसली हुई कमलिनी जैसे दुर्बल हो गये थे , मेरे द्वारा गाढ़ आलिंगन देकर दबाए जाने पर मेरी छाती पर रखकर ही सो गई थीं।

**व्याख्या:-** राम सीता से कहते हैं कि वह स्थान भला कैसे भुलाया जा सकता है? जहाँ मार्ग में चलने के श्रम से अलसाये हुए, सुकुमार और सुन्दर, मसली हुई कमलिनी जैसे तुम्हारे दयनीय अंगों को मैंने गाढ़ आलिंगन करके दबाया था और मेरे वक्ष पर तुम्हें नींद आ गई थी।

**टिप्पणी:-** परिमृदितमृणाली दुर्बलानि - परिमृदिता मृणाल्यः इव दुर्बलानि।

**रामः-** **एतानि तानि गिरिनिर्झरिणीतटेषु**
**बैखानसाश्रिततरूणि तपोवनानि।**
**येष्वातिथेयपरमा यमिनो भजन्ते**
**नीवारमुष्टिपचना गृहिणो गृहाणि।।25।।**

**अर्थः-** राम-'ये पर्वतीय नदियों के किनारे-किनारे, वानप्रस्थ जनों के आश्रयभूत वृक्षों वाले वे तपोवन हैं, जिनमें अतिथि-सत्कार को अपना परम कर्तव्य मानते हुए तथा यम नियमों का सेवन करते हुए, जंगली अनाजों को साबुत ही पकाकर खाने वाले गृहस्थ तपस्वी घर बनाकर वसे हुए हैं।

**व्याख्या**ः- राम कहते हैं कि 'ये चित्र में वर्तमान पर्वतीय नदियों के तटों पर वानप्रस्थों से सेवित वृक्षों वाले तपस्वियों के वन हैं; जिनमें अतिथि सेवा को परम धर्म मानने वाले, जंगली अनाजों को साबुत ही पकाकर खाने वाले, अहिंसा आदि यमों का नियम से पालन करने वाले गृहस्थ तपस्वी घरों को आश्रय बनाकर वसते हैं।

**टिप्पणी**ः- वैखानसाः-विखानम् इति नामा वानप्रस्थधर्मप्रवक्ता ऋषिविशेषः तस्य इमे वैखानसाः। विखानस् ऋषि के अनुयायी तपस्वी।

**रामः-** **स्मरसि सुतनु? तस्मिन् पर्वते लक्ष्मणेन**
**प्रतिविहितसपर्यासुस्थय स्तान्यहानि।**
**स्मरसि सरसनीरां तत्र गोदावरीं वा**
**स्मरसि च तदुपान्तेष्वावयो र्वर्तनानि।।26।।**

**अर्थः-** राम-'हे कृशतनु सीते! उस पर्वत पर लक्ष्मण द्वारा प्रत्येक प्रकार से की गई सेवा से सुखपूर्वक निवास करते हुए हम दोनों के वे दिन तुम्हें याद हैं? वहाँ मधुरजल वाली गोदावरी तुम्हें याद है? उस के समीपवर्ती प्रदेशों में हम दोनों के विहार तुम्हें याद हैं?'

**व्याख्या**:- राम सीता से कहते हैं कि -प्रिय सीते! तुम कृशतनु होती हुई भी उस पर्वत पर निवास करने में कुछ कष्ट अनुभव न कर सकी थीं। क्यों कि भैया लक्ष्मण पर्वत प्रदेश में होने वाले सब दुःखों का प्रतिकार करते हुए हम दोनों की सेवा में प्रतिक्षण तत्पर रहते थे। वहाँ पर बहने वाली गोदावरी का स्वादिष्ट जल था। वह भी तुम्हारी स्मृति से न उतरी होगी। उस पर्वत के निकटवर्ती भूभागों में हम तुम जैसे सुख विहार करते थे, वे निश्चय ही तुम्हें आज भी याद होंगे?

**टिप्पणी** - सुतनु! यह सीता के लिए सम्बोधन है। 'सु' और 'तनु' इन दो शब्दों के योग से बना है। अतः योगज है रूढ़ नहीं।

## अभ्यास प्रश्न-2

**1- सही विकल्प छांटकर लिखिए:-**

क- दुःखी प्रियजन बहलाने योग्य होता है।

(अ) परजनों द्वारा (ब) तटस्थों द्वारा

(स) स्वजनों द्वारा (द) वृद्धजनों द्वारा

**2- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-**

क- दशनकुसुमै र्मुग्धालोकं ..................दधती मुखम्।
ख- धृतं बाल्ये ......................... पुण्यमारण्यकव्रतम्।
ग- नीवारमुष्टिपचना..................................गृहाणि।
घ- अगणिततनूतापस्तप्त्वा.......................भगीरथः।

## 1.5 सारांश:-

आप जान चुके हैं कि महाकवि भवभूति ने सर्वप्रथम रामचरित के कवियों को नमस्कार किया है। नान्दी पाठ के पश्चात् नट और सूत्रधार के संवाद द्वारा अयोध्या में राजगृह के देश, काल और वातावरण की सुन्दर सृष्टि की है। 'साधु वाणी भी दुर्जनों द्वारा निन्दित होती है' यह बात आनुषङ्गिक रूप से कहकर सीता परित्याग रूप वस्तु और उसका यह बीज कि 'दुजन लोग साधु चरित वाली सीता को भी दोष लग रहे हैं' कवि ने सूत्रधार के शब्दों में सूचित कर दिया है। वसिष्ठ का सन्देश प्रस्तुत कर के राम को प्रजानुंजन में तत्पर दिखाया है। यहाँ भी कवि द्वारा सीता के निर्वासन की भूमिका तैयार की गई है। चित्रवीथी के माध्यम से राम और सीता के अयोध्या तथा वन वास के समय की अनेक

घटनाओं को जीवन्त किया है। परशुराम प्रसंग, माताओं का वात्सल्य, मन्थरा वृतान्त, शृंङ्गवेरपुर निवास, गंगा माहात्म्य, गृहस्थ तपस्वी जीवन आदि के दृश्य सहदय पाठको को आकर्षित करते हैं।

## 1.6 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| देव ! ताम् | - | ये दो पद हैं। पूर्व 'देव' सम्बोधन पद है। दूसरा 'ताम्' पूर्व का परामर्शक और उतरवर्ती 'वाचम्' का विशेषण है। |
| वाचम् | - | इस पद का अर्थ वाणी या सरस्वती है। |
| अरुन्धतीम् | - | वसिष्ठ की पत्नी। |
| 'रक्षोगृह' | - | का अर्थ 'राक्षसों का घर' है रावण का घर नहीं है; क्यों कि 'रक्षस' शब्द राक्षस जाति का वाचक है, रावण व्यक्ति का वाचक का नहीं है। |
| नरेन्द्रः | - | राज्य व्यवस्थापक राम। |
| वासगृहम् | - | पूर्व वनवास के दिनों सीता के निवास स्थान पंचवटी या दण्डकवन। |
| भगवती | - | ऐश्वर्यशालिनी |
| प्रजापतिसमः | - | वेदों के निधान एवं प्रजा के स्रष्टा ब्रह्मा जैसे राजा जनक। |
| सविता | - | तृण धान्यादि को उत्पन्न करने वाला कुल प्रवर्तक सूर्य। |
| वीर प्रसवा | - | वीर पुत्र को जन्म देने वाली। |
| अनुगृहीताः | - | 'अनुगृहीत' का बहुवचन। जिन पर अनुग्रह किया गया हो। |
| दयां च | - | विपन्न बन्धुजनों पर होने वाली दया को। |
| सुरभिणः | - | सुगन्धयुक्त। |
| नैसर्गिकी | - | स्वाभाविक। |
| ब्रह्महिताय | - | वैदिक मर्यादाओं की रक्षा के लिए। |
| परःसहस्रम् | - | हजार से अधिक संख्या वाली अवधि तक। |
| जनकानाम् | - | जनक वंशियों का |
| रघूणां च | - | और रघुवंशियों का। |
| सुमुखि! | - | हे सुन्दरमुखी सीते। |
| समनन्दयत् | - | आनन्ददायी हुआ था। |
| तातपादेषु | - | पूज्य पिता जी के |
| चिन्त्यमानानाम् | - | जब हमारी हर बात की फिक्र रखी जाती थी। |
| ज्योत्स्नाप्रायैः | - | चांदनी जैसे गोरे। |
| इङ्गुदीपादयः | - | हिंगोट का वृक्ष। |
| अगणिततनूतापः | - | शरीर के कष्टों की परवाह न करते हुए। |
| कपिलमहसा | - | कपिलमुनि के तेज से। |

| | |
|---|---|
| अलसललितमुग्धानि- | अलसाये हुए, सुकुमार, सुन्दर। |
| नीवारमुष्टिपचनाः - | जंगली अनाजों को साबुत ही पकाकर खाने वाले। |
| प्रतिविहितसपर्या - | यहाँ प्रति' शब्द प्रतिकार अर्थ का बोधक है। अतः समस्त पद का अर्थ 'प्रत्येक दुःख के प्रतिकारार्थ विहित सेवा' है। |
| अविदितगतयामा - | न विदित हो सके बीते पहर जिसके ऐसी रात। |

## 1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तरः

**खण्ड-एक**

1-

क- उत्तररामचरित नाटक राम के लोकोत्तर चरित पर आधारित है।
ख- वसिष्ठ की देख रेख में राम की माताएँ अपने जामाता ऋष्यशृंग के आश्रम में गयीं।
ग- सूत्रधार ने भवभूति को काव्य सृष्टि में ब्रह्मा कहा है।
घ- सीता को दशरथ ने जन्म दिया है।

2-

क- वासगृह
ख- स्वतन्त्रता
ग- जनक
घ- अर्थ

3-

क- सत्य
ख- सत्य
ग- असत्य
घ- असत्य

**खण्ड-दो**

1- (स)

2-

क- शिशुः

ख- तदार्येण

ग- गृहाणि

घ- तपांसि

## 1.8 सन्दर्भ ग्रन्थः-


1 भवभूति, उत्तररामचरित (सम्पूर्ण), व्याख्या-आचार्य प्रभुदत्त स्वामी, (1988) ज्ञान प्रकाशन, मेरठ2


## 1.9 सहायक पाठ्य सामग्रीः-


1 भवभूति, उत्तररामचरितम्, विचार और विश्लेषण, आचार्य प्रभुदत्तस्वामी, ज्ञानप्रकाशन, मेरठ-2

2 भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या-ब्रह्मानन्द शुक्ल, (1986-87) साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2


## 1.10 निबन्धात्मक प्रश्नः-

1 श्री राम को भेजे गये वसिष्ठ के सन्देश का विश्लेषण कीजिए ?

2 उत्तर रामचरित के आधार पर राम का चरित्र चित्रण कीजिए ?

3 उत्तर रामचरित की कथावस्तु की विवेचना कीजिए ?

# इकाई 2: उत्तररामचरितम् - प्रथम अंक का उत्तरार्द्ध

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य
2.3 मुख्य भाग: खण्ड एक (श्लोक 27 से 39 तक)
मूल पाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी
2.4 खण्ड दो (श्लोक 40 से 51 तक)
मूल पाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 सहायक पाठ्य सामग्री
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 2.1 प्रस्तावना:-

नाट्य एवं नाटयशास्त्र के अध्ययन से सम्बन्धित यह दूसरी इकाई है। पहली इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि सीताजी, चित्रबीथी में जृम्भका स्त्रों, गृहस्थतपोवनों, गंगा, परशुराम तथा

गोदावरी से सम्बद्ध चित्रों को देखती हैं। इस इकाई में आप उत्तररामचरित के सीता निर्वासन का अध्ययन करेंगे। सीताजी जनस्थान, पद्मसर आदि के चित्रदर्शन से पुनः वन बिहार की इच्छा प्रकट करती हैं। राम लक्ष्मण को शीघ्र रथ तैयार करने की आज्ञा देते हैं। लक्ष्मण चले जाते हैं और सीताजी राम की बायीं भुजा पर सिर रखकर सो जाती हैं। राम उनकी प्रत्येक वस्तु को अत्यन्त प्रिय बताकर केवल विरह को अपने लिए असह्य बताते हैं। तभी प्रतिहारी 'उपस्थित है' कहकर उन्हें दुर्मुख के आने की सूचना देती है। दुर्मुख उन्हें सीता सम्बन्धी लोकापवाद की सूचना देता है। राम उसे सुनकर दुःखी होते हैं। लवणासुर से त्रासित ऋषियों का समूह राम के दरबार में दुहाई देता है। राम उसके विनाश के लिए शत्रुघ्न को भेजते हैं और पृथ्वी से सीता की देख रेख करने की प्रार्थना करते हुए बाहर निकल जाते हैं। दुर्मुख लक्ष्मण की ओर से सीता से निवेदन करता है कि आपके वन विहार के लिए रथ तैयार है। सीता रथ में सवार हो जाती हैं। सब निकल जाते हैं।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप चित्रदर्शन के महत्व को समझ सकेंगे तथा बिन्दु नामक अर्थ प्रकृति की विश्लेषण कर सकेंगे।

## 2.2 उद्देश्य:-

**प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप—**

- बता सकेंगे कि एकरस, अविच्छिन्न दाम्पत्य प्रेम कैसा होता है।
- समझा सकेंगे कि प्रियजन के विरह का दुःख हृदय के घाव की तरह मन में वेदना उत्पन्न करता है।
- वनवास के जीवन की व्याख्या कर सकेंगे।
- पर्वतों, नदियों तथा सरोवरों के स्वरूप को पहचान सकेंगें।
- प्राकृतिक दृश्यों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- मानवीय मूल्यों का विवेचन कर सकेंगे। श्रेष्ठ व्यक्तियों के कर्तव्य को समझ सकेंगे।
- मनोभावों की सही पहचान कर सकेंगे। कष्टसूत्र की समालोचना कर सकेंगे।
- रस, अलंकार तथा छन्दों से अवगत हो सकेंगे।
- नाटकीय घटनाओं को जान सकेंगे।
- महापुरुषों के चरित्र को समझ सकेंगे।

## 2.3 मुख्य भाग-खण्ड एक (श्लोक 27 से 39 तक)
## मूल पाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

किंच।

**किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगा-**
**दविरलितकपोलं जल्पतोक्रमेण।**
**अशिथिल परिरम्भव्यापृतैकैकदोष्णो-**
**रविदितगतयामा रात्रिरेव व्यरंसीत्।। 27।।**

**अर्थ:-** और भी, किअति समीपता होने के कारण कपोल से कपोल सटाये हुए, बिना सिलसिले के न जाने क्या-क्या बात धीरे-धीरे कहते हुए, एक-एक हाथ से एक दूसरे को गाढ़ आलिंगन में बांधे हुए, बीते हुए प्रहरों का ध्यान न रहने के कारण पूरी की पूरी रात ही हमारी वहॉं बीत गई थी।

**व्याख्या**:- वनवास के कष्टमय को जीवन को एक साथ बिताने के कारण राम और सीता एक दूसरे के बहुत निकट आ गये थे। वे दोनों कपोल से कपोल सटाकर बिना क्रम के न जाने क्या-क्या बातें मन्द-मन्द कहते रहते, गाढ़ आलिंगन में उलझी हुई एक-एक भुजा वाले उन दोनों की पूरी रात ही बीत जाती थी।

**टिप्पणी**:- किमपि किमपि- इस कथन से गाढ़ आलिंगन के अतिरिक्त समस्त विषयों की उपेक्षा व्यक्त होती है। मन्दं-मन्दम् - इससे आनन्दमग्नता व्यंग्य है।

**लक्ष्मणः -**

**अथेदं रक्षोभिः कनकहरिणच्छविधिना**
**तथा वृत्तं पापैव्यग्थयति यथा क्षालितमपि।**
**जनस्थाने शून्ये विकलकरणैरार्यचरितै -**
**रपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।। 28।।**

**अर्थ:-** लक्ष्मण -''इसके बाद यह सुनहरी मृग के छल-विधान में पापी राक्षसों का किया हुआ वह वृतान्त है, जिसका यद्यपि पूर्ण प्रतिकार किया जा चुका है तथापि वह उसी प्रकार व्यथित करता है। (इसके कारण) सूने जनस्थान में जड़ और चेतन सबको विकल करने वाले आर्य के चरितों से पाषाण भी रो पड़ते हैं और वज्र का हृदय भी टूक-टूक हो जाता है।''

**व्याख्या**:- चित्रबीथी में चित्रित जनस्थान की घटना का वर्णन करते हुए लक्ष्मण सीता से कहते हैं कि पंचवटी में सूर्पणखा विवाद के बाद यह जनस्थान का दृश्य है। इसमें स्वर्ण मृग के छल की क्रिया द्वारा पापी राक्षसों ने वैसा किया जो धो दिया जाने पर भी पीड़ित करता है। इसके कारण इस सूने दण्डकारण्य

के मध्यवर्ती वन प्रदेश में चराचर को बेचैन करने वाले भाई जी के चरित से पत्थर भी रोते हैं और वज्र का हृदय भी फटता है।

**टिप्पणी**:- विकलकरणैः- विगतःकलो वस्तुविवेको येषां ते विकलाः। विकलानां करणानि प्रकृष्टकारणानि - विकलकरणानि तैः। अर्थात् 'सम्पूर्ण जगत् को विकल बनाने में असाधारण रूप से कारण बनने वाले'। यह आर्यचरितैः का विश्लेषण है।

लक्ष्मणः- (रामं निर्वण्य साकूतम्।) आर्य किमतेत् ?

**अयं तावद्वाष्पस्त्रुटित इव मुक्तामणिसरो**
**विसर्पन्धाराभिर्लुठति धरणीं जर्जरकणः।**
**निरुद्धोऽप्यावेगः स्फुरदधरनासापुट तया**
**परेषामुन्नेयो भवति चिरमाध्मातहृदयः।। 29।।**

**अर्थः-** लक्ष्मण- (राम को देखकर अनुमान करने के अभिप्राय से) भाई जी! यह क्या ? 'आपके ये आंसू टूटी हुई माला के मोतियों की तरह अनेक धाराओं में फैले हुए, जमीन पर गिरकर चूर-चूर होकर बिखर रहे हैं ? देर तक हृदय को फुलाता हुआ, भीतर ही रोका गया दुःख का आवेग फड़कते हुए होंठों और नथुनों से दूसरों के लिए सहज अनुमेय हो रहा है।

**व्याख्या**:- सीता हरण के पश्चात् राम के करुण चरितों का चित्र राम के सम्मुख उपस्थित हुआ, वे विह्वल हो गये। तब राम की यह दशा देखकर लक्ष्मण को विस्मय हआ। वे कहने लगे - 'आर्य ! यह मैं क्या देख रहा हूं, आप तो धीर, गम्भीर और दुःखसहिष्णु हैं, फिर चित्रमात्र में उपस्थित पुरानी घटना को देखकर इतने क्लान्त क्यों हो रहे हैं, क्यों आपके नेत्रों से आंसुओं का प्रवाह बह चला है ? यद्यपि आप दुःखावेग को भीतर ही भीतर दबा रहे हैं तो भी आपके फड़कते होठों ओर नथुनों से आपकी अधीरता स्पष्ट अनुमान की जा सकती है।

**टिप्पणी**:- तावत् - यहाँ 'प्रथम' अर्थ में प्रयुक्त है। लक्ष्मण ने यहाँ दो युक्तियाँ उपस्थित की हैं और उनसे राम के भीतर का आवेग प्रमाणित किया है, जिसे राम न केवल बता नहीं रहे थे, छिपाने की कोशिश भी कर रहे थे।

रामः - वत्स!

**तत्कालं प्रियजनविप्रयोगजन्मा**
**तीव्रोऽपि प्रतिकृतिवांछया विसोढः।**
**दुःखाग्निर्मनसि पुनर्विपच्यमानो**

**हृन्मर्मव्रण इव वेदनां तनोति।। 30।।**

**अर्थः-** राम-भाई !'असह्य होने पर भी प्रतिकार की आकांक्षा से उस समय तक सहन किया गया सीता के विरह का जलता हुआ दुःख प्रतिकार के पश्चात् फिर भीतर ही भीतर पकते हुए हृदय के घाव की तरह (आज तक) मन में वेदना उत्पन्न कर रहा है।'

**व्याख्याः-** भाई लक्ष्मण! तुम मुझे अधीर न समझो। वस्तुतः सीता हरण की घटना ने हृदय में ऐसा गहरा घाव बना दिया था कि उसकी दहकती हुई वेदना मुझे असह्य हो गयी थी। इसीलिए जनस्थान में अपनी धीरता हार गया था। इस समय इस चित्र के प्रसंग ने मेरे उस घाव को इतना कुरेद दिया है कि उसकी वेदना से मेरी छाती भर गयी और हृदय पिघलकर नेत्रों के माध्यम से बहने लगा। यह एक तात्कालिक कारण था।

**टिप्पणीः-** तत्कालम्- जिस प्रतिकृति की इच्छा थी, उस प्रतिकृति के समय तक। अर्थात् सीताहरण के समय से लेकर रावण के सर्वनाश तक।

**रामः-** **देवि! परं रमणीयमेतत्सरः।**
**एतस्मिन्मदकलमल्लिकाक्षपक्ष-**
**व्याधूतस्फुरदुरुदण्डपुण्डरीकाः।**
**वाष्पाम्भः परिपतनोद्गमान्तराले**
**संदृष्टाः कुवलयिनो मया विभागाः।। 31।।**

**अर्थः-** राम - देवि! यह बड़ा रमणीय सरोवर है। ''इसमें, मद के कारण मधुर गुंजन करते हुए मल्लिकाक्ष नामक काली चोंच और पैरों वाले हंसों के पंखों से कम्पित नीचे तक हिलती हुई मोटी नली वाले श्वेत कमलों द्वारा चारों ओर से घिरे नीले कमलों के प्रदेशों को मैंने आंखों से आंसुओं के गिरने और दुबारा आंखों में उमड़ने के बीच के समय में देखा था।''

**व्याख्याः** –पम्पासर के सौन्दर्य दर्शन के विषय में राम सीता से कहते हैं कि पम्पा नामक प0सर के कई भागों में खड़े हुए कमलों की स्थिति ऐसी थी कि मध्य में नीलकमलों के चारो ओर श्वेत कमलों का घेरा था। वे श्वेतकमल हंसों के पंखों से उलझकर ऊपर से नीचे तक हिल रहे थे। इस प्रकार वे काली पुतली से युक्त थिरकते नेत्र की समता धारण किये हुए थे। उन्हें देखकर राम को सीता के नेत्रों का स्मरण हो आया। वे दहाड़ मारकर रो पड़े। उनके नेत्रों से अश्रुप्रवाह उमड़ता और गिरता था। अतः वे नेत्रों से आंसू गिरने के बाद जब तक कि दुबारा उमड़ें, बस इसी बीच की अवधि में उन विभागों को देख सके।

**टिप्पणीः-** कुवलयिनः - कुवलयानि बाहुल्येन सन्ति येषु ते कुवलयिनः - नील कमलवन्तः विभागाः।

**रामः -** **दिष्ट्या सोऽयं महाबाहुरंजनानन्दवर्धनः।**

**यस्य वीर्येण कृतिनो वयं च भुवनानि च ।। 32।।**

**अर्थः-** सौभाग्य से ये वही महाबाहु अंजनानन्दन हनुमान हैं, जिनकी वीरता से हम और सम्पूर्ण जगत् कृतकृत्य है।

**व्याख्या**:- चित्र में हमारे सम्मुख स्थित ये बाहुवली हनुमान जी हैं। माता अंजना के आनन्द को बढ़ाने वाले इनके पराक्रम से हम रामादि और समग्र संसार कृतार्थ हुए।

**टिप्पणी**:- दिष्ट्या- यह आनन्द का द्योतक अव्यय है।

**लक्ष्मणः -**

**सोऽयं शैलः ककुभसुरभिर्माल्यवान्नामयस्मि -**
**न्नीलः स्निग्धः श्रयति शिखरं नूतनस्तोयवाहः।**
**आर्येणास्मिन् ----------------**
**रामः -**
**----- विरम विरमातः परं न क्षमोऽस्मि**
**प्रत्यावृत्तः स पुनरिव मे जानकीविप्रयोगः।। 33।।**

**अर्थ**:- लक्ष्मण -'अर्जुन के फूलों की सुगन्ध से व्याप्त यह पर्वत माल्यवान् कहलाता है, जिसके शिखर पर पानी से भरा हुआ काला नवीन बादल छाया हुआ है। भाई जी ने यहाँ -

**राम**:- ठहरो, आगे मत कहो, लक्ष्मण ! इससे आगे मैं समर्थ नहीं हूँ। जानकी का वह वियोग जैसे फिर लौट आया है।

**व्याख्या**:- लक्ष्मण कहते हैं कि यह अर्जुन वृक्षों से सुगन्धित माल्यवान् नाम का वह पर्वत है; जिस पर काले रंग वाला प्यारा नवीन मेघ शिखर को ढक रहा है। इस पर भाई जी ने ------ (लक्ष्मण को बीच में ही रोक कर राम कहते हैं) रुको, रुको लक्ष्मण! इससे आगे की बात को सुनने के लिए मैं समर्थ नहीं हूं। क्योंकि इसे सुनकर और देखकर ही वह, जिसकी तुम चर्चा करना चाहते हो; मेरा सीता से वियोग लौट सा आया है।

**टिप्पणी**:- यहाँ सीता के विरह का पुनः लौटना कहकर कवि ने अपने पाठकों के लिए भावी सीता विरह की मनोभूमि तैयार कर दी है। यहाँ भवभूति ने जिसे माल्यवान् के नाम से निर्दिष्ट किया है। वाल्मीकि रामायण में उसे प्रस्रवण गिरि कहा गया है।

**रामः - तेन हि निरन्तरमवलम्बस्व मामत्र शयनाय।**
**जीवयन्निव ससाध्वसश्रमस्वेदविन्दुरधिकण्ठमर्प्यताम्।**
**बाहुरैन्दव मयूखचुम्बित स्यन्दि चन्द्रमणिहार विभ्रमः।। 34।।**

**अर्थ:** - राम- तो बिल्कुल निकट होकर मेरा सहारा ले लो, सोने के लिए। 'और मुझे जीवन सा देने वाला अपना हाथ - जिस पर भय और श्रम के कारण पसीने की बूंदे उभर आई हैं, इसीलिए जो चांद की किरणों के स्पर्श से पसीजे हुए चन्द्रकान्त मणियों के हार की शोभा को धारण कर रहा है, (सहारे के लिए) मेरे गले में डाल लो।'

**व्याख्या**:- सीता को नींद आने पर राम कहते हैं कि सोने के लिए मेरे एकदम समीप होकर मेरा आश्रय ले लीजिए तथा मुझमें प्राणों का संचार सा करने वाला, भय और थकान से उत्पन्न पसीने की बूंदों से युक्त, चांद की किरणों से चुम्बित, पसीजा हुआ, चन्द्रकान्त नामक मणियों से माला जैसा बना हुआ अपना हाथ मेरे गले में डाल लीजिए।

**टिप्पणी**:- जीवयन्निव - राम ने सीता के कर स्पर्श को अपने लिए जीवन दाता कहा है। क्योंकि आगे पंचवटी के समीप राम के पुनः-पुनः मूर्च्छित होने पर छाया सीता के कर स्पर्श द्वारा राम को जीवन प्राप्त होता है। (तथा कारयन् सानन्दं) प्रिये! किमेतत् ?

**विनिश्चेतुं शक्यो न सुखमिति वा दुःखमिति वा**
**प्रमोहो निद्रा वा किमु विषविसर्पः किमु मदः।**
**तव स्पर्शे स्पर्शे मम हि परिमूढेन्द्रियगणो -**
**विकारश्चैतन्यं भ्रमयति च सम्मीलयति च।। 35।।**

**अर्थ** - (वैसा ही कराते हुए आनन्द के साथ) प्रिये! यह क्या ? 'तुम्हारे प्रत्येक स्पर्श में मेरी इन्द्रियों को जड़ बनाने वाला (एक) विकार मेरी चेतना को भी चक्कर कटाने लगता है और शून्य भी बना देता है। अतः यह निश्चय नहीं हो पाता कि यह विकार सुख है या दुःख है ? वेहोशी है या नींद है ? विषय का प्रसार है या नशा है ? (न जाने क्या वस्तु है यह ?)

**व्याख्या**:- सीता के हाथ को अपने गले में डलवाते हुए राम कहते हैं कि प्रिये ! मैं जब-जब भी तुम्हारा स्पर्श करता हू तब-तब तुम्हारे अंग से मिलते ही मेरी ज्ञानेन्द्रियॉं सुन्न हो जाती हैं और एक ऐसा विचित्र भावोदय होता है जो मेरी आत्मा (अन्तःकरण) को चक्कर भी कटाने लगता है और उसे चारो ओर से बन्द भी कर देता है। अर्थात् एक विचित्र तादाम्य अनुभव कर मेरा अन्तःकरण नाचने लगता है और सब प्रकार से बाहरी ज्ञान से उसका सम्बन्ध कट जाने पर वह डब्बे में बन्द हुए के समान हो जाता है। अतः समझ नहीं पड़ता कि यह कोई सुखात्मक अनुभूति है या दुःखात्मक ? ऐसी स्थिति बेहोशी में भी होती है और निद्रा में भी। विष फैलने पर भी होती है और नशा चढ़ने पर भी। अतः नहीं समझ में आता कि तुम्हारा स्पर्श होने पर मुझे बेहोशी चढ़ती है या नींद ? विष चढ़ने लगता है या नशा ?

**टिप्पणी**:- यहाँ राम ने सीता के कर स्पर्श को अनिर्वचनीय सुख उत्पन्न करने वाला कहा है।

**रामः - म्लानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि**

**सन्तर्पणानि सकलेन्द्रियमोहकानि।**
**एतानि ते सुवचनानि सरोरुहाक्षि !**
**कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि ।। 36।।**

**अर्थः**- राम -'हे कमलाक्षि ! ये तुम्हारे सुन्दर वचन मेरे मुरझाये हुए प्राण पुष्प को खिलाने वाले, मुझे सम्पूर्ण तृप्ति देने वाले, मेरी ज्ञानेन्द्रियों को मोहित करने वाले, कानों के लिए अमृतमय तथा मन के लिए रसायन रूप हैं।'

**व्याख्या**:- हे कमल सी आंखों वाली सीते! तुम्हारे ये वचन मेरे लिए अमृत रूप हैं और मेरे हृदय को अनन्त शक्ति देने वाले हैं। मेरे प्राण इसी बात को सोचकर म्लान रहते थे कि यदि मुझे वास्तव में तुम्हें त्यागना पड़ा तो कहीं तुम इसे अपने प्रति क्रूरता के रूप में तो ग्रहण नहीं करोगी। तुमने मेरे प्रेम की गहराई को पहचान कर मुझे आश्वस्त कर दिया है, तुम्हारे इन शब्दों ने मुझे तृप्ति प्रदान कर दी है तथा मेरे कानों में अमृत डाल दिया है।

**टिप्पणी**:- सीता ने राम के प्रेम की गहराई को स्वीकृति प्रदान की। इससे राम को अपार सन्तोष प्राप्त हुआ।

**रामः** - अयि! किमन्वेष्टव्यम्

**आविवाहसमयाद् गृहे वने शैशवे तदनुयौवने पुनः।**
**स्वापहेतुरनुपाश्रितोऽन्यया रामबाहुरूपधानमेषते।। 37।।**

**अर्थः**- राम - अरी! खोजती क्या हो ? 'विवाह काल से लेकर घर में और वन में, शैशव में और यौवन में, दूसरी स्त्री के संसर्ग से अछूता, राम का यह हाथ ही तुम्हारा तकिया रहा है।'

**व्याख्या**:- राम, सीता को चारो ओर दृष्टि डालती देखकर समझ जाते हैं कि इन्हें तकिये की तलाश है। वे अपने हाथ को उनके सहारे के लिए आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि 'अरी तकिये की खोज क्या करनी है। विवाह के दिन से लेकर आज तक बचपन में घर पर उसके पश्चात् यौवन के समय वन में, वन से लौटने के पश्चात् फिर घर में किसी अन्य स्त्री के द्वारा न सेवन किया गया यह राम का हाथ तुम्हारा तकिया रहा है।'

**टिप्पणी**:- 'अन्यया अनुपाश्रितः,' इस वाक्य से राम का एक पत्नीव्रत लक्षित होता है।

रामः-कथं प्रियवचनैव मे वक्षसि प्रसुप्ता? (निर्वण्य सस्नेहम्)

**इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनयो -**
**रसावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।**

**अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः**
**किमस्यान प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः।। 38।।**

**अर्थ**:- राम-क्या, मेरी छाती पर ही प्रियवचन कहती सो गई ? (देखकर, स्नेह के साथ) 'यह घर में लक्ष्मी है, नेत्रों में अमृत की सलाई है, इसका स्पर्श शरीर मे चन्दन का गाढ़ा लेप है, इसका यह हाथ गले में शीतल और चिकने स्पर्श वाला मोतियों का हार है। इसका क्या कुछ प्रिय नही है ? सभी कुछ प्रिय है-परन्तु असत्य है तो केवल इसका विरह है'।

**व्याख्या**:- यह सीता आज चित्रदर्शन से इतनी थक गई कि नींद के वशीभूत होकर छाती की दिशा में ही बोलती-बोलती सो गई। यह घर में लक्ष्मी है और आंखों में अमृत की सलाई है। यह जो मुझे प्राप्त हो रहा है इसका स्पर्श शरीर पर गाढ़ा चन्दन का लेप है। यह इसका हाथ कण्ठ में ठण्डा और चिकना मोतियों का हार है। इसका क्या अतिप्रिय नहीं है ? परन्तु यदि विरह होता है तो वही असह्य है।

**अद्वैतं सुखदुःखयोरनुमतं सर्वास्ववस्थासु य-**
**द्विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः।**
**कालेनावरणात्ययात् परिणते यत्प्रेमसारे स्थितं**
**भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्राथ्यर्ते।। 39।।**

**अर्थः**- 'जो सुख और दुःख में एक सा बना रहता है, जो किसी भी परिस्थिति में खण्डित नहीं होता, जिसमें हृदय को विश्राम मिलता है, बुढापा भी जिसके रस को क्षीण नहीं कर पाता, काल की लम्बी अवधि के द्वारा ऊपरी वासनात्मक आवरण (छिलका) हट जाने पर जो प्रेम के सार के रूप में स्थित रहता है, उस सुन्दर पति-पत्नी सम्बन्ध का कल्याण हो; क्यों कि वह किसी भी कीमत पर प्राप्त करने योग्य है।'

**व्याख्या**:- जो दाम्पत्य सुख और दुःख में एक सा रहता है, जो सम्पत्ति और विपत्ति में साथ रहता है, हृदय जिसमें विश्राम प्राप्त करता है, जिसके मधुर आस्वाद को बुढ़ापे की अभोग क्षमता कम नहीं कर पाती, अपितु समय की लम्बी अवधि के प्रभाव से जिसमें प्रेम के ऊपर का वासना रूपी छिलका सूखकर झड़ जाने पर प्रेम की ठोस गिरी शेष रह जाती है। वह ऐसा दाम्पत्य ही सर्वोत्कृष्ट है। ऐसे उच्च कोटि के दाम्पत्य सुख को पाने की कामना किसे न होगी ? चाहे वह किसी भी कीमत पर क्यों न प्राप्त हो ?

टिप्पणी:- भवभूति ने जिस कोटि के दाम्पत्य-प्रेम का यहॉ विश्लेषण किया है, उसका उदाहरण संसार भर के साहित्य में खोजने से भी नहीं मिलेगा।

## अभ्यास प्रश्न-1

**1. एक शब्द में उत्तर दीजिए:-**

क- सूपर्णखा विवाद का स्थान कहॉं है ?
ख- राम के मन में क्या वेदना उत्पन्न कर रहा है ?
ग- पम्पा सरोवर का दूसरा नाम क्या है ?
घ- कौन सा पर्वत अर्जुन के फूलों की सुगन्ध से व्याप्त है ?

**2. एक वाक्य में उत्तर दीजिए:-**

क- स्वर्णमृग के छल की क्रिया कहॉं का दृश्य है ?
ख- परस्पर वार्तालाप में किस की रात बीत गयी ?
ग- किसके आँसू मोतियों की तरह विखर रहे हैं ?
घ- दिष्ट्या कैसा अव्यय है ?

**3. सत्य/असत्य बताइए:-**

क- सीता का हाथ राम को जीवन सा देने वाला है।
ख- हनुमान अंजनानन्दवर्धन हैं।
ग- माल्यवान् के शिखर पर शुभ्र बादल छाया है।
घ- सीता के सुन्दर वचन राम के मन के लिए रसायन रूप नहीं हैं।

**4. सही विकल्प छांटकर लिखिए:-**

क- नींद आने पर सीता खोजती हैं।

(अ) उपधान (ब) बिस्तर

(स) हाथ (द) शयनकक्ष

**5. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-**

क- आविवाहसमयाद् -------शैशवे।
ख- अयं बाहुः कण्ठे ---------- मौक्तिकसरः।
ग- किमस्या न प्रेयो यदि ------------ विरहः।
घ- भद्रं तस्य सुमानुषस्य --------हितत्प्रार्थ्यते।

## 2.4 खण्ड दो (श्लोक 40 से 51 तक) मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

रामः - (आश्वस्य)

**हा हा धिक्! परगृहवासदूषणं तद्वैदेह्याः प्रशमितमद्भुतैरुपायैः।**
**एतत्तत्पुनरपि दैवदुर्विपाकादालर्कं विषमिव सर्वतः प्रसक्तम्।। 40।।**

**अर्थः-** राम- (धीरज रखकर) 'हाय, हाय कैसी दुःख की बात है कि दूसरे के घर रहने का जो सीता का दोष अद्भुत उपायों द्वारा परिमार्जित कर दिया था, यह फिर वही दुर्भाग्य से कुत्ता काटे के जहर की तरह सब ओर फैल गया है।'

**व्याख्या**:- सीता के विषय में फैले लोक प्रवाद पर शोक व्यक्त करते हुए राम कहते हैं कि कुत्ते के काटने पर तेल, मिर्च आदि उपचार द्वारा उसे शान्त कर दिया जाता है, परन्तु वह कालान्तर में फैलकर मनुष्य को पागल बना देता है और तब मनुष्य कुछ भी बकने लगता है। सीता का रावण के घर रहना भी अग्नि परीक्षा रूपी दिव्य उपाय द्वारा निर्दोष प्रमाणित कर दिया गया था, परन्तु अब इतने दिनों बाद वह फिर प्रजाजनों में फैल गया और वे पागलों की भांति सीता की निन्दा करने लगे हैं।

**टिप्पणी**:- सीता का दूसरे के घर में रहने का दोष प्रजाजनों में फैल गया है। जिससे वे सीता की निन्दा करने लगे हैं। अतः प्रजाजन शोचनीय हैं और मैं (राम) मन्द भाग्य हू' यह भाव है। यहां उपमा अलंकार और प्रहर्षिणी वृत्त है।

**सतां केनापि कार्येण लोकस्याराधनं परम्।**
**तत्प्रतीतं हि तातेन मां च प्राणांश्च मुंचता।। 41।।**

**अर्थ**:- 'किसी भी कार्य द्वारा प्रजा को प्रसन्न करना ही श्रेष्ठ राजाओं का परम कर्तव्य है। पिता जी ने मुझको और अपने प्राणों को त्यागकर भी इसे प्रमाणित किया है।'

**व्याख्या**:- पिता दशरथ ने मुझे त्यागकर और उसी के कारण अपने प्राणों को भी त्याग कर यह प्रमाणित किया है कि कुछ भी त्याग क्यों न करना पड़े। हर प्रकार के त्याग द्वारा प्रजा को प्रसन्न रखना ही श्रेष्ठ राजा का परम कर्तव्य है। इसी लिए मुझे भी सीता को त्यागकर उसी के कारण अपने प्राणों को भी त्यागकर प्रजाराधन करना चाहिए।

**टिप्पणी**:- यहाँ पिता के मार्ग पर चलने का संकल्प प्रकट कर राम ने यह सिद्ध किया है कि मैं उसी पिता का प्रतिरूप हूं; जिसने प्रजाराधन के लिए अपने प्राण भी दे दिये थे।

संप्रत्येव च भगवता वसिष्ठेन संदिष्टम्। अपि च।

**यत्सावित्रैर्दीपितं भूमिपालैर्लोकश्रेष्ठैः साधुचित्रं चरित्रम्।**
**मत्सम्बन्धात्कश्मलाकिंवदन्तीस्याच्चेदस्मिन्हन्तधिङ्गामधन्यम्।।42।।**

**अर्थ**:- भगवान् वसिष्ठ ने भी तो अभी यही सन्देश दिया है। दूसरी बात यह भी है कि - 'भुवन मण्डल में श्रेष्ठ माने जाने वाले सूर्यवंशी राजाओं ने जिस अद्भुत चरित्र को भली प्रकार उज्ज्वल बनाया है, उसमें यदि मेरे कारण से कोई काली किंवदन्ती संयुक्त होती है तो मुझ अभागे को धिक्कार है।'

**व्याख्या**:- संसार में प्रशंसनीय सूर्यवंशी राजाओं ने अपने जिस अद्भुत चरित्र को भली प्रकार उज्ज्वल बनाया। इसमें मेरे कारण यदि कोई जनश्रुति होती है तो मुझ अधम को धिक्कार है।

**टिप्पणी**:- कुलगुरु के सन्देश के साथ 'अपि च' शब्द से राम का तात्पर्य यह है कि यदि गुरु जी सन्देश न भेजते तो भी मुझे ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए जिससे मेरे पूर्वजों की उज्ज्वल कीर्ति में कालिमा लग जाए।

**त्वया जगन्ति पुण्यानि त्वय्यपुण्या जनोक्तयः।**
**नाथवन्तस्त्वया लोकास्त्वमनाथा विपत्स्यसे।। 43।।**

**अर्थ**:- 'तुझसे जगत् पवित्र हो रहा है फिर भी तेरे विषय में लोगों की ओर से अपवित्र चर्चाएं चल रही हैं। तुझसे दुनिया सनाथ है और तू दुनिया में अनाथ होकर भटकेगी।'

**व्याख्या**:- सीते! तुम्हारे पवित्र चरित्र से संसार पवित्र हो गया है, फिर भी यह संसार तुम्हें अपवित्र कहता है। तुमने संसार को सनाथ किया है पर तुम स्वयं अनाथ होकर अब न जाने क्या-क्या विपत्तियां सहन करोगी।

**टिप्पणी**:- रावण के वध का कारण बनकर सीता इस अनाथ जगत् की नाथ बन गई। परन्तु संसार अग्निशुद्धि में भी विश्वास न कर सीता पर दोष मढ़ने लगा और सीता को अनाथ बनाकर भटकाने पर तुल गया है।

**रामः- शान्तं पापं शान्तं पापम्। दुर्जना नाम पौरजानपदाः ?**

**इक्ष्वाकुवंशोऽभिमतः प्रजानां जातं च दैवाद्वचनीयबीजम्।**
**यच्चाद्भुतं कर्म विशुद्धिकाले प्रत्येतु कस्तद्यदि दूरवृत्तम्।। 44।।**

**अर्थ**:- राम- पाप शान्त हो, पाप शान्त हो, पुर और जनपद के लोग कहीं दुर्जन हैं ? 'इक्ष्वाकुवंश प्रजा का सम्मान पात्र है, परन्तु दुर्भाग्य से उसमें निन्दा का कारण उत्पन्न हो गया है। विशुद्धि के समय जो अद्भुत कर्म (स्वयम् अग्निदेव द्वारा सीता की शुद्धि की गवाही) हुआ, वह यदि दूर पर हुआ तो उस पर कौन विश्वास करे ?'

**व्याख्या**:- राम दुर्मुख से कहते हैं कि पाप शान्त हों अर्थात् पाप की आशंका जो तुम प्रजा को दुर्जन बताकर कर रहे हो, वह न करो, वह ठीक नहीं है। वह तो इक्ष्वाकुवंश का सदा से सम्मान करती आई है। हमारे कुल पर जो यह कलंक लगा है, इसमें हमारा दुर्भाग्य ही कारण है। अग्नि शुद्धि यद्यपि मेरे सम्मुख हुई है, पर प्रजा उस पर कैसे विश्वास करे, क्योंकि कि वह बहुत दूर पर हुई है।

**टिप्पणी**:- दुर्जना नाम पौरजना ? यहाँ नाम शब्द कोमल आलाप में है। जिससे प्रजाजनों के व्यवहार पर राम के हृदय की कोमलता व्यक्त होती है उनके प्रति रोष व्यक्त नहीं होता। अतः इस वाक्य का 'काकू' द्वारा यह अर्थ है कि मेरी प्रजा दुर्जन नहीं है।

**रामः- हा कष्टम्। अतिवीभत्सकर्मा नृशंसोऽस्मि संवृत्तः।**
**शैशवात्प्रभृतिपोषितां प्रियां सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम्।**
**छद्मना परिददामि मृत्यवे सौनिकेगृहशकुन्तिकामिव।। 45।।**

**अर्थ**:- राम - हाय,हाय। मैं अत्यन्त घृणित और क्रूर कर्म करने वाला हो गया हूॅ। (क्योंकि)

'शैशवावस्था के लेकर जिसका पोषण किया, हार्दिक प्रेम के कारण जिसे क्षण भर को भी अपने से पृथक् नहीं किया, उसी प्राणप्रिया इस सीता को, छलपूर्वक मौत के सुपुर्द कर रहा हॅू, जैसे कोई अपनी पालतू चिड़िया को बधिक के सुपुर्द कर रहा हो'

**व्याख्या**:- सीता परित्याग के विचार से खेद प्रकट करते हुए राम कहते हैं कि मैं अब अत्यन्त घृणित कर्म करने वाला बन गया हूँ। छोटी अवस्था से लेकर मैंने सीता का पालन किया था। सद्भाव के कारण उसे कभी अपने से अलग नहीं किया। इस प्यारी सीता को मैं उसी प्रकार छल से मौत के मुंह में धकेल रहा हूँ जिस प्रकार कोई अपनी पालतू चिड़िया को वधिक के लिए सौंप रहा हो।

**टिप्पणी**:- सीता की उपमा गृह शकुन्त से की गयी है। अतः उपमा अलंकार है, रथोद्धता वृति है। तत्किमस्पृश्यः पातकी देवीं दूषयामि ? (इति सीतायाः शिरः सुप्तमुन्न मय्य बाहुमाकृष्य।)

**अपूर्वकर्मचण्डालमयि मुग्धे! विमुंच माम्।**
**श्रितासि चन्दनभ्रान्त्या दुर्विपाकं विषद्रुमम्।। 46।।**

**अर्थ**:- तब, मैं अस्पृश्य पापी (राम) इस (पवित्र) देवी सीता को (अपने स्पर्श से) क्यों दूषित करूँ ? (यह कहकर, सीता के सोये हुए सिर को उठाकर, उसके नीचे से अपना हाथ खींच लेते हैं, फिर निम्न वाक्य बोलते हैं-

'अरी भोली! मुझ अपूर्व कर्मचाण्डाल को छोड़ो। तुम चन्दन का वृक्ष समझकर दुःखद विषवृक्ष का आश्रय ले रही हो।'

**व्याख्या**:- हे यथार्थज्ञानरहित सीते! मैंने तुम्हारे विनाश का निश्चय किया है; किन्तु तुम मेरे प्रति दयितबुद्धि से अनुरक्त हो। अतः मैं अपूर्व महाचाण्डाल अस्पृश्य और पापी हूं। तुम पवित्र हो। अतः मैं तुम्हारे लिए अस्पृश्य हूं । जैसा क्रूर कर्म आज तक किसी ने नहीं किया, वैसा करने वाले मुझ चाण्डाल को छोड़ो। तुम चन्दन की भ्रान्ति से दुःखद परिणाम वाले विषवृक्ष का आश्रय ले रही हो।

**टिप्पणी**:- किमस्पृश्यः पातकी देवीं दूषयामि' इस पूर्वोक्त कथन का समर्थन किया गया है। अतः काव्यलिंग अलंकार है।

--- अशरणोऽस्मि। किं करोमि ? का गतिः ? अथवा -

**दुःखसंवेदनायैव रामे चैतन्यमागतम्।**
**मर्मोपघातिभिः प्राणैर्वज्रकीलायितं हृदि।। 47।।**

**अर्थ**:- मैं अवलम्बहीन हूँ। क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? अथवा- 'दुख भोगने के लिए ही राम ने जीवन पाया है। मर्म पर प्रहार करने वाले प्राण भी तो हृदय में वज्र की कील बनकर गड़े हुए हैं।'

**व्याख्या**:- सीता निर्वासन पर शोक प्रकट करते हुए राम कहते हैं कि मेरा तो जन्म ही दुःख भोगने के लिए हुआ है। वनवास, सीता हरण आदि दुःखों का तो मैं प्रतिकार कर सका; परन्तु सीता निर्वासन का कोई प्रतिकार सम्भव नहीं। अतः यह दुःख असह्य है। ऐसे में प्राणान्त होना स्वाभाविक है; परन्तु मेरे प्राण भी वज्र की कील की तरह हृदय में गड़कर चुभन ही पैदा कर रहे हैं, निकलते नहीं हैं।

**टिप्पणी**:- अशरणः- असहाय। इससे राम का 'दैन्य' व्यंग्य है। किं करोमि ? का गतिः ? इन दोनों वाक्यों में राम की 'चिन्ता' व्यंग्य है।

----- अथवा को नाम तेषामहमिदानीमाह्वाने ?

**ते हि मन्ये महात्मानः कृतघ्नेन दुरात्मना।**
**मया गृहीतनामानः स्पृश्यन्त इव पाप्मना।। 48।।**

**अर्थ**:- अथवा उन सब (पवित्र आत्माओं और सीता की पवित्रता के साक्षियों) को पुकारने (इन सबकी दुहाई देने) का अब मुझे क्या अधिकार है ? ''निश्चय ही, ये सब पवित्र आत्माएं, मुझ कृतघ्न दुरात्मा द्वारा नाम ग्रहण किये जाने से, पाप का स्पर्श प्राप्त करते हुए से लगते हैं।''

**व्याख्या**:- क्योंकि मैं समझता हूँ कि किये हुए पर पानी फेरने वाले दूषित आत्मा वाले मुझ राम के द्वारा नाम लेकर पुकारे हुए वे पूर्वोक्त अरुन्धती, वसिष्ठ आदि महान् आत्माएं पाप से लिप्त से किए जा रहे हैं। अरुन्धती आदि पवित्र आत्माओं का नाम लेकर भी मैं उन्हें पाप के स्पर्श से युक्त बना रहा

हूँ; क्योंकि इन सबने सीता की पवित्रता को प्रमाणित किया है, और मैं इन सबको अप्रमाणित कर रहा हूँ। अतः मैं इन महात्माओं के नाम लेने का भी अधिकारी नहीं हूँ।

योऽहम्-

**विस्रम्भादुरसि निपत्य जातनिद्रामुन्मुच्य प्रियगृहिणीं गृहस्य लक्ष्मीम्।**
**आतङ्कस्फुरितकठोरगर्भगुर्वींक्रव्याद्भ्योबलिमिवदारुणःक्षिपामि। 49।**

**अर्थ -** जो मैं कठोर मनवाला (राम)- ''विश्वासपूर्वक छाती पर लेटकर सोई हुई, चित्रदर्शन से उत्पन्न भय के कारण फुरफुराते गर्भ से बोझिल, घर की लक्ष्मी प्रिय पत्नी को बलि के समान राक्षसों के भोजन के लिए, अपने शरीर से अलग करके (राक्षसों के सम्मुख) फेंक रहा हॅू।''

**व्याख्या:-** जो मैं कठोर बना हुआ, विश्वास पूर्वक वक्ष पर लेटकर निद्रा को प्राप्त हुई चित्रदर्शन के अवसर प्राप्त भय के कारण फुरफुराते हुए पूर्ण गर्भ से बोझिल, घर की लक्ष्मी प्यारी पत्नी को अपने शरीर से अलग करके राक्षसों के भोजन के लिए बलि के समान फेंक रहा हॅू। सो ऐसा क्रूरकर्मा मैं पूर्वोक्त महात्माओं का नाम लेने का अधिकारी नहीं हॅ।

**टिप्पणी:-** यहॉ कवि ने 'योऽहम्' इस उत्तरवाक्योपात्त 'यत्' शब्द द्वारा निर्दिष्ट 'विस्रम्भात्' इत्यादि समस्त श्लोक वाक्य को अर्थतो लब्ध 'सोऽहम्' इस वाक्य से परामृश्यमान 'को नाम तेषामहमिदानीमाह्वाने' इस पूर्व वाक्य के साथ जोड़ दिया है।

(नेपथ्ये)अब्रह्मण्यम् अब्रह्मण्यम्।

रामः- ज्ञायतां भो! किमेतत्?

(पुनर्नेपथ्ये)

**ऋषीणामुग्रतपसां यमुनातीरवासिनाम्।**
**लवणत्रासितःस्तोमस्त्रातारं त्वामुपस्थितः।।50।।**

**अर्थ-** (नेपथ्य में)ब्राह्मण भयभीत हैं, ब्राह्मण भयभीत हैं, रक्षा करो, रक्षा करो। राम- अरे! पता करो, यह क्या है ? (फिर नेपथ्य से सुनाई देता है) - 'लवणासुर के त्रास से पीड़ित, यमुना तटवासी उग्र तपस्वी ऋषियों का समूह, रक्षा पाने के लिए तुम्हारी शरण में आया है'। (उसे लवणासुर के त्रास से बचाओ)

**व्याख्या**:- लवणासुर से डरा हुआ, यमुना तट के निवासी कठोर तप करने वाले ऋषियों का समुदाय रक्षा करने वाले आपके पास आया है। अतः आप लवणासुर से इनकी रक्षा करें।

**टिप्पणी**:- अब्रह्मण्यम् - यह एक नाटकीय मुहावरा है, 'अब्रह्मण्यमध्योक्तौ' इस कोश के अनुसार इस मुहावरे का प्रयोग 'ब्राह्मणों को वध का भय उपस्थित है, उस भय से उनकी रक्षा की जानी चाहिए' इस अर्थ को व्यक्त करने के लिए किया जाता है।

**नेपथ्यः**- 'कुशीलवकुटुम्बस्य स्थली नेपथ्यमिष्यते' के अनुसार नाट्यमंच के पार्श्वभाग में निर्मित उस कक्ष को नेपथ्य कहा जाता है। जहाँ पात्रों के वेषभूषादि की रचना की जाती है तथा जहाँ से पात्र मंच पर आते हैं और जहाँ वापस चले जाते हैं।

रामः- कथमद्यापि राक्षसत्रासः ? -------भगवति वसुन्धरे!

**सुश्लाध्यां दुहितरमवेक्षस्व जानकीम्।**
**जनकानां रघूणां च या कृत्स्नं गोत्रमङलम्।**
**यां देवयजने पुण्ये पुण्यशीलामजीजनः।। 51।।**

**अर्थ**:- क्या आज भी राक्षसों का त्रास बना हुआ है ? ---- भगवति वसुन्धरे! अपनी इस प्रशंसा योग्य पुत्री जानकी की देखभाल करना - 'जो जनकवंशी और रघुवंशी राजाओं के कुल का सम्पूर्ण मंगल है और जिस पवित्र आचारवाली को तुमने देवयजन के अवसर पर जन्म दिया था।'

**व्याख्या**:- जो सीता जनकवंशी और रघुवंशी राजाओं के वंश का सम्पूर्ण कल्याण रूप है; जिस पवित्र आचणरवाली को पवित्र यज्ञ के अवसर पर तुमने जन्म दिया था; उस प्रशंसनीय पुत्री की तुम रक्षा करना।

**टिप्पणी**:- कथमद्यापि- राक्षस कुलों का नाश होने के पश्चात् भी राक्षसों का त्रास बना रहने पर राम को आश्चर्य हुआ। यह वाक्य उसी आश्चर्य का द्योतक है।

भगवति वसुन्धरे - राम द्वारा सीता को पृथ्वी को सुपुर्द करना नाटकीय कार्य की दृष्टि से 'बिन्दु' नामक अर्थ प्रकृति है। बिन्दु का लक्षण है - 'अवान्तरार्थविच्छेदे बिन्दुरच्छेदकारणम्' - सा.द.।

## अभ्यास प्रश्न-2

1. एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क- श्रेष्ठ राजाओं का परम कर्तव्य है?
ख- भूमण्डल में सर्वश्रेष्ठ राजवंश माना जाता है?
ग- प्रजा का सम्मान पात्र वंश है?
घ- राम ने शैशवावस्था से किसका पोषण किया?

2. एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क- सीता का दोष किन उपायों द्वारा परिमार्जित कर दिया था?
ख- किससे दुनिया सनाथ है?
ग- 'दुर्जना नाम पौरजना' वाक्य का काकु द्वारा क्या अर्थ है?
घ- किसके प्राण हृदय में वज्र की कील की तरह गढ़े हुए हैं?

3. सत्य/असत्य बताइए:

क- राम ने पिता के मार्ग पर चलने का संकल्प प्रकट किया है
ख- सीता विशुद्धि कि समय अद्भुत कर्म हुआ।
ग- सीता चित्रदर्शन से भयभीत नहीं हुई।
घ- ब्राह्मणों को वध का भय नहीं है।

**सही विकल्प छांटकर लिखिए:**

क- अलर्क विष की तरह सब ओर फैल गया है।

(अ) दोष (व) निंदा

(स) अपयश (द) घृत

**5. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:**

क- तत्प्रतीतं हि तातेन मां च................मुंचता।
ख- र्....................दीपितं भूमिपालैर्लोकश्रेष्ठैःसाधुचित्रं चरित्रम्।
ग- शैशवात् प्रभृति.................सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम्।
घ- श्रितासि चन्दनभ्रान्त्या दुर्विपाकं...............................................।

## 2.5 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि यहॉ सच्चे एवं सुखी दाम्पत्य जीवन का स्वाभाविक तथा मर्यादित चित्र प्रस्तुत किया है। जनस्थान में सीता हरण के पश्चात् पत्थरों को भी रुला देने वाले रामचन्द्र जी के चरित्र का मार्मिक वर्णन है। पम्पा सरोवर, हनुमान् तथा माल्यवान् पर्वत का सजीव प्रदर्शन है। सीताजी के सम्पूर्ण साधनामय जीवन की झांकी है। हनुमान् जी की प्रशंसा में रामचन्द्र जी के हृदय की विशालता का परिचय है। लोकाराधक नूतन राजा राम द्वारा अपने पूर्वजों और वरिष्ठजनों की आज्ञा का स्मरण है। संसार को पवित्र बना देने वाली देवी सीता के परित्याग का निश्चय

है। लवण त्रासित ऋषि समुदाय की सरुक्षा में श्री राम चन्द्र की सक्रियता है। अनन्तर सीताजी का वन यात्रा के लिए प्रस्थान है।

## 2.6 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| आसत्तियोगात् | - | अतिनिकटता के कारण। |
| अक्रमेण जल्पतोः | - | क्रम की उपेक्षा करके बोलते हुए। |
| चिरमाध्यात्महृदयः | - | बहुत देर तक भरे हृदय वाला। |
| दिनकरकुलानन्दनः | - | सूर्यवंश को आनन्दित करने वाले (राम)। |
| प्रियजनविप्रयोगजन्मा | - | प्रियजन के विरह से उत्पन्न। |
| मल्लिकाक्ष | - | जिनके चोंच और पंजे मटमैले रंग के होते हैं, उन हंसो को मल्लिकाक्ष कहते हैं। |
| पुण्डरीक | - | श्वेतकमल। |
| अंजनानन्दवर्धनः | - | अंजना के आनन्द को बढ़ाने वाले (हनुमान्)। |
| रसायनम् | - | जरा, व्याधि की विध्वंसक औषध। |
| दैवदुर्विपाकात् | - | दुर्भाग्य की परिणति से। |
| सावित्रैः | - | सूर्यवंशियों के द्वारा। |
| किंवदन्ती | - | अपवाद। |
| बीभत्सकर्मा | - | घृणित कर्म करने वाला। |
| कर्मचण्डाल | - | चाण्डाल दो प्रकार के होते है। एक जन्म चाण्डाल दूसरे कर्म चाण्डाल। |
| मर्मोपघातिभिः | - | मर्म को बेधने वाले। प्राणैः का विशेषण है। |
| वज्रकीलायितम् | - | वज्र की कील की भांति ठुके हुए। |
| कृतघ्नः | - | कृतं हन्तीति कृतघ्नः। किये उपकार को न मानने वाला। |
| आतंकस्फुरितकठोरगर्भगुर्वी | - | उद्वेग के कारण फड़कते हुए गर्भ के भार वाली। |
| लवणः | - | मधु और रावण की बहिन ’कुम्भीनसी’ का पुत्र। |
| अजीजनः | - | उत्पन्न किया। जन्+णिच्+लुङ्.+ म.पु.एक 01 |

## 2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

**खण्ड एक**

1.

क- पंचवटी

ख- दुःखाग्नि

ग- पùसर

घ- माल्यवान्

2.

क- स्वर्णमृग के छल की क्रिया जनस्थान का दृश्य है।

ख- परस्पर वार्तालाप में राम और सीता की रात बीत गयी।

ग- राम के आंसू मोतियों की तरह विखर रहे हैं।

घ- दिष्ट्या आनन्द द्योतक अव्यय है।

3.

- सत्य
- सत्य
- असत्य
- असत्य

4. (अ) उपधान

5.

क- गृहे वने

ख- शिशिरमसृणो

ग- परमसह्यस्तु

घ- कथमप्येकं

**खण्ड दो**

1.

क- लोकाराधन

ख- सूर्यवंश

ग- इक्ष्वाकुवंश

घ- सीता

2.

क- सीता का दोष अद्भुत उपायों द्वारा परिमार्जित कर दिया था।

ख- सीता से दुनिया सनाथ है।

ग- प्रजा दुर्जन नहीं है।

घ- राम के प्राण हृदय में वज्र की कील की तरह गढ़े हुए हैं।

3.

क- सत्य

ख- सत्य

ग- असत्य

घ- असत्य

4. (अ) दोष

5.

क- प्राणांश्च

ख- यत्सावित्रै

ग- पोषितां प्रियां

घ- विषद्रुमम्

## 2.8 सन्दर्भ ग्रन्थः-

1. भवभूति, उत्तररामचरित व्याख्या- आचार्य प्रभुदत्त स्वामी,(1988) ज्ञान प्रकाशन, मेरठ-2

2. भवभूति, उत्तररामचरितम्, डॉ0 कृष्णकान्तशुक्ल, (1986-87) साहित्यभण्डार, सुभाष, मेरठ-2

## 2.9 सहायक पाठ्य सामग्रीः-

1. भवभूति, उत्तर रामचरितम्: विचार और विश्लेषण, आचार्य प्रभुदत्त स्वामी ज्ञान प्रकाशन, मेरठ-2

2. भरतमुनि, नाट्यशास्त्र, अनु0 डॉ रघुवंश,(1964) मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली

## 2.10 निबन्धात्मक प्रश्नः-

1. उत्तर राम चरित की कथा का मूल श्रोत और उसमें कवि द्वारा निजी कल्पनाओं का विवेचन कीजिए?
2. नाटक की उपयोगिता एवं स्वरूप को स्पष्ट कीजिए?
3. भवभूति द्वारा रचित नाटकों का परिचय दीजिए?
4. उत्तर रामचरित के प्रथम अंक की कथावस्तु का विश्लेषण कीजिए।

# इकाई-3 उत्तररामचरितम्-द्वितीय अंक पूर्वार्द्ध

इकाई संरचना

3. 1 प्रस्तावना
3.2 अद्देश्य
3.3 मुख्यभाग: खण्ड एक (श्लोक 1 से 9 तक)
मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी
3.4 खण्ड दो (श्लोक 10 से 15 तक)
मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी
3.5 सारांश
3.6 शब्दावली
3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 सहायक पाठ्य सामग्री
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 3.1 प्रस्तावना:-

नाट्य एवं नाट्यशास्त्र के अध्ययन से सम्बन्धित यह तीसरी इकाई है। दूसरी इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि सीता वन विहार के लिए चली गई हैं। इस इकाई के अन्तर्गत आप पंचवटी प्रवेश के पूर्वार्द्ध का अध्ययन करेंगे।

राम के सीता विषयक प्रेम को उद्दीप्त करने के उद्देश्य से कवि ने राम को पंचवटी में प्रविष्ट कराया है। इससे रामचन्द्र जी के चरित्र का विकास दिखलाया गया है तथा नाटकीय प्रवाह की सृष्टि हुई है।

पंचवटी के विभिन्न स्थान जो वनवास के समय सीता के साथ किये गये विविध विलासों के साक्षी थे, अपने दर्शन से उद्दीपक बनकर, बारह वर्ष तक भीतर ही भीतर घुटन पैदा करते हुए राम के सीता विषयक प्रेम को प्रदीप्त कर, अत एव राम को एकान्त जंगल में रुलाकर उनके मन को कुछ हलका कर सकें। इन सब उद्देश्यों की सिद्धि के लिए कवि ने 'शम्बूक वध' रूप उपयुक्त उपाय निकाल लिया है। इससे रामचन्द्र की मर्यादा सुरक्षित रह जाती है। वे स्वार्थ के वशीभूत होकर नहीं, अपितु अपनी प्रजा के हित के लिए ब्राह्मण-पुत्र के पुनरुज्जीवन के लिए पंचवटी में पदार्पण करते हैं।

## 3.2 उद्देश्य:-

**इस इकाई के अध्ययन के बाद आप**—

- वनों का महत्व समझ सकेंगे।
- प्राकृतिक आतिथ्य को जान सकेंगे।
- सत्संगति की महिमा का वर्णन कर सकेंगे।
- सज्जनों के चरित्र का विवेचन कर पायेंगे।
- मेधावी तथा मन्दबुद्धि विद्यार्थियों की पहचान कर पाएंगे।
- आदि काव्य रामायण के कारण की व्याख्या कर सकेंगे।
- शम्बूक वध का औचित्य समझ सकेंगे।
- तप के प्रभाव को जान सकेंगे।
- वैराज लोकों का स्वरूप समझ सकेंगे।
- पंचवटी के प्राचीन भूभागों से परिचित हो सकेंगे।
- दिन की कठोरता को पहचान सकेगे।
- पशु-पक्षियों की क्रियाओं को जान सकेंगे।

## 3.3 मुख्यभाग: खण्ड एक (श्लोक 1 से 9 तक) मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

(नेपथ्ये) स्वागतं तपोधनायाः!
(ततः प्रतिशत्यध्वगवेषा तापसी)
तापसी-अये! वनदेवता फलकुसुमगर्भेण पल्लवाघ्येण
दूरान्मामुपतिष्ठते। (प्रविश्य)
वनदेवता- (अर्घ्यं विकीर्य)

**यथेच्छाभोग्यं वो वनमिदमयं मे सुदिवसः**
**सतां सद्भिः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति।**
**तरुच्छाया तोयं यदपि तपसां योग्यमशनं**
**फलं व मूलं वा तदपि न पराधीनमिह वा।।1।।**

**अर्थ:**- (नेपथ्य में)तपस्विनी जी का स्वागत है!
(तदनन्तर पथिक वेष में तापसी प्रवेश करती है)
तापसी- अरे! फल और फूल से युक्त पल्लव के अर्घ्य द्वारा दूर से ही वनदेवी मेरी पूजा कर रही है। (प्रवेश कर)

**वनदेवी:-** (अर्घ्य देकर)'आप इस वन में इच्छानुसार भोग प्राप्त कीजिए। आज का यह दिन मेरे लिए बड़ा शुभ है। सज्जनों का सज्जनों के साथ समागम किसी प्रकार पुण्य के प्रभाव से ही होता है। वृक्षों की छाया, जल और जो भी तपस्या के लिए उपयुक्त भोजन है-फल या 'मूल' वह सब यहाँ आपके लिए पराधीन नहीं है।'

**व्याख्या:**- आरम्भ में एक तापसी, जिसका नाम आत्रेयी है, दण्डकारण्य में प्रवेश करती है। नेपत्थ में वनदेवी वासन्ती उसका स्वागत करती है। उसे देखकर तापसी कहती है कि -अरे! इस वन की देवी दूर से ही फल और फूलों से मिश्रित पल्लव निर्मित अर्घ्य से मेरी अर्चना कर रही है। वनदेवी पूजा पात्र से भूमि पर अर्घ्य देकर तापसी का स्वागत करती हुई कहती है कि यह वन आपकी इच्छानुसार भोगने योग्य है। आज का दिन मेरे लिए बड़ा शुभ है; क्यों कि आप पधारी हैं। सच तो यह है कि सत्पुरुषों का सत्पुरुषों से सम्बनध बड़े पुण्यों से होता है। वृक्षों की छाया, शीतल एवं निर्मल जल तथा तपस्या के लिए उपयुक्त भोजन, जो कुछ भी फल-मूल आदि हैं, वे भी आपके लिए अप्राप्य नहीं हैं अर्थात् यह वन आपका ही है। चाहे यहाँ से फल-फूल ग्रहण करें। आप इस विषय में स्वतन्त्र हैं।

**टिप्पणी:- अध्वगवेषा**-अध्वानं गच्छतीति अध्वगः। तस्य वेष इव वेषो यस्याःसा। **'स्वागतम्'** यहाँ चूलिका नामक अर्थोपक्षेपक है। क्योंकि जवनिका के अन्दर से आत्रेयी के आगमन रूप अर्थ की सूचना दी गई है। **यथेच्छाभोग्यम्-** यथेच्छं भोक्तुं योग्यम्। इच्छानुसार भोगने योग्य।

तापसी- किमत्रोच्यते?

**प्रियप्राया वृत्तिर्विनयमधुरो वाचि नियमः**
**प्रकृत्या कल्याणी मतिरनवगीतः परिचयः।**
**पुरोवा पश्चाद्वा तदिदमविपर्यासितरसं**
**रहस्यं साधूनामनुपधि विशुद्धं विजयते।।2।।**

**अर्थः-** तापसी- इस विषय में क्या कहा जाय?

'अतिशय प्रेम का बरताव, वाणी में नम्रतापूर्ण मधुर संयम, स्वभावतः कल्याण की बुद्धि, दोषरहित परिचय, इस प्रकार का सामने और पीछे एक सा रहने बाला सज्जनों का विशुद्ध निश्छल गूढ़ चरित्र सभी से उत्कृष्ट है।'

**व्याख्याः-** वनदेवी के सरस तथ्य, पथ्य और मधुर वचनों से प्रसन्न होकर तापसी कहती है कि- सज्जनों का परम शुद्ध चरित्र सदा विजयी होता है। उन का व्यवहार बड़ा प्रिय, उनकी वाणी में बड़ी मृदुता तथा संयम, बुद्धि स्वभाव से कल्याणकारिणी, अभिनन्दनीय परिचय तथा वे जो कुछ कहना चाहते हैं वह प्रत्यक्ष और परोक्ष में समान होता है। इसलिए उनका चरित्र सर्वोत्कृष्ट होता है।

**टिप्पणीः- प्रकृत्या कल्याणी मतिः-** ''प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्'' इस नियम से तृतीया। **विजयते-** सर्वोत्कर्षेण वर्तते। 'वि पराभ्यां जे' रित्यात्मनेपदम्।

**आत्रेयी-अस्मिन्नगस्त्यप्रमुखाः प्रदेशे भूयांस उद्गीथविदो वसन्ति।**

**तेभ्योऽधिगन्तुं निगमान्तविद्यां वाल्मीकिपार्श्वादिह पर्यटामि।।3।।**

**अर्थः-**आत्रेयी- 'इस वन प्रदेश में अगस्त्य आदि अनेक ब्रह्मवेत्ता ऋषि निवास करते हैं। उनसे वेदान्त विद्या को जानने के लिए मैं यहाँ वाल्मीकि जी के पास से आ रही है।'

**व्याख्याः-** दण्डकारव्य में प्रवेश का प्रयोजन पूछने पर आत्रेयी वनदेवी को सूचित करती है कि इस प्रदेश में अगस्त्य प्रभृति बहुत से ब्रह्मवेत्ता ऋषि रहते हैं। उनसे वेदान्त विद्या प्राप्त करने के लिए (पढ़ने के लिए मैं वाल्मीकि जी के पास से यहाँ आ रही हूँ)

**टिप्पणीः- आत्रेयी-** अत्रेर्गोत्रापत्यं स्त्री आत्रेयी, अत्रि के गोत्र में उत्पन्न होने से आत्रेयी नाम वाली। **वनदेवता**-यदा तावदन्येऽपि मुनयस्तमेव हि पुराणब्रह्मवादिनं प्राचेतसमृषिं ब्रह्मपारायणायोपासते, तत्कोऽयमार्यायाः प्रयासः। **आत्रेयी-**तस्मिन् हि महानध्ययनप्रत्यूह इत्येष दीर्घप्रवासोऽडगीकृतः।

वनदेवता-कीदृशः?

आत्रेयी - तत्र भगवता केनापि देवताविशेषेण सर्वप्रकाराद्भुतं स्तन्यत्यागमात्रके वयसि वर्तमानं दारकद्वयमुपनीतम्।................न त्वेताभ्यामति दीप्तिप्रज्ञाभ्यामस्मदादेः सहाध्ययनयोगोऽस्ति। यतः-

**वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जडे**

**न तु खलु तयोर्ज्ञाने शक्तिं करोत्यपहन्ति वा।**

**भवति हि पुनर्भूयान् भेदः फलं प्रति, तद्यथा**

**प्रभवति शुचिर्बिम्बग्राहे मणिर्न मृदादयः।।4।।**

**अर्थः-** वनदेवता- जब कि अन्य मुनिगण भी वेदाध्ययन के लिए उन्हीं पुराने बह्मवादी श्री वाल्मीकि जी के पास जाते हैं, तब उनके पास से आपका प्रवास क्यों?

आत्रेयीः- वहाँ अध्ययन में बड़ा विघ्न उपस्थित हो गया है। इसी लिए मुझे यह लम्बा प्रवास स्वीकार करना पड़ा।

वनदेवताः- कैसा विघ्न हो गया?

आत्रेयीः- वहाँ भगवान् वाल्मीकि को किसी देवता ने सर्वात्मना आश्चर्यकारी दुधमुंहे बच्चों का एक

जोड़ा समर्पित किया है।.........प्रखर प्रतिभाशाली उन दोनों के साथ हम जैसों का अध्ययन करना

सम्भव नहीं है। क्योंकि-

'गुरु जिस प्रकार बुद्धिमान् छात्र को विद्यादान करता है, उसी प्रकार मन्दबुद्धि को भी। वह न तो उन दोनो के ज्ञान में शक्ति बढ़ाता है और न घटाता है। परन्तु साथ-साथ पढ़ाये जाने पर भी परिणाम में बहुत भेद होता है। जैसे निर्मल मणि प्रतिबिम्ब को ग्रहण करने में समर्थ होता है, मिट्टी आदि पदार्थ नहीं।

**व्याख्याः-**अपने अध्ययन में विघ्न के हेतु को प्रकारान्तर से प्रस्तुत करती हुई आत्रेयी कहती है कि गुरु जिस प्रकार मेधावी छात्र को विद्या प्रदान करता है उसी प्रकार मूर्ख को भी करता है, किन्तु वह उनमें ज्ञान को ग्रहण करने का सामर्थ्य तो उत्पन्न या नष्ट नहीं करता। वह तो उनमें अपना ही होता है। गुरु द्वारा एक जैसा विद्यमान होने पर भी दोनों के विद्या ग्रहण करने के परिणाम में बहुत अन्तर होता है जैसे कि उज्ज्वल मणि प्रतिबिम्ब को ग्रहण करने में समर्थ होता है, परन्तु मिट्टी आदि मलिन पदार्थ बिम्ब को ग्रहण करने में समर्थ नहीं होते।

**टिप्पणीः- पुराणब्रह्मवादिनम्-** पुराणश्चासौ ब्रह्मवादी तम्।

प्राचेतसम्- वाल्मीकि को।

आत्रेयी-अथ स ब्रह्मर्षिरेकदा माध्यन्दिनसवनाय नदीं तमसामनुप्रपन्नः।

तत्र युग्मचारिणोः क्रौंचयोरेकं व्याधेन वध्यमानं ददर्श। आकस्मिक प्रत्यवभासां देवीं वाचमनुष्टुभेन छन्दसा परिणतामभ्युदैरयत्।

**मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।**
**यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।5।।**

**अर्थः-**आत्रेयी- यह सब होने के बाद, वे ब्रह्मषि वाल्मीकि एक दिन माध्याह्नस्नान करने के लिए तमसा नदी पर गये। वहाँ सदा एक दूसरे के साथ विचरने वाले क्रौंच और क्रौंची के जोड़े में से एक को व्याध द्वारा मारे जाते हुए देखा। तब उन्होंने सहसा प्रादुर्भूत 'अनुष्टुप्' छन्दोबद्ध वाणी कही- 'अरे निषाद! तू शाश्वत वर्षों तक शान्ति मत प्राप्त कर; क्यों कि इस क्रौंच के जोड़े में से काम से मोहित एक पक्षी को तूने मार डाला है।'

**व्याख्याः**- दूसरे विघ्न के विषय में आत्रेयी बताती है कि एक दिन महर्षि मध्याह्न कालिक स्नान के लिए तमसा नदी पर गये। वहाँ उन्होने परस्पर विहार करने वाले क्रौंच नाम के सारस पक्षियों के जोड़े में से एक को किसी बहेलिए के द्वारा मारे जाते हुए देखा। इस करुण दृश्य को देखकर उन्होंने सहसा प्रकट हुए अनुष्टुप् छन्द में वाग्देवता का इन शब्दों में उच्चारण किया- अरे! पापी क्रूर निषाद! तू बहुत समय तक प्रतिष्ठा को प्राप्त न करे, क्यों कि तूने काम से मोहित, क्रौंची सहचर क्रौंच का वध कर दिया है।

**टिप्पणीः- माध्यन्दिनसवनाय**- मध्याह्नकालिक स्नान एवं सन्ध्या के लिए। **तमसा-** गंगा के समीप ही प्रवाहित होने वाली एक नदी। **आकस्मिकप्रत्यवभासाम्-** आकस्मिकः प्रत्यवभासः यस्यास्ताम्। जो सहसा प्रकाशित हुई।

आत्रेयी - तेन हि पुनःसमयेन तं भगवन्तमाविर्भूतशब्दब्रह्म
प्रकाशमृषिमुपसंगम्य भगवान् भूतभावनः पयोन्प्रिवोचत्-
'ऋषे! प्रबुद्धोऽसि वागात्मानि ब्रह्मणि। तेन ब्रूहि रामचरितम्।
(सा०म्)अप्येतत्तपोवनम्? अप्येवा पंचवटी? अपि सरिदियं गोदवरी? अप्ययं गिरिः प्रस्रवणः? अपि जनस्थानवनदेवता त्वं वासन्ती?

वनदेवता- तथैव तत्सर्वम्।

आत्रेयी- हा वत्से जानकि।

**स एव ते वल्लभबन्धुवर्गः प्रासंगिकीनां विषयः कथानाम्।**
**त्वां नामशेषामपि दृश्यमानः प्रत्यक्षदृष्टामिव नः करोति।।6।।**

**अर्थः**- आत्रेयी- उस समय, शब्दब्रह्म के नवीन प्रकाश से चमत्कृत हृदय वाले भगवान् वाल्मीकि के पास आकर जगत्स्रष्टा भगवान् ब्रह्मा ने कहा- 'ऋषिवर! आपको शब्द ब्रह्म का बोध हुआ है। इससे

आप रामचरित का वर्णन करें।..............(आंसू भरकर) क्या यह तपोवन है? क्या यह पंचवटी है? क्या यह नदी गोदावरी है? क्या यह पर्वत प्रवण है? और क्या तुम जनस्थान की वनदेवता वासन्ती हो?

वासन्ती- यह सब कुछ वही है।

आत्रेयी- हा वत्से सीते!

(प्रायः प्रसंग आने पर जिसकी चर्चा रहती थी) 'वह अनेक प्रासंगिक कथाओं का विषय यह तुम्हारे प्रियबन्धुओं का समूह आंखो के सम्मुख उपस्थित होकर, नाम मात्र से अवशिष्ट भी तुम को प्रत्यक्ष सी दिखा रहा है।

**व्याख्या:-**वासन्ती के वचनों से पंचवटी को जानकर करुणा के साथ सीता का स्मरण करके आत्रेयी कहती है कि- वेटी सीते! तुम्हारे वनवास के साथी जिन पंचवटी गोदावरी, प्रवण गिरि और वनदेवी वासन्ती आदि की चर्चा प्रत्येक अवसर पर मैं सुना करती थी, वे सब यहाँ मेरे सम्मुख उपस्थित हैं। इन्हें देखकर मुझे ऐसा लग रहा है मानो कि मैं तुम्हे अपने सामने देख रही हूँ, परन्तु तुम्हारा तो अब नाम ही केवल शेष रह गया है।

**टिप्पणी:-**पंचवटीम्- पंचानां वटानां समाहारः पंचवटी ताम्। द्वि0स0। **वल्लभबधुवर्गः**-बन्धूनां वर्गः बन्धुवर्गः। वल्लभो बन्धुवर्गः वल्लभबन्धुवर्गः। **प्रत्यक्षदृष्टाम्-** साक्षादवलोकिताम् इवेति सम्भावनायाम्।

वासन्ती-हन्त भो!

**वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।**

**लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति।।7।।**

**अर्थ:-**अहो!''वज्र से भी कठोर और पुष्प से कोमल, लोकोत्तर पुरुषों के हृदयों को भला कौन समझ सकता है।''

**व्याख्या:**- 'स्वर्णमयी सीता को धर्मपत्नी मान कर राम ने अश्वमेध आरम्भ किया है' यह सुनकर वासन्ती कहती है कि वस्तुतः अलौकिक महापुरुषों का हृदय कब कैसा हो जाता है। इसका किसी को पता नहीं। श्रीरामचन्द्रजी का हृदय जहाँ सीता परित्याग के समय अतिशय कठोर हो गया था वहाँ यज्ञ में सीता की प्रतिकृति से ही उसे सम्पन्न करना उनके हृदय की अलौकिक मृदुता को प्रकट करता है।

**आत्रेयी:-** अत्रान्तरे ब्राह्मणेन मृतं पुत्रमुत्क्षिप्य राजद्वारे सोरस्ताडमब्रह्मण्यमुद्घोषितम्। ततो' न राजापचारमन्तरेण प्रजानामकालमृत्युः संचरती'त्यात्मदोषं निरूपयति करुणामये रामभद्रे सहसैवाशरीरिणी वागुदचरत्-

**शम्बूको नाम वृषलः पृथिव्यां तप्यते तपः।**

**शीर्षच्छेद्यः स ते राम! तं हत्वा जीवय द्विजम्।।8।।**

**अर्थः-** आत्रेयी- इसी बीच एक ब्राह्मण ने अपने मरे हुए पुत्र को हाथ में उठाये हुए राजद्वार पर पहॅुच कर छाती पीट पीटकर ब्राह्मणों के अहित की चीख मचाई, तब 'राजा के दोष के विना प्रजा की अकाल मृत्यु नहीं होती' यह जानकर करुणामय श्रीराम ज्यों ही अपने दोष को मन में खोजने लगे, त्यों ही सहसा यह आकाशवाणी हुई-शम्बूक नाम का शूद्र पृथ्वी पर तप कर रहा है, उसका सिर तुम्हारे द्वारा काटा जान उचित है। हे राम! उसे मारकर ब्राह्मण को जीवित करो।'

**व्याख्याः**- ब्राह्मण पुत्र की मृत्यु के पश्चात् आकाशवाणी का उल्लेख करती हुई आत्रेयी कहती है कि राम के समक्ष देववाणी उच्चारित हुई कि शम्बूक नाम का शूद्र पृथ्वी पर तप कर रहा है। उसका शिरच्छेदन कर आप ब्राह्मण बालक को जीवित करें। इसके शिशु की प्राणप्राप्ति का यही एक उपाय है। सभी वर्णो की सेवा करना ही शूद्र का कार्य है। उसे छोड़कर तप करने से व्यवस्था भंग मृत्यु का कारण है। ब्राह्मण धर्म के आचार्य हैं। अन्यायपूर्ण आचरण होने से उनके पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं।

**टिप्पणी**- **वृषलः** शूद्रः। 'शूद्राश्चावरणाश्च वृषलाश्च जघन्यजाः'इत्यमरः। **शीर्षच्छेद्यः**-शीर्षच्छेदं नित्यमर्हतीति शीर्षच्छेद्यः 'शीर्षच्छेदाद्यच्च'

वासन्ती- आर्ये आत्रेयी! एवमस्तु! कठोरश्च दिवसः। तथाहि-

**कण्डूलद्विपगण्डपिण्डकषणोत्कम्पेन सम्पातिभि-**
**र्घर्मस्रंश्रितबन्धनैश्च कुसुमैरर्चन्ति गोदावरीम्।**
**छायापस्किरमाणविष्किरमुखव्याकृष्टकीटत्वचः-**
**कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कूले कुलायद्रुमाः।।9।।**

**अर्थः-** वासन्ती- आत्रेयी जी! अच्छी बात है। दिन कठोर भी हो चला है।

देखिये-''गोदावरी तट के ये गर्मी से कुलकुलाते कबूतरों और जंगली मुर्गो वाले वृक्ष, जो अनेक घोंसलों के आश्रय हैं तथा जिनकी छाया में पक्षीगण पंजों से भूमि को कुरेद रहे हैं और चौंच से (वृक्षों की) त्वचा के भीतर से कीड़ों को खींचकर निकाल रहे हैं। खुजलाहट से युक्त हाथी द्वारा खोपड़ी को रगड़ने से उत्पन्न कम्पन के कारण झड़कर गिरते हुए गर्मी से ढीले डण्ढल वाले फूलों द्वारा गोदावरी की अर्चना कर रहे हैं।''

**व्याख्याः**- विश्राम करके आत्रेयी जाना चाहती है तब दिन की कठोरता का वर्णन करती हुई वासन्ती कहती है कि आर्ये आत्रेयी! ऐसा ही हो! बहुत अच्छा! जाइए! क्योंकि दिन भी सूर्य की प्रखर किरणों से असह्य हो रहा है। नीचे छाया में पंजों से जमीन को कुरेदते हुए पक्षियों द्वारा अपनी चौंच से जिनकी

त्वचा में से कीड़े खींचे गये हैं। ऊपर जो कुल-कुल शब्द करते हुए गर्मी से विकल कबूतरों और जंगली मुर्गों के समूह से युक्त हैं। ऐसे पक्षियों के घोंसलों वाले वृक्ष धूप के कारण शिथिल डण्ढलों वाले और खुजलाहट युक्त हाथी द्वारा खोपड़ी को रगड़ने के कारण वृक्ष के हिल जाने से किनारे के ऊपर झड़कर गिरते हुए अपने फलों से गोदावरी नदी को पूज रहे हैं।

**टिप्पणी:-** यह शुद्ध विष्कम्भक है। इसके द्वारा कवि ने संक्षेप में भूतकालिक सीता निर्वासन तथा कुशलवोत्पत्ति और आगामी शम्बूक वध के निमित्त राम का पुनः जनस्थान में प्रवेश निर्देशित किया है।

## अभ्यास प्रश्न-1

1. एक शब्द में उत्तर दीजिए?

क- पथिक वेष मे कौन प्रवेश करती है?
ख- तापसी को कौन अर्घ्य प्रदान करती है?
ग- स्वागतं तपोधनायाः में कौन सा अर्थोपक्षेपक है?
घ- वाल्मीकि के आश्रम से कौन आयी है?

2. एक वाक्य में उत्तर दीजिएः

क- किसका चरित्र सर्वोत्कृष्ट होता है?
ख- सज्जनों का संग किसके प्रभाव से होता है?
ग- अगस्त्य आदि ऋषि कहाँ निवास करते हैं?
घ- भगवान् वाल्मीकि को किसने बच्चों का एक जोड़ा समर्पित किया है?

3. सत्य/असत्य बताइएः

क- वाल्मीकि पुराणब्रह्मवादी ऋषि हैं।
ख- गुरु सभी शिष्यों को समान रूप से विद्यादान नहीं करते हैं।
ग- मिट्टी आदि पदार्थ बिम्ब को ग्रहण करने में समर्थ नहीं होते हैं।
घ- राजदोष के विना प्रजा की अकाल मृत्यु नहीं होती।

4. सही विकल्प छांटकर लिखिएः

क- सहसा प्रादुर्भूत 'अनुष्टुप्' छन्दोबद्ध वाणी कही

(अ) अगस्त्य ने (ब) ऋष्यशृड्.ग ने

(स) वशिष्ठ ने (द) वाल्मीकि ने

5. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

क- वज्रादपि कठोराणि मृदूनि -------------।
ख- शम्बूको नाम वृषलः ---------- तप्यते तपः।
ग- मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः -------- समाः।
घ- स एव ते वल्लभबन्धुवर्गः -----विषयः कथानाम्।

## 3.4 खण्ड दो (श्लोक 10 से 15 तक) मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

रामः - (सकृपाणं पाणिं पश्यन्)

**हे हस्तदक्षिण! मृतस्य शिशोर्द्विजस्य**
**जीवातवे विसृज शूद्रमुनौ कृपाणम्।**
**रामस्य बाहुरसि निर्भरगर्भखिन्न -**
**सीताविवासनपटोः करुणा कुतस्ते ?।। 10।।**

**अर्थः-** ''अरे दायें हाथ! ब्राह्मण के मरे हुए पुत्र को जिलाने के लिए शूद्र मुनि पर तलवार का प्रहार कर ! तू तो पूरे गर्भ के भार से खिन्न सीता को घर से निकाल देने में दक्ष राम का हाथ है, तुझे करुणा कहाँ ?''

**व्याख्या**:- विष्कम्भक के पश्चात् सदय हाथ में तलवार लिए राम प्रवेश करते हैं। वे शूद्रमुनि पर प्रहार करने के लिए अपने दायें हाथ को प्रेरित करते हैं- हे दक्षिण हस्त! तू ब्राह्मण के मृत बालक के जीवन के लिए शूद्र तपस्वी पर कृपाण छोड़। इस विषय में हिचक क्यों करता है। तू तो परिपूर्ण गर्भ से खिन्न प्रियतमा सीता का परित्याग करने में पटु राम का हाथ है। अतः तुझ में करुणा कहाँ से आयी ?

**टिप्पणीः**- रे दक्षिण हस्त ! यह राम का अपने दायें हाथ के प्रति सम्बोधन है। कृपाणम्-'कृपाम् आ समन्तान्नयति'- इस व्युत्पत्ति से यह प्रयोग 1- ब्राह्मण शिशु को जीवन दान तथा 2- शूद्रमुनि को उत्तम लाकों की प्राप्ति कराने से दो कार्यों का साधक है।

(प्रविश्य)दिव्य पुरुषः- जयतु देवः ।

**दत्तभये त्वयि यमादपि दण्डधारे**
**संजीवितः शिशुरसौ मम चेयमृद्धिः ।**
**शम्बूक एव शिरसा चरणौ नतस्ते**

**सत्सङ्गजानि निधनान्यपि तारयन्ति ।। 11।।**

**अर्थः**- (प्रवेश करके)

दिव्य पुरुष- महाराज की जय हो।

''यम के भय से भी मुक्ति देने वाले आपके दण्ड धारण करने पर वह ब्राह्मण बालक जीवित हो उठा है और मेरी यह दिव्य समृद्धि हुई है। यह शम्बूक सिर झुकाकर आपके चरणों में प्रणाम करता है। सत्संग से उत्पन्न मृत्यु भी तारने वाली होती है।''

**व्याख्या**:- दिव्य रूप को पाकर शम्बूक राम को प्रणाम करता हुआ कहता है कि देव ! आपकी सदा विजय हो महाराज! आप सबको अभय प्रदान करने वाले हैं। अनुचित कार्य करने पर यमराज को भी दण्डित करने वाले आपके अनुग्रह से यह ब्राह्मण शिशु जीवित हो उठा और मेरी यह प्रत्यक्षतः वर्तमान अलौकिक शोभा हो गयी। शम्बूक नामक यह आपका अनुगृहीत सेवक सविनय चरणों में प्रणत है। यह सच है कि सत्पुरुषों के संग से होने वाले निधन भी संसार सागर से प्राणियों का उद्धार कर देते हैं।

**टिप्पणीः- दत्ताभये** - दत्तम् अभयं येन, तस्मिन्। **यमात् -** ''भीत्रार्थानां भयहेतुः'' से पंचमी। **राम**:- द्वयमपि प्रियं नः, तदनुभूयतामुग्रस्य तपसः परिपाकः।

**यत्रानन्दाश्च मोदाश्च यत्र पुण्याश्च संपदः।**
**वैराजा नाम ते लोकास्तैजसाः सन्तु ते शिवाः।। 12।।**

**अर्थः-** राम-दोनों ही बातें हमें प्रिय हैं, सो अपने उग्र तप का फल भोगो।

'जहाँ अनेक आनन्द, प्रसन्नताएँ और पवित्र सम्पत्तियाँ हैं, वे वैराज नाम के प्रकाशमय लोक तुम्हें अनन्तकाल तक कल्याणकारी हों।'

**व्याख्या**:- शुभ समाचार सुनकर प्रसन्न हुए श्रीराम शम्बूक से कहते हैं कि ब्राह्मण पुत्र का जीवित होना और तुम्हारी समृद्धि ये दोनों ही बातें मेरे लिए प्रसन्नता की हैं। इसलिए अब तुम इस उग्र तपस्या के फल का अनुभव करो। तुमने अपने उग्र तप से जिन वैराज नामक तैजस लोकों को संचित किया है। वे तुम्हारे लिए कल्याणकारी हों। उन लोकों में तुम्हारे जैसे अनेक तपस्वी निवास करते हैं उनके साथ तुम आत्मिक सुख प्राप्त करोगे। वहाँ की पवित्र सम्पत्तियों का तुम स्वेच्छा से भोग करोगे।

**टिप्पणीः- यत्रानन्दाश्च मोदाश्च**-''आनन्दा आत्मानुभवजन्या हर्षाः मोदाश्च दिव्यविषयानुभवजन्या हर्षाः।''

शम्बूकः-स्वामिन्! युष्मत्प्रसादादेवैषा महिमा। किमत्र तपसा ? अथवा महदुपकृतं तपसा।

**अन्वेष्टव्यो यदसि भुवने लोकनाथः शरण्यो,**
**मामन्विष्यन्निह वृषलकं योजनानां शतानि।**

**क्रान्त्वा प्राप्तः स इह तपसां संप्रसादोऽन्यथा तु**
**क्वायोध्यायाः पुनरुपगमो दण्डकायां वने वः।।13।।**

**अर्थः-** शम्बूक-प्रभो ! आपके अनुग्रह से ही मुझे यह महिमा प्राप्त हुई है। इसमें तपस्या का क्या प्रभाव है ? अथवा तप ने बहुत उपकार किया है, (क्योंकि)- 'जो कि संसार में (बड़ी-बड़ी तपस्याएँ कर मुनियों के द्वारा) अन्वेषणीय, लोकों के स्वामी तथा शरणागत वत्सल हैं; वही आप मुझ शूद्र को खोजते हए सैकड़ों योजन लांघकर यहाँ आये हैं- यह तप का ही प्रभाव है अन्यथा अयोध्या से दण्डक वन में आपका पुनः आगमन कहाँ सम्भव था ?'

**व्याख्या**:- देव शरीर धारी शम्बूक सर्वैश्वर्य सम्पन्न राम को संबोधित करते हुए कहता है- स्वामिन् ! मुझे अलौकिक शोभा की प्राप्ति आपकी कृपा से ही हुई है, इसमें तपस्या का क्या प्रभाव है अथवा तप के द्वारा यह महान् उपकार किया गया है। आप लोकनाथ हैं। सारे मनुष्य लोक में आपका राज्य है। आप शरण्य हैं। सब विपन्नजन अपनी विपत्ति के निवारणार्थ आप ही की शरण में जाते हैं। भुवन भर में अन्वेषणीय होते हुए भी आप मुझ क्षुद्र वृषल को खोजते हुए सैंकड़ों योजन भूमि को लांघकर जो यहाँ स्वयम् आ उपस्थित हुए हैं। यह तप की ही तो कृपा है, नहीं तो अयोध्या से दण्डकवन में फिर आपका आगमन कैसे होता ?

**टिप्पणी**:- **स्वामिन्!** यह शम्बूक का राम के लिए सम्बोधन है। यहाँ शम्बूक स्वयं को सेवक और राम को स्वामी के रूप में देख रहा है। **महिमा** - महतो भावो महिमा। **शरण्यः** - शरणे साधु इति शरण्यः।

रामः- किं नाम दण्डकेयम् ? (सर्वतोऽवलोक्य) हा, कथम् -

**स्निग्धश्यामाः क्वचिदपरतो भीषणाभोगरूक्षाः**
**स्थाने-स्थाने मुखरकुकुभो झाङ्कृतैर्निर्झराणाम्।**
**एते तीर्थाश्रमगिरिसरिद्गर्तकान्तारमिश्राः**
**संदृश्यन्ते परिचितभुवो दण्डकारण्यभागाः।। 14।।**

**अर्थः-** राम- क्या यह दण्डकारण्य है ? (चारो ओर देखकर) हा! कैसे? 'कहीं सरस हरियाले, कहीं भयंकर विस्तार से रूखे, जगह-जगह झरनों की झंकार से झंकृत दिशाओं वाले तीर्थों, आश्रमों, पर्वतों, नदियों, गड्ढों और सघन वनों से युक्त ये पूर्व परिचित दण्डकारण्य के भूभाग सामने दिखाई दे रहे हैं।

**व्याख्या**:- शम्बूक के मुख से दण्डक शब्द सुनते ही राम को बीती याद आती है और वे दण्डकवन का वर्णन करते हुए कहते हैं कि हन्त! इस दण्डकवन में ये हमारे पूर्व परिचित भू भाग कैसे प्रतीत हो रहे हैं ? यहाँ जिस प्रकार कहीं कठोर भूमि है और कहीं कोमल; उसी प्रकार यहाँ किसी स्थल को देखने से मृदु स्मृति आ रही है और किसी स्थल को देख-देखकर भयंकर। अतः ये भूभाग कोमल और कठोर दोनों प्रकार की अनुभूति करा रहे हैं।

**टिप्पणी**:- मुखरककुभः- मुखराः ककुभः येषां ते मुखरककुभः। (बहु0 समास)

शम्बूकः- दण्डकैवैषा। अत्र किल पूर्वं निवसता देवेन-

**चतुर्दश सहस्राणि चतुर्दश च राक्षसाः।**
**त्रयश्च दूषणखरत्रिमूर्धानो रणे हताः।। 15।।**

**अर्थः-** यह दण्डकारण्य ही है; जहाँ पहले निवास करते हुए आपने - 'चौदह हजार और चौदह राक्षसों तथा दूषण,खर और त्रिशिरा-इन तीनों को युद्ध में मारा था।'

**व्याख्याः**- दण्डकवन के पूर्व वृतान्त का स्मरण कराता हुआ शम्बूक राम से कहता है कि यहाँ पहले रहते हुए आपने चौदह हजार चौदह निशाचरों तथा प्रमुख राक्षसों के नामक खर,दूषण और त्रिशिरा को युद्ध मे मार दिया था। अतः यह वही दण्डकारण्य है।

**टिप्पणी**:- दण्डका- दण्डयति राक्षसैर्विहितेन दण्डनिपातेन नागराणां देहं नाशयतीति दण्डका। **देवेन-** यहाँ शम्बूक ने राम के लिए 'देव' शब्द का प्रयोग किया है। जो राजा के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

## अभ्यास प्रश्न-2

1- एक शब्द में उत्तर दीजिए:

क- हाथ में तलवार लिए कौर प्रवेश करते हैं ?
ख- राम के दायें हाथ में क्या नहीं है ?
ग- शूद्र तपस्वी का क्या नाम है ?
घ- वैराज लोक कैसे हैं ?

2- एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

क- राम का हाथ किस कार्य में दक्ष है ?
ख- राम के अनुग्रह से कौन जीवित हो उठा ?
ग- सत्संग से उत्पन्न मृत्यु कैसी होती है ?
घ- राम के चरणों में किसने प्रणाम किया ?

3- सत्य/असत्य बताइए ?

क- राम के प्रसाद से शम्बूक दिव्य स्वरूप प्राप्त करता है।
ख- वैराज लोकों में पवित्र सम्पत्तियाँ हैं।

ग- शम्बूक स्वयं को सेवक नहीं समझता है।

घ- राम ने पुनः दण्डकारण्य में प्रवेश नहीं किया।

4- सही विकल्प छांटकर लिखिए:

क- दण्डकवन में राम का आगमन हुआ -

(अ) लंका से (ब) चित्रकूट से

(स) प्रयाग से (द) अयोध्या से

5- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

क- वैराजा नाम ते लोकास् ---- सन्तु ते शिवाः।

ख- अन्वेष्टव्यो यदसि भुवने -------शरण्यः।

ग- स्निग्धश्यामाः क्वचिदपरतो -------- ।

घ- चतुर्दशसहस्राणि ---------राक्षसाः।

## 3.5 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि आत्रेयी वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में अध्ययन करने वाली तपस्विनी है। वह उनके आश्रम को छोड़कर अगस्त्य आश्रम में जा रही है। वाल्मीकि के यहाँ अध्ययन में दो विघ्न उपस्थित हो रहे हैं। एक तो वाल्मीकिजी आजकल रामायण का प्रणयन कर रहे हैं। दूसरे गंगा देवी ने वाल्मीकि जी के पास कुश और लव नामक दो बालकों को छोड़ दिया है, जिनको जन्म से ही जृम्भकास्त्र सिद्ध हैं। जिनके साथ आत्रेयी का अध्ययन नहीं हो पाता है। वह वासन्ती से अगस्त्य आश्रम का मार्ग पूछती हैं दोनों के सीता विषयक वार्तालाप से सूचना मिलती है कि सीताजी शापवश निर्वासित कर दी गई हैं। ऋष्यशृंग का यज्ञ समाप्त हो गया है। रामचन्द्र जी ने अश्वमेध आरम्भ कर दिया है। राज्य में एक ब्राह्मण पुत्र की मृत्यु हुई है। वह तभी जीवित हो सकता है जब राम जनस्थान में तपस्या करने वाले शूद्रमुनि शम्बूक का वध करें। अतः राम का जनस्थान में उपस्थित होना निश्चित है। विष्कम्भक समाप्त होता है।रामचन्द्र जी जनस्थान में उपस्थित होकर शम्बूक का वध कर देते हैं। वह दिव्य पुरुष बनकर ब्राह्मण पुत्र के जीवित हो जाने की सूचना देता है और राम की स्तुति करता है। राम शम्बूक के तप की महिमा का वर्णन करते हैं। उसकी उक्तियों से रामचन्द्रजी समझ लेते हैं कि वे उस समय जनस्थान में हैं।

## 3.6 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| अर्घ्यम् | - | अर्घः पूजाविधिः, अर्घाय हितम् अर्घ्यम्। फल, पुरुष आदि पदार्थों को जल सहित पूज्य जनों को दिया जाना अर्घ्यदान कहलाता है। |
| प्रियप्राया | - | प्रिया प्रायेणेति प्रियप्राया। सज्जनों का व्यवहार सभी के साथ प्रायः प्रिय होता है। |
| अविपर्यासितरसम् | - | विपर्यासितो रसो यस्य तद्विपर्यासिरसं, तथा न भवतीति अविपर्यासिरसम् तुल्य सुखम् इत्यर्थः। |
| दण्डकारण्योपवनप्रचारः | - | दण्डकारण्यस्योपवनमिति दण्डकारण्योपवनम्, पर्यटनम् इत्यर्थः। |
| त्रयीवर्जम् | - | त्रयीं वर्जयित्वा। त्रयी$वर्जि (चुरादि) णमुल्। |
| ब्रह्मर्षिः | - | ब्रह्मा चासौ ऋषिः ब्रह्मर्षिः। जो जन्मना ब्राह्मण होते हैं। |
| एकदा | - | एकस्मिन् काले एकदा। |
| वध्यमानम् | - | वध्यत इति वध्यमानस्तम्। |
| आविर्भूतशब्दब्रह्मप्रकाशम् | - | आविर्भूतः शब्दब्रह्मणः प्रकाशो यस्मिन्। वैयाकरणों के अनुसार शब्द ब्रह्मरूप है। |
| भूतभावनः | - | भावयति जनयतीति भावनः, भूतानां भावनः इति भूतभावनः संसारोत्पादक। |

**अभ्यास प्रश्न**

खण्ड एक 1-

क- तापसी

ख- वनदेवता

ग- चूलिका

घ- आत्रेयी

2-

क- सज्जनों का चरित्र सर्वोत्कृष्ट होता है।

ख- सज्जनों का संग किसी पुण्य के प्रभाव से होता हैं।

ग- अगस्त्य आदि ऋषि दण्डकारण्य में निवास करते हैं।

घ- किसी देवता ने भगवान् वाल्मीकि को बच्चों का एक जोड़ा सौंपा है।

3-

क- सत्य

ख- असत्य

ग- सत्य

घ- सत्य

4- वाल्मीकि ने

5-

क- कुसुमादपि

ख- पृथिव्यां

ग- शाश्वतीः

घ- प्रासङ्गिकीनाम्

खण्ड दो

1-

क- राम

ख- करुणा

ग- शम्बूक

घ- तैजस

2-

क- राम का हाथ सीता का परित्याग करने में दक्ष है।

ख- राम के अनुग्रह से ब्राह्मण पुत्र जीवित हो उठा।

ग- सत्संग से उत्पन्न मृत्यु भी तारने वाली होती है।

घ- राम के चरणों में शम्बूक ने प्रणाम किया।

3-

क- सत्य

ख- सत्य

ग- असत्य

घ- असत्य

4- (स) अयोध्या से

5-

क- तैजसाः

ख- लोकनाथः

ग- भीषणाभोगरूक्षाः

घ- चतुर्दश च

## 3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1- भवभूति, उत्तररामचरित , व्याख्या-आचार्य प्रभुदत्त स्वामी, (1988) ज्ञान प्रकाशन, मेरठ-2

2- भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या-डॉ0 कृष्णकान्त शुक्ल (1986-87) साहित्यभण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

## 3.9 सहायक पाठ्य सामग्री:-

1- भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या-डॉ0 रमाकान्त त्रिपाठी, (2008) चौखम्बासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी-221001

2- भरतमुनि, नाट्यशास्त्र, अनु0 डॉ0 रघुवंश, (1964) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली

## 3.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1- उत्तररामचरित की नाटकीय विशेषताएँ बताइए ?

2- भवभूति और कालिदास की तुलना कीजिए ?

3- 'कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते' इस कथन की व्याख्या कीजिए ?

4- उत्तररामचरित में प्रकृति-चित्रण के वैशिष्ट्य का निरूपण कीजिए ?

# इकाई 4: उत्तररामचरितम् -द्वितीय अंक का उत्तरार्द्ध

इकाई की संरचना


4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 मुख्य भागः खण्ड एक ( श्लोक 16 से 23 तक )
मूलपाठ, अर्थ,व्याख्या एवं टिप्पणी

4.4 खण्ड दो ( श्लोक 24 से 30 तक )
मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

4.5 सारांश

4.6 शब्दावली

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.9 सहायक पाठ्य सामग्री

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

## 4.1 प्रस्तावना:-

भारतीय नाट्य एवं नाट्यशास्त्र से सम्बन्धित यह चौथी इकाई है। तीसरी इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि शम्बूक वध के पश्चात् दिव्य पुरुष बनकर ब्राह्मण पुत्र के जीवित हो जाने की सूचना देता है तथा रामचन्द्रजी से आशीर्वाद प्राप्त करता है। इस इकाई के अन्तर्गत आप पंचवटी प्रवेश के उत्तरार्द्ध का अध्ययन करेंगे। रामचन्द्रजी के सीता विषयक प्रेम की पुष्टि के लिये यह आवश्यक है कि वे जिन स्थानों पर उनके साथ रहे थे, उनका एक बार दर्शन अवश्य करें। अपनी प्रजा के हित के लिए, ब्राह्मण-पुत्र के उद्धार के लिए उनका इस स्थान में प्रवेश होता है; किन्तु पूर्वपरिचित स्थान में आकर वे सीता जी को भुला नहीं पाते। वे पति तथा राजा दोनों ही रूपों में लोकोत्तर हैं। बारह वर्ष तक अन्दर ही अन्दर सिसकता राम का सीता विषयक प्रेम वन में आकर प्रदीप्त हो उठता है। उनका प्रजानुरंजन का आदर्श उनके पत्नी प्रेम को अरण्यरोदन बना देता है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप बता सकेंगे कि यहाँ बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से रामचन्द्र जी के चरित्र का विकास हुआ है, जो कवित्व, अनुभूति और सत्यता से ओत-प्रोत है।

## 4.2 उद्देश्य:-

इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुभूति कर सकेंगे।
- विशुद्ध प्रेम का प्रभाव समझ सकेंगे।
- देवयान मार्ग का विश्लेषण कर सकेंगे।
- संसार की परिवर्तनशीलता को जान पाएंगे।
- वन्य जीवों की चेष्टाएं पहचान सकेंगे।
- प्रकृति प्रेम का अनुभव कर सकेंगे।
- प्रियजन के विरह को समझ सकेंगे।
- महापुरुषों के जीवन की व्याख्या कर सकेंगे।

## 4.3 मुख्य भागः खण्ड एक ( श्लोक 16 से 23 तक )
## मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

**निष्कूजस्तिमिताः क्वचित्क्वचिदपि प्रोच्चण्डसत्त्वस्वनाः**
**स्वेच्छासुप्तगभीरभोगभुजगश्वासप्रदीप्ताग्नयः।**
**सीमानः प्रदरोदरेषु विरलस्वल्पाम्भसो यास्वयं**
**तृष्यद्भिः प्रतिसूर्यकैरजगरस्वेदद्रवः पीयते ।। १६।।**

**अर्थः-** कहीं एकदम निस्तब्धता छायी है और कहीं हिंसक पशुओं का घोर गर्जन सुनाई पड़ रहा है। कहीं स्वेच्छा से सुखपूर्वक सोये हुए मोटे-मोटे सर्पो की फुङ्कारों से आग धधक उठी है। कहीं-कहीं गड्ढों में थोड़ा सा पानी पड़ा हुआ है और कहीं प्यास से व्याकुल गिरगिट अजगर के पसीने को पीकर अपनी प्यास बुझा रहे हैं।

**व्याख्याः-** जनस्थान के वन प्रदेशों से परिचय कराता हुआ शम्बूक श्रीरामचन्द्र से कहता है कि इस भयंकर वन के सीमान्त प्रदेशों में कहीं पर तो पक्षियों का कूजन भी सुनाई नहीं दे रहा है और कहीं दूसरे भाग में भयंकर जंगली प्राणियों के शब्द सुनाई पड़ रहे हैं अन्यत्र सानन्द सोये हुए विशालकाय अजगर तीव्र श्वास छोड़ रहे हैं; जिससे सर्वत्र आग फैल रही है। कहीं पर्वतीय गड्ढों के मध्य भाग में थोड़ा सा पानी झिलमिला रहा है और कहीं प्यास से बेचैन गिरगिट पानी न मिलने के कारण अजगर के शरीर से निकले पसीने को पीकर अपनी प्यास शान्त कर रहे हैं।

**टिप्पणीः-** प्रकृति के चतुर 'चित्रकार' भवभूति ने अपने नाटकों में प्रकृति का बहुत ही सूक्ष्म एवं यथार्थ चित्रण किया है। यहाँ दण्डकारण्य की भीषणता का सच्चा चित्र देखने को मिलता है।

**रामः- पश्यामि च जनस्थानं भूतपूर्वखरालयम्।**
**प्रत्यक्षानिव च वृत्तान्तान् पूर्वाननुभवामि च।।17।।**

(सर्वतोऽवलोक्य) प्रियारामा हि वैदेह्यासीत्। एतानि नाम कान्ताराणि। किमतःपरं भयानकं स्यात्? (सास्रम्)

**त्वया सह निवत्स्यामि वनेषु मधुगन्धिषु।**
**इतीवारमते हासौ स्नेहस्तस्याःस तादृशः।।18।।**
**न किंचिदपि कुर्वाणःसौख्यैर्दुःखान्यपोहति।**
**तत्तास्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः।।19।।**

**अर्थः-**राम- मैं खर के भूतपूर्व निवासालय 'जनस्थान' को देख रहा हूँ और बीते हुए वृत्तान्तों का वर्तमानवत् अनुभव कर रहा हूँ।

(चारो ओर देखकर) सीता को उपवन (बहुत) प्रिय थे। परन्तु ये महावन हैं। इससे अधिक और क्या भयानक बात होगी?

(आंखों में आंसू भरकर)

''मैं आपके साथ मधु के मधुर गन्ध से सुरभित वनों में रहूँगी'' इस प्रकार (कह कहकर) उसका मन यहाँ लगा रहता था। उसका यह कैसा (अद्भुत) प्रेम था? जो जिसका प्रिय होता है, वह(उसके लिए)

कुछ न करता हुआ भी सुखों से दुःख दूर कर देता है। प्रिय व्यक्ति प्रेमी के लिए कोई अनिर्वचनीय द्रव्य होता है।

**व्याख्या:-** भगवान् राम ने भी जनस्थान के वृत्तान्त को स्मरण करके कहा कि पहले जहाँ खर का निवासस्थान था, मैं उस जनस्थान को देख रहा हूँ। साथ ही वहाँ बीते हुए वृत्तान्तों का प्रत्यक्षवत् अनुभव कर रहा हूँ। सीता को याद करके शोक प्रकट करते हुए राम कहते हैं कि वैदेही को उपवन प्रिय थे। यहाँ ये विशाल वन हैं। विधि की विडम्बना कितनी विचित्र होती है? अयोध्या से चलते समय सीता ने कहा था-''प्राणनाथ! मैं आपके साथ मधु सुगन्धित वनों में निवास करूँगी। मुझे वहाँ कोई कष्ट नहीं होगा।'' यह कह कहकर वह वहाँ क्रीडारत रही थी। ओह! उसका वह स्नेह कितना मधुर था। आज कैसे सब बदल गया? समय की गति को कौन जान सकता है?

यह कथन वस्तुतः सत्य है कि जो जिसका प्रिय जन होता है वह उसके लिए चाहे कुछ भी कार्य न करे, परन्तु 'यह मेरा प्रिय है' इस प्रकार के स्मरण मात्र से सुख तो प्रदान करता ही है साथ ही दुःखों को दूर कर देता है। अतः प्रिय जन कोई अनिर्वचनीय द्रव्य होता है। यही कारण है कि मैं सीता के स्मरण मात्र से किसी अलौकिक सुख का अनुभव कर रहा हूँ।

**टिप्पणी:- भूतपूर्वखरालयम्**-पूर्वं भूतः भूतपूर्वः। भूतपूर्वः खरालयो यस्मिन् तम्। **प्रियारामा**-आरमते यस्मिन्निति आरामः। प्रियः आरामः अस्याःइति प्रियारामा। **तत्तास्य किमपि द्रव्यम्**-यहाँ द्रव्य का प्रयोग कर कवि ने अपनी शब्द प्रयोग चातुरी का परिचय दिया है। इस श्लोक में कवि ने विशुद्ध प्रेम का प्रभाव बताया है। द्रव्य शब्द के प्रयोग से कवि की सहृदयता तथा दार्शनिकता प्रकट होती है।

**शम्बूकः**-तदलमेभिर्दुरासदैः।.......................

**इह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरमुक्त-**
**प्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।**
**फलभरपरिणामश्यामजम्बूनिकुंज-**
**स्खलनमुखरभूरिस्रोतसो निर्झरिण्यः।।20।।**

अपि च

**दधति कुहरभाजामत्र भल्लूकयूना-**
**मनुरसितगुरूणिस्त्यानमम्बूकृतानि।**
**शिशिरकटुकषायःस्त्यायते शल्लकीना-**
**मिभदलितविकीर्णग्रन्थिनिष्यन्दगन्धः।।21।।**

**अर्थ:- शम्बूक** -इन दुर्गम वनों को रहने दीजिए।..................

यहाँ मस्त पक्षियों से आश्रित वेतस से गिरे हुए पुष्पों से सुगन्धित, शीतल और स्वच्छ जलवाली, फलसमूह के परिपाक से श्याम वर्णवाले घने जामुन कुंजों में गिरने से शब्दायमान अनेक प्रवाहों वाली नदियाँ बहती हैं।

यहाँ पहाड़ों की गुफाओं में रहने वाले तरुण रीछों के थूकने का शब्द प्रतिध्वनित होकर और अधिक बढ गया है। यहाँ हाथियों के द्वारा तोड़ी तथा इधर-उधर फैलाई हुई सल्लकी लताओं की ग्रन्थियों के रस का शीतल,तीक्ष्ण और कषैला गन्ध फैल रहा है।

**व्याख्या:-** महावन के दर्शन से उत्कण्ठित राम का मनोविनोद करने के लिए शम्बूक राम से कहता है कि बीती हुई बातों की याद दिलाकर दुःख उत्पन्न करने वाले इन दुर्गम वनों के वर्णनों को रहने दीजिए। यहाँ मद के कारण किलोल करने वाले पक्षियों के बैठने से हिलने के कारण किनारों पर उगी हुई वेंत की लताओं के पुष्प जल में गिर रहे हैं; जिससे कि स्वभाव से ही मधुर और शीतल नदियों का जल सुगन्धित हो रहा है। उनकी धाराएँ फलों से लदे हुए काले-काले जामुन के कुंजों से टकराने पर अत्यन्त शब्द करती हुई अनेक धाराओं में बह रही हैं।

इस महावन की पर्वतीय गुफाओं में अनेक प्रौढ़ भालू रहते हैं। वे उच्च स्वर से थूकते हैं; जिस कारण स्वाभाविक होता हुआ भी उनका शब्द प्रतिध्वनित होकर वृद्धि को प्राप्त हो रहा है। दूसरे यहाँ हाथियों द्वारा खाने योग्य शल्लकी लता मसल दी जाती है। इधर-उधर गिरायी गई उसकी शीतल,कटु और सुरभित गन्ध वन में सर्वत्र फैल रही है।

**टिप्पणी:-** कुहरभाजाम्-कुहरं भजन्ते इति कुहरभाजस्तेषाम्। अम्बूकृतानि-अनम्बु अम्बु कृतानि इति अम्बूकृतानि।

**रामः-**(सवाष्पस्तम्भम्) भद्र! शिवास्ते पन्थानो देवयानाः। प्रलीयस्व पुण्येभ्यो लोकेभ्यः।

**शम्बूकः-**यावत्पुराणब्रह्मर्षिमगस्त्यमभिवाद्य शाश्वतं पदमनुप्रविशामि।

(इति निष्क्रान्तः)

**रामः-** **एतत्पुनर्वनमहो कथमद्य दृष्टं**
**यस्मिन्नभूम चिरमेव पुरा वसन्तः।**
**आरण्यकाश्च गृहिणश्च रताः स्वधर्मे**
**सांसारिकेषु च सुखेषु वयं रसज्ञाः।।22।।**
**एते त एव गिरयो विरुवन्मयूरा-**

**स्तान्येव मत्तहरिणानि वनस्थलानि।**
**आमंजुवंजुललतानि च तान्यमूनि**
**नीरन्ध्रनीपनिचुलानि सरित्तटानि।।23।।**

**अर्थ:-** राम - (उमड़ते हुए आंसुओं को रोककर) सौम्य! देवयान नामक (देवताओं के) मार्ग तुम्हारे लिए कल्याणकारी हों। पुण्यलोकों मे जाने के लिए तैयार हो जाओ।

**शम्बूक:-** मैं पहले पुरातन ब्रह्मर्षि 'अगस्त्यजी' को प्रणाम कर (तदनन्तर) चिरन्तन लोकों में प्रवेश करता हूँ।

**राम:-** 'ओह! यह वन आज फिर क्यों दीख गया? जिसमें हम लोग पूर्वकाल में बहुत समय तक एक साथ वानप्रस्थ और गृहस्थ के रूप में निवास करते हुए स्वधर्म में तत्पर रहकर सांसारिक सुखों का भी आनन्द प्राप्त करते रहे थे'।।22।।

'मोरों की ध्वनि से युक्त ये वे ही पर्वत हैं। ये वे ही मस्त हिरनों वाले वनस्थल हैं। सचमुच सुन्दर अशोक तरुओं के विस्तार वाले और सघन कदम्बों तथा वेतों वाले ये वे ही सरिता तट हैं'।।23।।

**व्याख्या:-** किसी तरह आंसुओं को रोककर भगवान् राम ने शम्बूक से कहा- भद्र! देवलोक को जाने वाले तुम्हारे मार्ग कल्याणकारी हों। तुम पवित्र लोकों को प्राप्त करने के लिए अन्तरिक्ष में लीन हो जाओ। यह सुनकर शम्बूक ने कहा कि मैं पहले वृद्ध ब्रह्मर्षि श्रीअगस्त्य को अभिवादन कर, पश्चात् अन्तरिक्ष में प्रवेश करूँगा।

शम्बूक के चले जाने पर दण्डकारण्य के भूभागों को देखकर राम कहते हैं कि यह वन क्यों दिखायी दे गया। पुरानी स्मृतियों को ताजा करने वाला यह वन मुझ सीता विरहित राम को दिखायी नहीं देता तो अच्छा था। यहाँ हम अपने वनवासी धर्म में तत्पर रहकर आरण्यक भी रहे और सांसारिक सुखों के प्रति रसज्ञ होकर गृहस्थ भी रहे। मुझे याद है कि ये सामने विद्यमान गिरि, वनस्थल और सरितायें सब वे ही हैं; जो पहले वनवास के दिनों में हमारे साथी रहे थे।

**टिप्पणी:- देवयाना:-** ब्रह्म प्राप्ति के मार्ग; जो साधक ज्ञानी को अनेक स्थानों से पार कराते हुए ब्रह्म तक ले जाते हैं; जहाँ से पुनरावर्तन नहीं होता। **शाश्वतं पदम्-** जो देवयान मार्ग से जाता है वह फिर नहीं लौटता। अतः यहाँ शाश्वत पद कहा गया है।

## अभ्यास प्रश्न-1

**1.एक शब्द में उत्तर दीजिए:**

क- कहीं निस्तब्धता और कहीं घोर गर्जन का स्थान है?
ख- सर्पों की फुंकारों से क्या धधक उठी है?
ग- प्यास से व्याकुल गिरगिट क्या पी रहे हैं?
घ- गड्ढों में थोड़ा सा क्या पड़ा है?

**2. एक वाक्य में उत्तर दीजिए:**

क- भवभूति ने अपने नाटकों में प्रकृति का कैसा चित्रण किया है?
ख- भवभूति प्रकृति के कैसे चित्रकार हैं?
ग- खर के भूतपूर्व निवास का क्या नाम है?
घ- उपवन किसे प्रिय थे?

**3. सत्य/असत्य बताइए:**

क- सीताजी राम के साथ सुरभित वनों में रहना चाहती थीं।
ख- दण्डकारण्य में सीता का मन नहीं लगता था।
ग- प्रिय जन दुःख दूर करता है।
घ- प्रिय व्यक्ति कोई अनिर्वचनीय द्रव्य नहीं होता है।

**4. सही विकल्प छांटकर लिखिए:**

क- प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षक हैं।

(अ) माघ (ब) भारवि

(स) सुबन्धु (द) भवभूति

**5. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:**

क- तस्य किमपि...........यो हि यस्य..........जनःत्ता
ख- एतत्पुनर्वनमहो...................................दृष्टम्।
ग- शिवास्ते......................................देवयानाः।
घ- यस्मिन्नभूम चिरमेव...........................वसन्तः।

## 4.4 खण्ड दो (श्लोक 24 से 30 तक) मूलपाठ, अर्थ, व्याख्या एवं टिप्पणी

**मेघमालेव यश्चायमारादिव विभाव्यते।**
**गिरिः प्रस्रवणःसोऽयमत्र गोदावरी नदी।।24।।**

**अस्यैवासीन्महति शिखरे गृध्रराजस्य वास-**
**स्तस्याधस्ताद्वयमपि रतास्तेषु पर्णोटजेषु।**
**गोदावर्याः पयसि विततानोकहश्यामलश्री-**
**रन्तः कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः।।25।।**

**अर्थः-** और यह जो मेघमाला की भांति निकटवर्ती सा जान पड़ता है,यह वही प्रस्रवण पर्वत है। यही वह गोदावरी नदी है। इसी की ऊँची चोटी पर गृध्रराज का निवास था। उसके नीचे वाले भूभाग में हम लोग भी पर्णशाला में सुख से रहते थे। जहाँ पर गोदावरी के जल में फैली हुई वनस्पतियों की श्यामल शोभा वाला, भीतर निरन्तर चहचहाते हुए पक्षियों की ध्वनि से गूंजता हुआ रमणीय वनभाग है।

**व्याख्याः-** प्रस्रवण पर्वत और गोदावरी नदी को देखकर राम कहते हैं कि यह जो दूर होने पर भी समीप सा घटा के समान ज्ञात हो रहा है। यह वन हमारा पूर्वानुभूत प्रस्रवण नाम का पर्वत है। इस पर्वत प्रान्त में गोदावरी नाम की नदी है। इस पर्वत के ही एक बड़े शिखर पर गृध्रराज जटायु का निवास था। इस शिखर के नीचे की ओर अपने हाथ से बनाये हुए पर्णकुटीरों में हम सब-मैं, सीता और लक्ष्मण आराम से रहते थे। यह ऐसा सुन्दर स्थान है कि जहाँ गोदावरी के जल में प्रतिबिम्बित वृक्षों की श्यामल कान्ति वाला, चहचहाते पक्षियों वाला; अत एव भीतर से गूंजता हुआ सुन्दर वन प्रदेश है।

**टिप्पणीः- गृध्रराजस्य वासः-** गृध्राणां राजा गृध्रराजः। ‘‘राजाहः सखिभश्टच्’’ इति टच् समासान्तः। उष्यतेऽस्मिन्निति वासः। वस्$घञ् करणे। अत्रैव सा पंचवटी, यत्र निवासेन विविधविस्रम्भातिसाक्षिणः प्रदेशाः,प्रियायाः प्रियसखी च वासन्ती नाम वनदेवता। किमिदमापतितमद्य रामस्य ? संप्रति हि।

**चिराद्वेगारम्भी प्रसृत इव तीव्रो विषरसः**
**कुतश्चित्संवेगात्प्रचल इव शल्यस्य शकलः।**
**व्रणो रूढग्रन्थिः स्फुटित इव हृन्मर्मणि पुनः**
**पुराभूतः शोको विकलयति मां नूतन इव।।26।।**

**अर्थः-** यहीं पर वह पंचवटी है, जिसमें निवासकाल के हमारे अनेक उन्मुक्त ऐकान्तिक विलासों के साक्षीभूत प्रदेश हैं और जहाँ प्रिया सीता की प्रियसखी वासन्ती नाम वाली वनदेवता रहती है। इस वियोगी राम के सम्मुख यह सब दृश्य आज क्यों उपस्थित हुआ? क्योंकि इस समय-‘चिरकाल के बाद सीता परित्याग का पुराना शोक, नया सा होकर मुझे बेचैन कर रहा है। लगता है जैसे चिरकाल के बाद जिसका वेग बढ़ना प्रारम्भ हुआ हो, वह तीव्र विष फैल गया है या भीतर चुभा हुआ बाण की नोंक का टुकड़ा किसी आघात से चलायमान हो उठा है या जिसकी ऊपरी सतह सूख गई थी- ऐसा हृदय के कोमल कोने में स्थित घाव मानों फिर चटक गया है।’

**व्याख्याः-** पुराना होकर भी शोक नया सा होकर आज फिर दुःखी कर रहा है इस आशय से राम कहते हैं कि आज इस पंचवटी और वनवास काल में हमारे ऐकान्तिक तथा विलासों के साक्षी इन वन प्रदेशों को सामने देखकर बारह वर्ष पुराना वह शोक फिर से नवीन सा हो उठा है। जैसे किसी व्यक्ति को लम्बी अवधि के बाद असर करने वाला तीखा विष खिला दिया जाता है, वह उस विष को बहुत समय तक भीतर ही भीतर पचाए रहता है; परन्तु वह विष चिरकाल के पश्चात् अपने वेग को बढाना आरम्भ करके सारे शरीर में फैल जाता है; जैसे किसी योद्धा के शरीर में बाण की नोंक टूटकर भीतर ही चुभी रह जाती है और चिरकाल तक पड़ी रहती है; परन्तु किसी आकस्मिक आघात को पाकर अपनी जगह से हट जाती है फिर अपनी जगह बनाने के लिए मांस के भीतर चलती हुई अत्यन्त वेदना पैदा करती है। ठीक इसी तरह यह पंचवटी और इसके प्रदेश अकस्मात् आज मेरे सम्मुख आ पड़े हैं। इन्हें देखकर सीता का वह अगाध निश्छल स्नेह उद्बुद्ध हो गया है, जिसने बारह वर्ष तक हृदय में छिपाकर रखे हुए सीता सम्बन्धी पुराने शोक को फिर ताजा कर दिया है, जिससे मेरे हृदय में विकलता बढ़ रही है।

**टिप्पणी- शल्यस्य शकलः**-शल्य (बाण के अग्रभाग) का टुकड़ा। **रूढग्रन्थिः-** रूढो ग्रन्थि र्यस्मिन् तादृशः, जिस पर खुरण्ड आ गया है।

**पुरा यत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र सरितां**
**विपर्यासं यातो घनविरलभावः क्षितिरुहाम्।**
**बहोर्दृष्टं कालादपरमिव मन्ये वनमिदं**
**निवेशः शैलानां तदिदमिति बुद्धिं द्रढयति।।27।।**

**अर्थः-** पहले जहाँ नदियों की धारा बहती थी वहाँ अब वालुकामय तट विद्यमान है। वृक्षों की सघनता और विरलता भी बदल गयी है। बहुत काल के पश्चात् देखे हुए इस वन को मैं अन्य वन की तरह समझ रहा हूँ। केवल पर्वतों की यथास्थान स्थिति 'यह वही वन है' इस बुद्धि को दृढ़ कर रही है।

**व्याख्याः-** पूर्वकाल में जब कि राम सीता और लक्ष्मण के साथ पंचवटी में रहे थे, उस समय को बीते हुए अब कम से कम पच्चीस वर्ष हो चुके हैं। उन दिनों नदियों की धारा जिस स्थान पर बहती थी। अब वह अन्यत्र बहने लगी है और धारा के स्थान पर बालू की ढांग खड़ी हुई है। वन के वृक्ष जहाँ बहुत सघन थे, वहाँ छीदे हो गये हैं। इस प्रकार बहुत काल के बाद देखा गया यह वन पहले वन से भिन्न कोई दूसरा वन सा प्रतीत होता है; परन्तु पहाड़ों की स्थिति जहाँ की तहाँ है। उन्हें देखकर ही यह विश्वास दृढ़ होता है कि ये वे ही वन हैं जो पच्चीस तीस वर्ष पूर्व देखे थे।

**टिप्पणीः-** यहाँ कवि ने संसार की अस्थिरता की एक झांकी दिखलायी है। समय के प्रभाव से कोई पदार्थ नहीं बच सका है। संसार परिवर्तनशील है। इस परिवर्तन के प्रवाह में लघुकाय पदार्थ अपनी सत्ता एकदम खो बैठते हैं; परन्तु महापुरुष पर्वत की भांति अचल रहकर अपनी कीर्ति कौमुदी का विस्तार करते रहते हैं।

हन्त! हन्त! पहिरन्तमपि मां पंचवटी स्नेहाद्बलादाकर्षतीव। (सकरुणम्)

**यस्यां ते दिवसास्तया सह मया नीता यथा स्वे गृहे**
**यत्सम्बन्धिकथाभिरेव सततं दीर्घाभिरास्थीयत।**
**एकः सम्प्रति नाशितप्रियतमस्तामद्य रामः कथं**
**पापः पंचवटीं विलोकयतु वा गच्छत्वसम्भाव्य च।।28।।**

**अर्थः-** हाय! हाय!(इस स्थान को ) छोड़कर जाते हुए भी मुझे यह पंचवटी बलपूर्वक खींच सी रही है। (शोक पूर्वक) 'जिस पंचवटी में मैंने सीता के साथ अपने घर की भांति वे सुखमय दिन बिताये थे। जिसकी लम्बी चर्चाएँ हम सदा करते रहते थे। उस पंचवटी को आज स्वयं अपनी प्रिय पत्नी को नष्ट कर देने वाला यह पापी राम अकेला भला कैसे देखे? अथवा कैसे उसकी उपेक्षा करके चला जाय?

**व्याख्याः-** पंचवटी को सामने देखकर राम को सीता के साथ वहाँ बिताये दिन याद आते हैं। वे कहते हैं कि यह स्नेह से मुझे बलात् अपनी ओर खींच सी रही है। मैं सीता के साथ जिस पंचवटी में घर की तरह रहा हूँ और बाद में भी जिससे सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं की ही सदा चर्चा करता रहा हूँ। अब, जब कि मैं पंचवटी के निवास की एकान्त संगिनी अपनी प्रिया को स्वयं अपने हाथ से गंवा चुका हूँ; यदि अकेला देखता हूँ तो हृदय फटता है और बिना देखे रहा भी नहीं जाता, कैसी दुःख की बात है? सूझता ही नहीं कि क्या करना चाहिए?

**टिप्पणीः- पापः-** इस शब्द से रामचन्द्रजी की आत्मग्लानि प्रकट होती है। असम्भाव्य- बिना सत्कार किये।

(प्रविश्य)
**शम्बूकः**-जयतु देवः। भगवानगस्त्यो मत्तः श्रुतिसन्निधानस्त्वामाह - परिकल्पितावरणमङ्गला प्रतीक्षते वत्सला लोपामुद्रा, सर्वे महर्षयः। तदेहि सम्भावयास्मान्। अथ प्रजविना पुष्पकेण स्वदेशमुपगम्याश्वमेधसज्जो भव इति।
**रामः**-यथाज्ञापयति भगवान्।
**शम्बूकः**- इत इतो देवः।
**रामः**-(पुष्पकं प्रवर्तयन्) 'भगवति पंचवटि! गुरुजनादेशोपरोधात्क्षणं क्षम्यतामतिक्रमो रामस्य।
**शम्बूकः**- देव! पश्य-

**अर्थः- शम्बूक-** महाराज की जय हो! मेरे द्वारा आपके शुभागमन का समाचार सुनकर भगवान् अगस्त्यजी ने आपके लिए कहा है- ''पूजा का साज सजाकर वात्सल्यमयी लोपामुद्रा तथा सब महर्षिगण आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। अतः आइए और हमारा मान बढ़ाइए। तदनन्तर तीव्रगामी पुष्पक विमान से अयोध्या में पहुँचकर अश्वमेध यज्ञ में सम्मिलित हो जाइए।

**राम:-**जो भगवान् की आज्ञा।

**शम्बूक:-**महाराज! इधर से (पधारिए) इधर से।

**राम:-**(पुष्पक को घुमाते हुए) भगवति! पंचवटि! गुरुजनों की आज्ञा पालन करने के कारण थोड़ी देर के लिए राम के इस अतिक्रमण (लांघ कर जाने के अपराध) को क्षमा कीजिए।

**शम्बूक:-** देव! देखिए-

**व्याख्या:-** प्रवेश करके शम्बूक राम के समक्ष महर्षि अगस्त्य का संदेश देता है कि महाराज की जय हो। भगवान् अगस्त्य ने मेरे मुंह से आपकी यहाँ उपस्थिति को सुनकर आपके लिए कहा है कि 'आपके प्रति अपत्य स्नेह रखने वाली लोपामुद्रा (अगस्त्य पत्नी) आरती संजोए आपके आगमन की प्रतीक्षा कर रही हैं। सभी महर्षि भी आपके आगमन की प्रतीक्षा में हैं। अतः आइए, हम लोगों का मान रखिए। उसके बाद अपने तीव्रगामी पुष्पक द्वारा स्वदेश पहुँचकर अश्वमेध यज्ञ में तत्पर होइए।

**टिप्पणी:- परिकल्पितावरणमंगला-** परिकल्पितम् आवरणमंगलं यया सा। **गुरुजनोपरोधात्-** गुरुजन+उप+रुध्+घञ्, पंचमी, एकवचन। इससे श्रीराम की मर्यादाप्रियता ध्वनित होती है।

> **गुंजत्कुंजकुटीरकौशिकघटाघुत्कारवत्कीचक-**
> **स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौंचाभिधोऽयं गिरिः।**
> **एतस्मिन्प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताःकूजितै-**
> **रुद्वेलन्ति पुराणरोहिणतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः।।29।।**

**अर्थ:-** यह सामने क्रौंच पर्वत है; जहाँ कुटीराकार कुंजों में उल्लुओं का समूह घुंघा रहा है। उसकी गूंजती हुई घुंघाहट से भयभीत होकर (समीपस्थ) बासों के झुरमुट में स्थित कौओं का समूह मौन धारण किये हुए है। यहाँ बड़ी संख्या में मोर पक्षी इधर-उधर विचरते हुए मस्ती में कूक रहे हैं। उनकी आवाज से डरे हुए सर्प पुराने चन्दन वृक्षों के तनों पर लिपटे हुए मचल रहे हैं।

**व्याख्या:-** क्रौंच पर्वत की शोभा दिखाने के लिए शम्बूक राम से कहता है कि महाराज! यह क्रौंच नाम का पर्वत है। इसका अवलोकन भी आवश्यक प्रतीत होता है। इसके कुंज कुटीरों में स्थित उल्लुओं की घटा का घुत्कार हो रहा है; उससे युक्त सच्छिद्र बासों के सघन झुरमुट में भय से कौए मौन धारण किये हैं। इस पर्वत पर इधर उधर फिरते हुए मोरों के कूजन से भयभीत सर्प चन्दन के वृक्षों

की शाखाओं में लिपट रहे हैं।

**टिप्पणी:-** यहाँ क्रौंच पर्वत के व्याज से संसार का स्वरूप निरूपण किया गया है। सभी प्राणी यहाँ भयभीत होकर निवास कर रहे हैं।

अपि च-

> **एते ते कुहरेषु गद्गदनदद् गोदावरीवारयो**
> **मेघालम्बितमौलिनीलशिखराः क्षोणीभृतो दाक्षिणाः।**
> **अन्योऽन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोलकोलाहलै-**
> **रुत्तालास्त इमे गभीरपयसःपुण्याःसरित्सङ्गमाः।।30।।**

**अर्थः-** और भी-ये वे दक्षिणदिग्वर्ती पर्वत हैं; जिनकी गुफाओं में गोदावरी का जल गद्गद नाद कर रहा है। जिनके शिखरों के अग्रभाग मेघों से संश्लिष्ट हैं। अत एव नीले दिखायी दे रहे हैं। ये वे एक दूसरे से टकराकर कठिनाई से आगे बढ़ती हुई लहरों के शोर से युक्त, ऊपर से उछलते हुए गहरे जल वाले पवित्र नदी संगम हैं।

**व्याख्याः-** फिर शम्बूक दक्षिण दिशा में विद्यमान पर्वतों और नदियों के संगमों का वर्णन करते हुए कहता है कि देव! ये दक्षिण दिशा में स्थित पर्वत अवलोकनीय हैं। इनके समीप कल-कल ध्वनि करती गोदावरी बड़े वेग से बह रही है। इन पर्वतों के ऊपरी भाग में नीले वादल सदा छाये रहते हैं। यहाँ नदियों के संगम भी दर्शकों को आकर्षित करते हैं। ये पवित्र संगम परस्पर कठिनाई से आगे बढ़ती हुई लहरों के शोर से युक्त एवम् उछलते हुए गहरे जल वाले हैं।

**टिप्पणीः- दाक्षिणाः-** दक्षिणे भवा दाक्षिणाः, दक्षिणशब्दः स्वभावाद् दक्षिणदिग्वाची;अस्माद् भावार्थे शेषिकोऽण्।

## अभ्यास प्रश्न-2

1. **एक शब्द में उत्तर दीजिएः**

   क- मेघमाला की भांति निकटवर्ती सा कौन सा पर्वत है?
   ख- पर्वत प्रान्त में कौन सी नदी है?
   ग- वनस्पतियों की श्यामल शोभा वाला कौन सा भाग है?
   घ- गोदावरी के जल में क्या फैला है?

2. **एक वाक्य में उत्तर दीजिएः**

   क- पंचवटी में किसकी प्रियसखी वासन्ती रहती है?
   ख- चिरकाल के बाद किसका शोक राम को बेचैन कर रहा है?
   ग- ‘पुराभूतः’ किसका विशेषण है?
   घ- पहले नदियों की धारा पर अब क्या विद्यमान है?

**3. सत्य/असत्य बताइए:**

क- क्रौंच पर्वत की ऊँची चोटी पर गृध्रराज का निवास था।
ख- राम पंचवटी की लम्बी चर्चाएं सदा किया करते थे।
ग- बहुत काल के बाद पर्वतों की स्थिति बदलती है।
घ- नाशितप्रियतम राम का विशेषण है।

**4. सही विकल्प छांटकर लिखिए:**

क- पुरातन ब्रह्मर्षि हैं।

अ. वसिष्ठ ब. याज्ञवल्क्य

स.वाजश्रवा द. अगस्त्य

5. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:**

क- चिराद्वेगारम्भी प्रसृत इव............. विषरसः।
ख- पुरा यत्र स्रोतः.............................तत्र सरिताम्।
ग- अस्यैवासीन्महति......................गृध्रराजस्य वासः।
घ- बहोर्दृष्टं कालादपरमिव..................वनमिदम्।।

## 4.5 सारांश:-

शम्बूक की उक्तियों से रामचन्द्र जी समझ लेते हैं कि वे जनस्थान में स्थित हैं। शम्बूक ब्रह्मषि अगस्त्य के दर्शन के लिए उनके आश्रम की ओर चला जाता है और रामचन्द्रजी अकेले रह जाते हैं। मयूरों के शब्दों से युक्त पर्वत, मयूरों से व्याप्त वनस्थलियाँ, विविध वृक्षों से ढके नदियों के किनारे, प्रस्रवण पर्वत, गोदावरी नदी तथा पंचवटी आदि उनकी स्मृतियाँ जागृत कर उन्हें सीता का स्मरण करा देते हैं। पुराना शोक हृदय के मर्मस्थल में स्फुटित व्रण के समान नवीन सा होता हुआ उनको घेर लेता है। पंचवटी के प्रति राम का विशेष आकर्षण है; परन्तु सीता का अभाव उन्हें व्याकुल बनाये दे रहा है।इसी बीच शम्बूक अगस्त्य आश्रम से लौट आता है और भगवान् अगस्त्य का सन्देश रामचन्द्रजी को सुनाता है कि वे लोपामुद्रा तथा अन्य ऋषियों के साथ उनकी (रामचन्द्रजी) अपने आश्रम में प्रतीक्षा कर रहे हैं।अगस्त्य का आदेश सुनकर पंचवटी से क्षमा याचना करते हुए राम पुष्पक विमान द्वारा क्रौंच पर्वत एवं नदियों के संगम को देखते हुए चले जाते हैं।

## 4.6 शब्दावली:-

| | | |
|---|---|---|
| सीमानः | - | सिनोति बध्नाति इति सीमा। |
| मधुगन्धिषु | - | मधुनः गन्धः एषु इति मधुगन्धिनस्तेषु। |
| अलमेभिः | - | इन्हें रहने दीजिए। |
| दुरासदैः | - | दुःखद आसदो येषां तानि दुरासदानि, तैः। |
| भल्लूकयूनाम् | - | भल्लूकाश्च ते युवानस्तेषाम्। |
| सल्लकी | - | गजलता-यह पहाड़ी जंगलों में मोटे तन्तुओं वालीएक बेल होती है। |
| शिशिरकटुकषायः | - | कटुश्चासौ कषायश्च कटुकषायः, शिशिरश्चासौ कटुकषाय इति शिशिरकटुकषायः। |
| प्रलीयस्व | - | प्र पूर्वक 'लीञ् श्लेषणे' धातु से लोट् म.पु. एकवचन । |
| पुण्येभ्यो लोकेभ्यः | - | पुण्यान् लोकान् अनुभवितुमित्यर्थः। यहाँ अप्रयुज्यमान तुमुन् प्रत्ययान्त |
| नाशितप्रियतमः | - | नाशिता प्रियतमा येन सः। |
| प्रचलाकिनाम् | - | प्रचलाको बर्होऽस्यास्तीति प्रचलाकिन् मयूरस्तेषाम्। |
| पुराणरोहिणः | - | पुराने चन्दन के तनों पर। |
| कुम्भीनसाः | - | सर्पाः। |
| सरित्संगमाः | - | सरितां संगमः सरित्संगमस्ते। नदियों के संगम। |

## 4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

खण्ड एक

1.

क- जनस्थान

ख- आग

ग- पसीना

घ- पानी

2.

क- भवभूति ने प्रकृति का बहुत ही सूक्ष्म एवं यथार्थ चित्रण किया है।

ख- भवभूति प्रकृति के चतुर चित्रकार हैं।

ग- खर के भूतपूर्व निवास का नाम जनस्थान है।

घ- सीता को उपवन बहुत प्रिय थे।

3.

क- सत्य

ख- असत्य

ग- सत्य

घ- असत्य

4. (द)

5

क- द्रव्यं, प्रियो

ख- कथमद्य

ग- पन्थानो

घ- पुरा

खण्ड दो

1

क- प्रस्रवण

ख- गोदावरी

ग- वनभाग

घ- वनस्पतियाँ

2

क- पंचवटी में सीता की प्रियसखी वासन्ती रहती है।

ख- चिरकाल के बाद सीता का शोक राम को बेचैन कर रहा है।

ग- 'पुराभूत' शोक का विशेषण है।

घ- पहले नदियों की धारा के स्न पर अब बालुकामय तट विद्यमान है।

3

क- असत्य

ख- सत्य

ग- असत्य

घ- सत्य

4 (द)

5

क- तीव्रों

ख- पुलिनमधुना

ग- शिखरे

घ- मन्ये

## 4.8 सन्दर्भग्रन्थसूची:-

1. भवभूति, उत्तर रामचरित (सम्पूर्ण), व्याख्या- आचार्य प्रभुदत्तस्वामी, (1988) ज्ञानप्रकाशन, मेरठ-2

2. भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्याख्या-डॉ0 कृष्णकान्तशुक्ल, (1986-87) साहित्यभण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2

## 4.9 सहायक पाठ्य सामग्री:-

1. भवभूति, उत्तररामचरितम्: विचार और विश्लेषण, आचार्य प्रभुदत्त स्वामी , ज्ञान प्रकाशन, मेरठ-2

2. भरतमुनि,नाट्यशास्त्रम्:,व्याख्या- श्री बाबूलालशुक्ल, शास्त्री, चौखम्बासंस्कृतसंस्थान, वाराणसी

### 4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उत्तररामचरित की नाटकीय विशेषताएँ बताइये।
2. उत्तररामचरित के प्रधान एवं गौण रसों की मीमांसा कीजिए।
3. उत्तर राम चरित के पात्रों की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ लिखिये।

# द्वितीय सत्रार्द्ध / SEMESTER- II

## पंचम खण्ड

## उत्तररामचरितम् तृतीय एवं चतुर्थ अंक

## इकाई 1 - उत्तररामचरितम् तृतीय अंक का पूर्वार्द्ध

इकाई की रूपरेखा:

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 1 से 24 तक
(मूलपाठ अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी )
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 सहायक ग्रन्थ
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

## 1.1 प्रस्तावना:-

उत्तररामचरितम् से सम्बन्धित यह तृतीय खण्ड है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने प्रथम एवं द्वितीय अंक का अध्ययन किया। प्रथम अंक को कवि ने चित्रदर्शन नाम से नामांकित किया एवं द्वितीय अंक को कवि ने पंचवटी प्रवेश कहा है । इस ईकाई में उत्तररामचरितम् तृतीय अंक की सम्पूर्ण कथावस्तु के पूर्वार्द्ध को रखा गया है। उत्तररामचरितम् के तृतीय अंक को महकवि भवभूति ने 'छाया' अंक नाम से नामांकित किया है। इसमें 'छाया' सीता की कल्पना कवि की मौलिक कल्पना है। जो नाटकीय दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। राम का पंचवटी में वासन्ती से मिलन भी उनकी मौलिक उद्भावना है। तृतीय अंक के अन्तर्गत तमसा और मुरला नामक दो नदियों के वार्तालाप के माध्यम से ज्ञात होता है कि परित्यक्त होने के पश्चात् सीताजी प्राण विसर्जन हेतु गंगा जी में कूदती हैं और वहीं लव-कुश का जन्म होता है। गंगा जी उनके पुत्रों की रक्षा कर वाल्मीकि को सर्मिर्पत करती हैं। आज उनकी बारहवीं वर्षगांठ है इसलिए भगवती भागीरथी ने सीताजी को आज्ञा दी है कि वे अपने कुल उपास्य देव भगवान सूर्य की उपासना करें। उन्हें भागीरथी का वरदान है कि उन्हें पृथ्वी पर देवता भी नहीं देख सकते, पुरुषों की तो बात ही क्या है? इसके अनन्तर भगवान रामचन्द्र जी का प्रवेश होता है। वह पंचवटी प्रवेश में वनदेवी वासन्ती के साथ पूर्वानुभूत दृश्यों को देखकर सीता की स्मृति से अत्यन्त व्याकुल होते हैं। सीता अदृश्य रूप में उन्हें स्पर्श करके प्रबुद्ध करती हैं। इस प्रकार छाया नामक तृतीय अंक में सीता के हृदय की शुद्धि हो जाती है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकते हैं कि भागीरथी के वरदान के कारण सीता जी को पृथ्वी पर देवता भी नहीं देख सकते थे ! राम को अदृश्य रूप में स्पर्श कर उन्हें प्रबुद्ध कराया चूंकि पूरे अंक में सीता अदृश्य रूप में रही इसीलिए इस अंक का नाम छाया अंक पडा !

## 1.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-यह बता सकेगें कि इस अंक का नाम छाया अंक क्यों पड़ा।

- प्रत्येक श्लोक तथा गद्य में आये हुए प्रमुख परिभाषिक शब्दों की व्युत्पत्ति परक व्याख्या भी समझा पायेंगें।
- अर्थ, बोध, 'पद' बोध की प्रक्रिया का ज्ञान भी प्राप्त कर पायेगें।
- पद की व्युत्पत्तिपरक व्याख्या के क्रम में व्याकरण का भी ज्ञान प्राप्त कर पायेगें।

# 1.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक
# श्लोक संख्या 1 से 24 तक (अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी)

**एका:**-सखि मुरले! किमसि सम्भ्रान्तेव ?

**मुरला:**-सखि तमसे! प्रेषितास्मि भगवतोऽगस्त्यस्य पत्न्या लोपामुद्रया सरिद्वरां गोदावरीमभिधातुम्। जानास्येव यथा वधूपरित्यागात् प्रभृति -

**अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।**
**पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः॥ 1 ॥**

**अन्वयः-** गभीरत्वाद् अनिर्भिन्नः, अत एव अन्तर्गूढघंनव्यथः, रामस्य करुणो रसः पुटपाकप्रतीकाशः,अस्ति ॥1॥

**अर्थ:**-(तदनन्तर दो नदियों 'तमसा' और 'मुरला' का प्रवेश)

**एकः**- सखि मुरले! क्यों घबड़ाहट-वश उतावली-सी हो रही हो ?

**मुरलाः**- सखि तमसे! भगवान् अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा के द्वारा मैं नदीश्रेष्ठ गोदावरी को, यह कहने के लिए भेजी गयी हूँ - आप जानती ही हैं कि वधू , सीता के परित्याग के समय से - गाम्भीर्य के कारण बाहर अप्रकाशित, भीतर ही भीतर छिपी हुई गाढ व्यथा वाला राम का करुण रस, सीतावियोगजन्य शोकावेग पुटपाक के समान है ॥1॥ प्रस्तुत पद्य में उपमा अलंकार और अनुष्टुप छन्द है।

**व्याख्या:**-पुटपाक-वैद्य लोग दो पात्रों ;शराव आदि के अन्दर कोई औषध अथवा सुवर्ण आदि रखकर उसपर से मिट्टी का लेप कर आग में रख देते हैं, जिससे भीतर ही भीतर उसका परिपाक होता है। उसके तैयार हो जाने पर उसे 'रस' की संज्ञा दी जाती है। ठीक यही दशा श्रीराम जी की भी है। सीता का वियोग उनके हृदय को भीतर ही भीतर जला रहा है। गम्भीर प्रकृति के व्यक्ति होने के कारण अपनी व्यथा किसी के समक्ष अभिव्यक्त कर हृदय को हल्का भी नहीं कर पाते हैं।

**करुणो रसः**-यहाँ करुण रस की करुण शब्द से ही उक्ति होने के कारण 'रसस्योक्तिः स्वशब्देन' के अनुसार 'रसस्य स्वशब्दवाच्यता' दोष प्रतीत होता है, किन्तु बात ऐसी नहीं है, क्योंकि यह दोष वहाँ होता है, जहाँ विभावादि से व्यंग्य रस का स्वशब्द से कथन किया जाय। यहाँ तो वह वस्तुरूप से ही स्थित है, अतः दोष की शंका नहीं की जानी चाहिए।

**टिप्पणी:-** सम्भ्रान्ता - सम् +भ्रम +क्त ;(उपधा को दीर्घ) टाप्। प्रेषिता प्र + इष् + क्त;(कर्मणि )टाप्। अभिधातुम्-अभि +धा +तुमुन्। वधूपरित्यागात्प्रभृति - प्रभृति शब्द के योग में पंचमी होती है। भाष्य में कार्तिक्याः प्रभृति' ऐसा प्रयोग देखा जाता है।

**तेन च तथाविधेष्टजनकष्टविनिपातजन्मना प्रकर्षगतेन दीर्घशोकसन्तापेन सम्प्रत्यतितरां परिक्षीणो रामभद्रः। तमवलोक्य कम्पितमिव मे सबन्धनं हृदयम्। अधुना च प्रतिनिवर्तमानेन रामभद्रेण नियतमेव पंचवटीवने वधूसहवासविस्रम्भसाक्षिणः प्रदेशा द्रष्टव्याः। तेषु च**

**निसर्गधीरस्याप्येवंविधायामवस्थायामतिगम्भीराभोगशोकक्षोभसंवेगात् पदे पदे महान्ति प्रमादस्थानानि शंकनीयानि रामभद्रस्य। तद्भगवति गोदावरि! तत्र त्वया सावधानया भवितव्यम्।**

**वीचीवातैः शीकरक्षोदशीतैराकर्षद्भिः प़द्यकिंजल्कगन्धान्।**
**मोहे मोहे रामभद्रस्य जीवं स्वैरं स्वैरं प्रेरितैस्तर्पयेति।। 2।।**

**अन्वयः-** शीकरक्षोदशीतैः प़द्यकिंजल्कगन्धान् आकर्षद्भि स्वैरं स्वैरं प्रेरितैः वीचीवातैः रामभद्रस्य जीवं मोहे मोहे तर्पय इति।।2।।

**अर्थः-** मुरला लोपामुद्रा के सन्देश के विषय में आगे कहती है वैसे प्रियजन ;सीता पर विपत्ति पड़ने से उत्पन्न एवं पराकाष्ठा को प्राप्त दीर्घकालव्यापी शोक की ज्वाला से इस समय रामभद्र बहुत अधिक कृश हो गये हैं। उनको देखकर मेरा ;लोपामुद्रा का बन्धनों के सहित हृदय काँप-सा गया। और अब, अगस्त्याश्रम से अयोध्या को लौटते हुए रामभद्र पंचवटी वन में, वधू के साथ रहने के समय किये गये स्वच्छन्द विलासों के साक्षात् द्रष्टा उन प्रदेशों को अवश्य देखेंगे। और उन प्रदेशों में ऐसी अवस्था में स्वभावतः धैर्यशाली रामभद्र के लिए भी अत्यन्त प्रवृद्ध विस्तार वाले शोक के कारण क्षोभ के प्रबल हो उठने से पग-पग पर संज्ञाशून्यता के घोर अवसरों की संभावना है, अतः भगवति गोदावरि! वहाँ राम के विषय में तुम्हें सावधान रहना चाहिए।

मुरला, लोपामुद्रा के सन्देश का अवशिष्ट अंश कहती है - जलकणों के चूर्णों से शीतल, कमलकेसर के गन्ध को हरने वाले ;अतएव सुगन्धित तथा मन्द मन्द प्रेरित तरंगवायुओं से रामभद्र की चेतना को प्रत्येक मूर्च्छा में तृप्त करना - उन्हें होश में लाना।।2।। प्रस्तुत पद्य में स्वभावोक्ति अलंकार तथा शालिनी छन्द है।

**व्याख्याः-** सबन्धनम्-बन्धनों के सहित। यहाँ बन्धनों से स्नायुओं का अभिप्राय है, जो हृदय को सुदृढ़ रखने में सहायक होती हैं। हृदय के काँपने के साथ स्नायुओं का बन्धन भी शिथिल हो गया। अथवा हृदय को स्थिर रखने में मन और बुद्धि बन्धन का काम करती हैं, अतः बन्धन का अभिप्राय मन और बुद्धि से है अर्थात् हृदय आशंकाओं से भर गया और मन तथा बुद्धि उन आशंकाओं की पुष्टि करके भयभीत हो उठे।

**टिप्पणीः-** इष्टः - इष् (इच्छायाम् ) +क्त ( कर्मणि)। अतितराम् - अति + तरप् + आम्। परिक्षीणः - परि +क्षि + क्त (कर्तरि)'क्षि' को दीर्घ, 'क्त ' के 'त्' को 'न'। अवलोक्य - अव + लोक् + ल्यप्। कम्पितम् - कम्प्+क्त (कर्तरि) । प्रतिनिवर्तमानेन - प्रति + नि +वृत् +शानच् = प्रतिनिवर्तमानः, ततस्तृतीया। भवितव्यम् - भू +तव्य ;भावे ।

**तमसाः-**उचितमेव दाक्षिण्यं स्नेहस्य। संजीवनोपायस्तु मौलिक इव रामभद्रस्याद्य सन्निहितः।
**मुरलाः**- कथमिव ?

**तमसाः-** श्रूयताम्। पुरा किल वाल्मीकितपोवनोपकण्ठात् परित्यज्य निवृत्ते लक्ष्मणे सीतादेवी प्राप्तप्रसववेदनम् अतिदुःखसंवेगादात्मानं गंगाप्रवाहे निक्षिप्तवती। तदैव तत्र दारकद्वयं प्रसूता। भगवतीभ्यां पृथ्वीभागीरथीभ्यामभ्युपपन्ना रसातलं च नीता। स्तन्यत्यागात् परेण च दारकद्वयं तस्याः प्राचेतसस्य महर्षेर्गंगादेवी स्वयमर्पितवती।

**मुरला,** (सविस्मयम् )-

**ईदृशानां विपाकोऽपि जायते परमाद्भुतः ।**
**यत्रोपकरणीभावामायात्येवंविधो जनः।। 3।।**

**अन्वयः-** ईदृशानां विपाकोऽपि परमाद्भुतः जायते। यत्र एवंविधो जनः उपकरणीभावम् आयाति।। 3।

**अर्थः- तमसा-**(लोपामुद्रा की उदारता)उनके स्नेह के अनुरूप ही है, किन्तु होश में लाने का उपाय तो आज मौलिक रूप में रामचन्द्र के समीप स्थित है।

**मुरलाः-**वह  कैसे?

**तमसाः-** सुनिए। कहा जाता है कि पूर्वकाल में ;सीता को छोड़कर, वाल्मीकि के आश्रम के समीप से लक्ष्मण के लौट जाने पर सीता देवी ने प्रसवपीडा से अभिभूत अपने को अत्यन्त दुःख के संवेग के कारण गंगा की धारा में फेंक दिया। तभी वहाँ उन्होंने दो  शिशुओं को जन्म दिया। भगवती पृथ्वी और गंगा से अनुगृहीत सीता पाताल को पहुँचा दी गयीं। दूध छोड़ने के बाद उनके दोनों बच्चों को गंगा देवी ने स्वयं महर्षि वाल्मीकि को सौंप दिया।

**मुरलाः:** विस्मय के साथ ऐसे ;महानुभाव लोगों का दशा-विपरिणाम भी अत्यन्त आ श्चर्यजनक होता है, जिसमें इस प्रकार के लोग पृथ्वी-गंगा-वाल्मीकि सदृश उपकारक होते हैं।।3।। इस पद्य में काव्यलिंग अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्याः-** अभ्युपपन्ना-जिस पर दया की गयी, जिसे सान्त्वना दी गयी, जिसे कष्ट से मुक्त किया गया। अभि+उप+पद् का अर्थ होता है - दया करना, सान्त्वना देना, आराम पहुँचाना, तरस खाना, अनुग्रह करना, कष्ट से मुक्त करना आदि। श्लोक का तात्पर्य यह है कि असाधारण व्यक्तियों की सभी बातें असाधारण होती हैं, उन्हें बुरे समय में भी दैवी सहायता मिल जाती है। उनके लिए सर्वत्र सुखसाधनसम्पत्ति सुलभ होती है। भगवान् राम और सीता पर दारुण विपत्ति आयी तो वहाँ भी पृथ्वी, गंगा और वाल्मीकि जैसे लोग स्वयं उनकी सहायता के लिए पहुँच गये।

**टिप्पणीः-** दाक्षिण्यम् - दक्षिणस्य भावः, दक्षिण +ष्यञ् । मौलिकः - मूलादागतः, मूल +ठक् (इक)। सन्निहितः-सम् + नि +ध +क्त (‘धा को ‘हि)। उपकण्ठात्□-□उपगतः कण्ठम् उपकण्ठः, तस्मात्, उपकण्ठ का अर्थ है □- □पार्श्ववर्त्ती स्थान, पड़ोस। निक्षिप्तवती□ - □नि +क्षिप् +क्तवतु +स्त्रियां ङीप्। प्रसूता - प्र +सू + क्त+ टाप्।

**तमसा:-** इदानीं तु शम्बूकवृत्तान्तेन सम्भावितजनस्थानागमनं रामभद्रं सरयूमुखादुपश्रुत्य भगवती भागीरथी यदेव भगवत्या लोपामुद्रया स्नेहादाशंकितं तदेवाशंकय सीतासमेता केनचिदिव गृहाचारव्यपदेशेन गोदावरीं विलोकयितुमागता।

**मुरला:-** सुचिन्तितं भगवत्या भागीरथ्या राजधानीस्थितस्यास्य खलु तैस्तैर्जगताभ्युदयिकैः कार्यैर्व्यापतृस्य रामभद्रस्य नियताश्चित्तविक्षेपाः। अव्यग्रस्य पुनरस्य शोकमात्राद्वितीयस्य पंचवटीप्रवेशो महाननर्थ इति। तत्कथमिदानीं सीतादेव्या रामभद्र आश्वासनीयः स्यात?

**तमसा:**- उक्तमत्र भगवत्या भागीरथ्या- 'वत्से देवयजनसम्भवे सीते! अद्य खल्वायुष्मतोः कुशलवयोर्द्वादशस्य जन्मसंवत्सरस्य सङ्ख्यामंगलग्रन्थिरभिवर्तते। तदात्मनः पुराण श्वशुरमेतावतो मानवस्य राजर्षिवंशस्य प्रसवितारं सवितारमपहतपाप्मानं देवं स्वहस्तावचितैः पुष्पैरुपतिष्ठस्व। न च त्वामवनिपृष्ठचारिणीमस्मत्प्रभावाद् वनदेवता अपि द्रक्ष्यन्ति किं पुनर्मर्त्याः' इति। अहमप्याज्ञापिता - 'तमसे! त्वयिप्रकृष्टप्रेमैव वधूर्जानकी। अतस्त्वमेवास्याः प्रत्यनन्तरीभव' इति। साऽहमधुना यथादिष्टमनुतिष्ठामि।

**मुरला:-** अहमप्येतं वृत्तान्तं भगवत्यै लोपामुद्रायै निवेदयामि। रामभद्रोऽप्यागत एवेति तर्कयामि।

**तमसा:**- तदियं गोदावरीहृदान्निष्क्रम्य -

> **परिपाण्डुदुर्बलकपोलसुन्दरं दधती विलोलकवरीकमाननम्।**
> **करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेव वनमेति जानकी।।4 ।।**

**अन्वय**:-परिपाण्डुदुर्बलकपोलसुन्दरं विलोलकवरीकम् आननं दधती करुणस्य मूर्ति: अथवा शरीरिणी विरहव्यथेव जानकी वनमेति।।4 ।।

□**अर्थ:-** इस समय तो शम्बूक के (तपश्चरण रूप) वृत्तान्त के कारण (उसे मारने के लिए) जनस्थान में राम के आगमन की संभावना सरयू के मुख से सुनकर भगवती गंगा, लोपमुद्रा के द्वारा वात्सल्यवश जिस बात (राम के मोहादि) की आशंका थी, उसी बात की आशंका कर सीता के साथ, मानो किसी गृहकार्य के बहाने से गोदावरी के पास मिलने आयी हैं।

**मुरला:**- भगवती भागीरथी ने बहुत अच्छा सोचा, क्योंकि राजधानी में रहते हुए लोगों के अभ्युदय के निमित्त किये जाने वाले कामों में व्यस्त रामभद्र के मन के क्षोभ नियन्त्रित रहते हैं, किन्तु इस समय (अयोध्या से जनस्थान में आने के कारण) वे कार्यों में अव्यापृत हैं और मात्र शोक उनका साथी है (ऐसी स्थिति में) उनका पंचवटी में प्रवेश महान् अनर्थकारी सिद्ध होगा। तो अब सीता देवी के द्वारा रामभद्र कैसे आश्वस्त किये जा सकेगें ?

**तमसा:-** इस विषय में भगवती भागीरथी ने कहा - 'वत्से, यज्ञभूमि से उत्पन्न होने वाली सीते! आज चिरंजीवी कुश और लव की बारहवीं मांगलिक वर्षगाँठ का दिन है' अतः अपने पुरातन ससुर, वैवस्वत मनु से उत्पन्न इतने बड़े राजर्षियों के वंश के प्रवर्तक, सकलदुरितक्षयकारक सूर्यदेव की तुम अपने हाथ से चुने हुए पुष्पों से पूजा करो। और तुम्हें भूतल पर चलते समय मेरे प्रभाव से मनुष्य क्या, वनदेवता भी नहीं देखेंगे।' मुझे भी आज्ञा दी गयी है - तमसे! वधू जानकी का तुझमें अत्यधिक प्रेम है, अतः तू ही (उसकी सहायता के लिए) साथ रहो। वह मैं अब आदेशानुसार करती हूँ।

**मुरला:-** मैं भी यह वृत्तान्त भगवती लोपामुद्रा से निवेदन करती हूँ। रामभद्र भी आ ही गये हैं, ऐसा अनुमान करती हूँ।

**तमसा:-** लो, गोदावरी के अगाध जलवाले भाग(''ह्रद) से निकल कर-(विरह से)पूर्णतया पीले एवं कृश कपोलों से उपलक्षित, फिर भी (निसर्गतः) सुन्दर कपोलों वाले, बिखरे केशों से युक्त मुख को धारण किये हुए यह जानकी मूर्तिमान् करुण रस अथवा मूर्तिमती विरहव्यथा-सी पंचवटी में प्रविष्ट हो रही है।।4।। प्रस्तुत पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार और मञ्जुभाषिणी छन्द है।

□ **व्याख्या:- शम्बूकवृत्तान्त** - शम्बूक के तपश्चरण का वृत्तान्त, जो आकाशवाणी के द्वारा रामचन्द्र को बतलाया गया था (अंक 2, श्लोक 8)। भवभूति ने यहाँ इस मनोवैज्ञानिक तथ्य का उद्घाटन किया है कि मनुष्य जब विविध कार्यों में व्यस्त रहता है तो उसके शोकजन्य मनःक्षोभ नियन्त्रित रहते हैं, किन्तु जब वह निर्व्यापार रहता है, उस समय उसका शोक उद्दीप्त हो उठता है और चित्त-विक्षेप के बढ़ जाने से वह मानसिक सन्तुलन खो बैठता है। पंचवटी में प्रवेश करने पर राम की इसी स्थिति की संभावना की गयी है।

**संख्यामंगलग्रन्थि**:-संख्याबोधको मंगलार्थो ग्रन्थिः। यह बच्चों के प्रति जन्मदिवस पर मनाया जाने वाला एक उत्सव है। इस दिन स्त्रियाँ एक डोरे में उतनी ही गाँठें सफेद सरसों, दूर्वा और गोरोचन आदि मंगलवस्तुओं के सहित बाँध देती हैं। आज भी इस उत्सव को लोक में जन्मगाँठ या वर्षगाँठ कहते हैं। इसके सम्बन्ध में विद्यासागर कहते हैं-'संख्याबोधको मंगलार्थो ग्रन्थिः, अतीतवर्षसमसङ्गयाकग्रन्थिमत् सूत्रमिति यावत्। जन्मतिथौ हस्ते सूत्रमभिबध्यते तच्च सूत्रं जन्मग्रन्थिरुच्यते।'

**विलोलकवरीकम् -** वियोगिनी सीता केशों को सँवारना और वेणीरूप में बाँधना नियम-विरुद्ध होने के कारण त्याग चुकी थीं, अतएव मुख पर बिखरे हुए केश चंचल हो रहे थे।

**टिप्पणी-** सम्भावितम् - सम् +भू + णिच् + क्त (कर्मणि)। सरयूमुखात् - 'आख्यातोपयोगे' (1/4/29) से पंचमी। उपश्रुत्य - उप +श्रु + ल्यप्, '''स्वस्य पिति कृति तुक्' से तुक् का आगम। व्यपदेशः - वि +अप +दिश् + घञ् ।

**मुरला:-** इयं हि सा-

**किसलयमिव मुग्धं बन्धनाद् विप्रलूनं**
**हृदयकुसुमशोषी दारुणो दीर्घशोकः।**

**ग्लपयति परिपाण्डु क्षाममस्याः शरीरं**
**शरदिज इव घर्मः केतकीगर्भपत्रम्॥5 ॥**

**अन्वयः-** हृदयकुसुमशोषी दारुणः दीर्घशोकः बन्धनाद् विप्रलूनं मुग्धं किसलयमिव अस्याः परिपाण्डु क्षामं शरीरं शरदिजः घर्मः केतकीगर्भपत्रमिव ग्लपयति॥5 ॥

□ **अर्थः- मुरला**-यही वह (सीता) है- हृदयकुसुम को सुखाने वाला दारुण चिरस्थायी शोक, वृन्त से टूटकर अलग हुए सुन्दर कोमल नवपल्लव के समान समग्रतया पीतवर्ण तथा कृश इस (सीता) के शरीर को, शरत्कालिक धूप जैसे केतकीपुष्प की भीतरी पँखुड़ी को वैसे ही म्लान कर रहा है॥5॥ प्रस्तुत पद्य में उपमा, अलंकार तथा मालिनी छन्द है।

**व्याख्या:- इयं हि सा** - यह वाक्य यहीं पर समाप्त हो जाता' परन्तु प्रोú काणे इस वाक्य का अन्वय अगले श्लोक के प्रथम चरण से कर अर्थ करते हैं - यह वह सीता है, जो अपने वृन्त से टूटे हुए किसलय के समान है। वे प्रथम चरण को 'शरीर' का विशेषण मानने में दूरान्वय दोष मानते हैं। परन्तु प्रोú काले प्रथम चरण 'किसलयमिव मुग्धं बन्धनाद्विप्रलूनम्' को शरीर का ही विशेषण मानते हुए 'परिपाण्डु शरीर' की 'वृन्तच्युत किसलय' से तुलना को बहुत सुन्दर मानते हैं।

**केतकीगर्भपत्रम् -** केतकी के भीतर का पत्र अत्यन्त कोमल तथा पाण्डुवर्ण का होता है। सीता के परिपाण्डु तथा क्षाम शरीर का उपमान केतकीगर्भपत्र है तथा दीर्घशोक का उपमान शरदिज घर्म है। दीर्घशोक पहले भीतर हृदयकुसुम को ही सुखा रहा था, अब बाहर शरीर को भी सुखा रहा है।

□ **टिप्पणी:-** मुग्धम् - □□मुह् + क्त। विप्रलूनम् - वि + प्र +लून् छेदने +क्त (कर्मणि)। शोषी - □□शुष् + णिच् +णिनि (ताच्छील्ये)। ग्लपयति - □□ग्लै (ग्ला) +णिच् +लट्, पुक् का आगमः, 'ग्लास्नावनुवमां च' से वैकल्पिक मित्त्व होने से पाक्षिक ह्रस्व, अतएव ग्लपयति और ग्लापयति दोनों रूप होते हैं। क्षामम् - □□क्षै + क्त;'क्षायो मः' से निष्ठा 'त' को म। शरदिजः□-□शरदि जातः, 'सप्तम्यां जनेर्डः' से ड प्रत्यय, 'जन्' के टि (अन् का लोप। 'प्रावृट्शरत्कालदिवां जे' से सप्तमी का अलुक्।)

(इति परिक्रम्य निष्क्रान्ते)शुद्धविष्कम्भकः।

(नेपथ्ये) प्रमादः प्रमादः।

(ततः प्रविशति पुष्पावचयव्यग्रा सकरुणौत्सुक्यमाकर्णयन्ती सीता)

**सीता:-** अहो! जानामि प्रियसखी मे वासन्ती व्याहरतीति।

(पुनर्नेपथ्ये)

**सीतादेव्या स्वकरकलितैः सल्लकीपल्लवाग्रै-**
**रग्रे लोलः करिकलभको यः पुरा वर्धितोऽभूत्।**

**सीता:-** किं तस्य

**वध्वा सार्धं पयसि विहरन्सोऽयमन्येन दर्पा-**
**दुद्दामेन द्विरदपतिना सन्निपत्याभियुक्तः ।।6 ।।**

**अन्वयः-** पुरा सीतादेव्या यः अग्रे लोलः करिकलभकः स्वकरकलितैः सल्लकीपल्लवाग्रैः वर्धितोऽभूत्, सोऽयं वध्वा सार्धं पयसि विहरन् अन्येन उद्दामेन द्विरदपतिना दर्पात् सन्निपत्य अभियुक्तः।।6 ।।

**अर्थः-**(इस प्रकार घूमकर दोनों निकल गयीं)

शुद्ध विष्कम्भक समाप्त।

(नेपथ्य में)विपत्ति! विपत्ति!

(तदनन्तर फूल चुनने में लगी हुई, करुणा और उत्सुकता केसाथ सुनती हुई सीता का प्रवेश)

**सीताः-**अरे, जान पड़ता है कि मेरी प्रियसखी वासन्ती बोल रही है।

(पुनः नेपथ्य में)

सीता देवी के द्वारा अपने हाथों से दिये गये सल्लकी वृक्ष के कोमल पत्तों के अग्रभागों से, जो (सीता देवी के)आगे (पल्लवों को लेने के लिए) चपल (बना हुआ) बेचारा गजशावक पहले (वनवास के समय में) पाला पोसा गया था।

**सीताः-**क्या हुआ उसको?

वही यह (अपनी) वधू के साथ जल में विहार करता हुआ किसी दूसरे मत्त गजेन्द्र के द्वारा दर्प के कारण वेग से झपट कर आक्रान्त कर लिया गया है ।।6।। प्रस्तुत पद्य में सहोक्ति अलंकार एवं मन्दाक्रान्ता छन्द है।

**व्याख्याः- शुद्धविष्कम्भक** - संस्कृतात्मक विष्कम्भ। भूत तथा भावी घटनाओं की सूचना विष्कम्भक में दी जाती है। यहाँ मुरला तथा तमसा मध्यमपात्रों का संवाद केवल संस्कृत भाषा में है, अतः यह शुद्धविष्कम्भक है।

**नेपथ्यः-** वह स्थान जहाँ रंगमंच के समीप पर्दे के पीछे नट लोग अपनी वेशभूषा धारण किया करते हैं। **'कुशीलवकुटुम्बस्य स्थलं नेपथ्यमुच्यते'**। कुशीलवाः नटाः, तेषां कुटुम्बस्य वृन्दस्य स्थलं वेषपरिग्रहस्थानं नेपथ्यम्।

**अवचयः-** 'हस्तादाने चेरस्तेये' सूत्र से घञ् होकर 'अवचायः' होना चाहिए।

**स्वकरकलितैः-** अपने हाथों से गृहीत अर्थात् अपने हाथों से दिये गये।

**करिकलभकः-**'कलभः करिशावकः' (अमरकोष)तदनुसार 'कलभ' शब्द से हाथी के ही बच्चे का बोध होता है, फिर भी 'करि' पद का यहाँ जो ग्रहण किया है, उससे 'कलभ' शब्द का सामान्य अर्थ शावक मात्र लिया जाना चाहिए।

**टिप्पणी:-** अवचयः□ -□अव+चि+अच् (एरच्' 3/3/56)। आकर्णयन्ती-आ+कर्ण (चुरादि)+णिच् + शतृ+ङीप्। कलितैः□-□□□□कल्+क्त (कर्मणि)। करिकलभकः-करिकलभ+कन् (अनुकम्पायाम्) । वर्धितः- वृध्+णिच्+क्त (कर्मणि)। वध्वा□-□'सार्धं पद के योग में तृतीया। विहरन्- वि+हृ+शतृ। द्विरदपतिना - द्वौ रदौ दन्तौ येषां ते द्विरदाः गजास्तेषां पतिः, तेन 'पतिः समास एव' सूत्र से घिसंज्ञक होने के कारण तृतीया एकवचन 'टा' को 'ना' हो गया (आङो नाऽस्त्रियाम्'), केवल पति शब्द का तृतीया में 'पत्या' रूप होता है। सन्निपत्य - सम्+ नि +पत् +ल्यप्। अभियुक्तः - अभि +युज् + क्त (कर्मणि)।

**सीताः**– (ससम्भ्रमं कतिचित्पदानि गत्वा) आर्यपुत्र! परित्रायस्व परित्रायस्व मम तं पुत्रकम्। (स्मृतिमभिनीय सवैक्लव्यम्)। हा धिक्! , हा धिक्! तान्येव चिरपरिचितान्यक्षराणि पंचवटीदर्शनेन मां मन्दभागिनीमनुबध्नन्ति। हा आर्यपुत्र (इति मूर्च्छति )।

(प्रविश्य) **तमसा :-** वत्से! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि।

(नेपथ्ये)विमानराज! अत्रैव स्थीयताम्।

**सीताः**– (समाश्वस्य ससाध्वसोल्लासम्) अहो! जलभरभरितमेघमन्थरस्तनितगम्भीरमांसलः कुतो न्वेष भारतीनिर्घोषो भ्रियमाणकर्णविवरां मामपि मन्दभागिनीं झटित्युत्सुकयति?

**सीताः- (आश्वस्त होकर भय और हर्ष के साथ)** जल भार से भरे मेघ के मन्दगर्जन के समान गम्भीर एवं स्फीत यह वाणी की ध्वनि ,भरे जाते हुए कर्णविवर वाली मुझ मन्दभागिनी को भी कहाँ से (आकर) तुरन्त उत्कण्ठित बना रही है ।

**तमसाः**– (सस्नेहास्रम् ) अयि वत्से!

**तमसाः-** (स्नेहाश्रु से युक्त होकर) अरी बेटी !

**अपरिस्फुटनिस्वाने कुतस्त्येऽपि त्वमीदृशी।**
**स्तनयित्नोर्मयूरीव चकितोत्कण्ठितं स्थिता।।7 ।।**

**अन्वयः-** स्तनयिन्तोः अपरिस्फुटनिस्वाने मयूरी इव त्वं कुतस्त्येऽपि अपरिस्फुट निस्वाने त्वम् ईदृशी चकितोत्कण्ठितं स्थिता।।7 ।।

**अर्थः- सीता -** (घबड़ाहट के साथ कुछ पग चलकर) आर्यपुत्र! मेरे उस बेचारे पुत्र को बचाइए, बचाइए। (रामचन्द्र कृत परित्याग के स्मरण का अभिनय कर) छिः! छिः! वे ही (आर्यपुत्र शब्द रूप) चिरकाल तक बार-बार प्रयुक्त अक्षर आज भी पंचवटी के दर्शन से मुझ मन्दभागिनी का अनुसरण करते हैं (मुझ मन्दभागिनी के मुख से सहसा निकल आते हैं) हा आर्यपुत्र! ;ऐसा कहकर मूर्छित हो जाती है)

(प्रवेश करके)तमसा-वत्से! धैर्य धारण करो, धैर्य धारण करो।

(नेपथ्य में)विमानराज! यहीं रुका जाय।

**सीता:-** (आश्वस्त होकर, भय और हर्ष के साथ) जल-भार से भरे मेघ के मन्दगर्जन के समान गम्भीर एवं स्फीत यह वाणी की ध्वनि, भरे जाते हुए कर्णविवर वाली मुझ मन्दभागिनी को भी कहाँ से (आकर) तुरन्त उत्कण्ठित बना रही है ?

**तमसा:-** (स्नेहाश्रु से युक्त होकर) अरी बेटी! कहीं से भी उत्पन्न  अस्पष्ट ध्वनि में तुम मेघ के शब्द में मयूरी के समान ऐसी चकित और उत्कण्ठित हो रही हो! ।।7।। इस पद्य में उपमा अलंकार एवं अनुष्टुप् छन्द है।

□**व्याख्या:- पुत्रकम्** - पुत्र शब्द से 'अनुकम्पा' अर्थ में कन्, अनुकम्पनीय बेचारे पुत्र को। पुत्र का अर्थ यहाँ कृत्रिम पुत्र भी हो सकता है, क्योंकि वह गजशावक सीता का कृत्रिम पुत्र ही तो था। तब 'इवे प्रतिकृतौ' (5/3/96) सूत्र से कन् प्रत्यय होगा।

आर्यपुत्र! परित्रायस्व-सीता जी घबड़ाहट में भूल गयीं कि रामचन्द्र उनका परित्याग कर चुके हैं और अपने हाथी के बच्चे की रक्षा के लिए इन्हीं को पुकारती हैं। परित्याग वाली बात का उन्हें बाद में स्मरण होता है।

**ससाध्वसोल्लासम्** - मुझ परित्यक्ता को देखकर राम क्या कहेंगे? मैं उनके सामने कैसे पडूँ? यह सोचकर सीताजी को एक तरफ भय हो रहा था और दूसरी तरफ बहुत समय (बारह वर्षो)के बाद होने वाले प्रिय के दर्शन की आशा से उल्लास भी हो रहा था।

**सस्नेहास्रम्** - सीता की दशा देखकर तमसा की आँखों में स्नेहवश आँसू छलक आये। 'सस्मितास्रम्' (पाठा0)-राम के शब्द को सुनकर सीता को जो उत्सुकता हुई, उसे देखकर तमसा मुस्करा उठी।

**चकितोत्कण्ठितम्** - सहसा राम के कण्ठ का स्वर सुनने से सीता चकित हो गयीं तथा उनके आगमन से चरणदर्शन की सम्भावनावश उन्हें उत्कण्ठा भी हुई। उत्कण्ठा का लक्षण है- 'रागे त्वलब्धविषये वेदना महती तु या। संशोषणी तु गात्राणां तामुत्कण्ठां विदुर्बुधः।'

□**टिप्पणी:-** स्थीयताम्□-□□□□स्था+लोट् (भावे)। समाश्वसिहि □-□सम्+आ+श्वस्+लोट् (सिप्=हि)। भरितः- भर+इतच्। स्तनितम्=□□□स्तन्+क्त (भावे)। भ्रियमाणम् - भृ + कर्मणि लट् (शानच्)।

**सीता:-** भगवति! किं भरणस्यपरिस्फुटेति। मया पुनः स्वरसंयोगेन प्रत्यभिज्ञातमार्यपुत्र एव व्याहरतीति।

**तमसा:-** श्रूयते तपस्यतः किल शूद्रस्य दण्डधरणार्थमैक्ष्वाको राजा जनस्थानमागत इति।

**सीता:-** दिष्टया अपरिहीनराजधर्म: खलु स राजा।

(नेपथ्ये)

**यत्रा द्रुमा अपि मृगा अपि बन्धवो मे**
**यानि प्रियासहचरश्चिरमध्यवात्सम्।**
**एतानि तानि बहुनिर्झरकन्दराणि**
**गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि।।8 ।।**

**अन्वयः-** यत्रा द्रुमा: अपि मृगाः अपि मे बन्धव:यानि प्रियासहचरः चिरम् अध्यवात्सम्, तानि एतानि गोदावरीपरिसरस्य गिरै: बहुनिर्झरकन्दराणि तटानि (विद्यन्ते)।। 8 ।।

□ **अर्थ:- सीता -** भगवति! ‘अस्पष्ट’ - ऐसा क्यों कहती हैं? (मेरे कानों से उस) स्वर का सम्बन्ध होने से - चिर परिचय होने से मैंने तो पहचान (ही) लिया है कि आर्यपुत्र ही बोल रहे हैं।

**तमसा:-** ऐसी बात सुनी जाती है कि तपस्या करने वाले शूद्र (शम्बूक) के दण्डविधान के लिए इक्ष्वाकुवंशी राजा जनस्थान में आया है।

**सीता:-** भाग्य से उस राजा ने राजधर्म छोड़ा नहीं है।

(नेपथ्य में)

जहाँ वृक्ष भी, मृग भी मेरे बन्धु (थे)जिनमें मैं प्रिया (जानकी) के साथ लम्बे समय तक रहा, वे ही ये गोदावरी के समीपवर्ती पर्वत के बहुत से झरनों और कन्दराओं वाले प्रदेश हैं।।8।। प्रस्तुत पद्य में अर्थापत्ति अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

□**व्याख्या:- स्वरसंयोगेन** - सीता के कहने का आशय है कि मेरे कान आर्यपुत्र के स्वर से चिरपरिचित हैं, अतः कान में उस स्वर के पड़ते ही मैंने निश्चित रूप से जान लिया कि यह स्वर आर्यपुत्र का ही है।

**ऐक्ष्वाको राजा** - राम के लिए राजा शब्द का प्रयोग कर सीतानिर्वासनजनित अपना क्षोभ तमसा व्यक्त कर रही है। यह वाक्य व्यंग्यपूर्ण है। व्यंग्य यह है कि एक बार तो उसने निरपराध पत्नी का निर्वासन कर अपने राजधर्म का प्रकर्ष दिखलाया, वह अब पुनः (शूद्र ही सही) तपस्या करने वाले व्यक्ति का वध करने को उद्यत है। ऐसा वह क्यों न करे? आखिर अपने पूर्वज इक्ष्वाकु का नाम कैसे उजागर करेगा?

**दिष्टया -** ‘दिष्टि’ शब्द का तृतीयैकवचनान्त विभक्ति प्रतिरूपक अव्यय है। इसका प्रयोग इन अर्थों में होता है - भाग्य से, सौभाग्य से, ईश्वर का धन्यवाद।

**परिसर**:- तट, किनारा, सामीप्य, किसी नदी या पर्वत का पर्यावरण (मिली या जुड़ी हुई भूमि)।
**तटानि**:- इसका अर्थ लक्षणा से ‘प्रदेश’ है।
**टिप्पणी:-** प्रत्यभिज्ञातम्-प्रति+अभि+ज्ञा+क्त (कर्मणि)। व्याहरति□ - □वि+आ+हृ+लट्। अध्यवात्सम् -अधि+वस्+लुङ् (मिप्)। ‘उपान्वध्याङवसः’ सूत्र के अनुसार आधार की कर्म संज्ञा और कर्म में द्वितीया विभक्ति (यानि तटानि)।

**सीताः**–(दृष्टवा)–(इति तमसामाश्लिष्य मूर्च्छति हा कथं प्रभातचन्द्रमण्डला-पाण्डुरपरिक्षामदुर्बलेनाकारेणायं निजसौम्यगम्भीरानु- भावमात्रप्रत्यभिज्ञातव्य आर्यपुत्र एव। भगवति तमसे! धारय माम्।

**तमसाः-** वत्से! समाश्वसिहि समाश्वसिहि।

(नेपथ्ये) अनेन पंचवटीदर्शनेन -

**अन्तर्लीनस्य दुःखाग्नेरद्योद्दामं ज्वलिष्यतः।**
**उत्पीड इव धूमस्य मोहः प्रागावृणोति माम्।।9 ।।**

**अन्वयः-** अन्तर्लीनस्य अद्य उद्दामं ज्वलिष्यतः दुःखाग्नेः धूमस्य उत्पीड इव मोहः मां प्राक्आवृणोति।।9 ।।

**अर्थः- सीता -** (देखकर) हाय! क्यों? प्रभातकालीन चन्द्रमण्डल के समान विवर्ण, अत्यन्त क्षीण एवं दुर्बल आकार से उपलक्षित यह अपने सौम्य एवं गम्भीर प्रभाव मात्र से ही पहचाने जाने योग्य आर्यपुत्र ही हैं। भगवति तमसे! मुझे पकड़ो (सहारा दो)।
(इस प्रकार तमसा का आलिंगन कर मूर्च्छित हो जाती है)
**तमसाः-** बेटी आश्वस्त हो, आश्वस्त हो।
(नेपथ्य में) पंचवटी के इस दर्शन से -
अन्तःकरण में छिपा शोकानल आज अनियन्त्रित भाव से भड़कने वाला है। उसके धूमसंघात के समान मोह (मूर्च्छा) मुझे पहिले ही आच्छादित (अभिभूत) कर रहा है।।9।। इस पद्य में उपमा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

□**व्याख्याः- निजसौम्यगम्भीरानुभवमात्रप्रत्यभिज्ञातव्य-** सीता के कहने का आशय है कि आर्य-पुत्र (राम) का शरीर इतना विवर्ण, कृश एवं दुर्बल हो गया है कि आकार से उन्हें पहचाना नहीं जा सकता। केवल उनके सौम्य एवं गम्भीर विशेष तेज को देखने पर ही यह निश्चय प्रतीति होती है कि ये वही (राम) हैं।

**अनेन पंचवटीदर्शनेन-** इसका अन्वय आगे के श्लोक के साथ करना चाहिए।

**दुःखाग्ने**-'ज्वलिष्यतः' पद की संगति के लिए दुःखमेवाग्नि इति दुःखाग्निः, ऐसा रूपक समास होना चाहिए। किन्तु 'धूमस्य उत्पीड इव' इस वाक्यांश को देखते हुए 'दुःखमग्निरिवेति दुःखाग्निः' ऐसा उपमित समास मानना ही उचित प्रतीत होता है।

**उत्पीड इव धूमस्य**-आग के भड़कने के पहिले उसका धुआँ चारों ओर छा जाता है, उसी प्रकार राम के हृदय में छिपे हुए दुःख के बाहर प्रकट होने से पहिले मोह (मूर्च्छा) उन्हें आच्छादित कर रहा है।

□**टिप्पणी:-** परिक्षाम□-□परि+क्षै+क्त ('क्षायो मः' से मकारादेश)।आकारेण□ - □यहाँ 'उपलक्षितः' परिशेषलभ्य है। अतः (इत्थम्भूतलक्षणे' 2/3/21) से तृतीया हुई है। अनुभावः□-□अनु+भू+णिच्+घञ्।

हा प्रिये जानकि!

**तमसा:**– (स्वगतम्) इदं तदाशंकितं गुरुजनेन।

**सीता:**– (समाश्वस्य) हा कथमेतत् ?

(पुनर्नेपथ्ये)

हा देवि दण्डकारण्यवासप्रियसखि विदेहराजपुत्रि! (इति मूर्च्छति)

**सीता:**– हा धिक् , हा धिक्! मां मन्दभागिनीं व्याहृत्यामीलन्नेत्रानीलोत्पलो मूर्च्छितः एवार्यपुत्राः। हा कथं धरणिपृष्ठे निरुद्ध निःश्वसनिःसहं विपर्यस्तः। भगवति तमसे! परित्रायस्व परित्रायस्व। जीवयार्यपुत्रम्।

**तमसा:- त्वमेव ननु कल्याणि सञ्जीवय जगत्पतिम्।**
**प्रियस्पर्शो हि पाणिस्ते तत्रैष: निरतो जनः।। 10 ।।**

**अन्वय:-** ननु कल्याणि! त्वमेव जगत्पति सञ्जीवय, हि ते पाणिः प्रियस्पर्शः तत्र एषः जनः निरतः।।10 ।।

**अर्थ:-** हा प्रिये जानकि!

**तमसा:-** (स्वगत) गुरुजन (लोपामुद्रा और गंगा) के द्वारा इसी बात की आशंका की गयी थी।

**सीता:-** (आश्वस्त होकर) हाय, यह (शोकाभिभव और मूर्च्छा) कैसे?

(पुनः नेपथ्य में)

हा देवि दण्डकारण्य में साथ रहने वाली जानकि! (ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाते हैं)

**सीता:-** हाय, हाय! मुझ अभागिनी को पुकार कर, नीलकमल के समान बन्द होते हुए नेत्रों वाले आर्यपुत्र मूर्च्छित ही हो गये हैं। हाय, रुकी हुई साँस वाले तथा अशक्त होकर भूतल पर कैसे अधोमुख गिरे पड़े हैं? भगवति तमसे! (मुझे) बचाओ, बचाओ। आर्यपुत्र को जीवित करो। (ऐसा कहकर पैरों पर गिरती है)।

**तमसा:**- हे कल्याणि! तुम ही जगत के स्वामी (राम) को होश में लाओ। क्योंकि तुम्हारे ही हाथ का स्पर्श (उन्हें) प्रीतिकारक है, अतः उसी में वे (राम) अनुरक्त हैं।।10।। प्रस्तुत पद्य में काव्यलिंग अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

□**व्याख्या:- निरुद्धनिःश्वासनि-** सहम्-निरुद्ध निःश्वासम् तथा निःसहम् ये दोनों पद क्रियाविशेषण हैं, 'सुप्सुपा' से समास हुआ है। परित्रायस्व, परित्रायस्व-संभ्रम में द्विरुक्ति है।

**कल्याणि सञ्जीवय जगत्पतिम्**- यह वाक्य व्यंजना से भरा हुआ है। तमसा के कथन का आशय है कि मानती हूँ कि राम ने तुम्हें निर्वासित कर दिया है, उन्हें होश में लाने के लिए तुम अपने हाथ से उनका स्पर्श करने का साहस कैसे कर सकती हो? किन्तु यह भी सोचो कि तुम कल्याणी हो, लोक-कल्याण की दृष्टि से वैसा करना तुम्हारा परम कर्त्तव्य हो जाता है। राम जगत् के स्वामी हैं, उनके जीवित होने पर ही जगत का जीवन सम्भव है। प्रियस्पर्शो...जनः। तमसा पुनः कहती है कि दूसरी बात यह है कि मैं परायी स्त्री राम का स्पर्श कैसे कर सकती हूँ?तुम्हारे हाथ का स्पर्श उन्हें सदा आनन्द देता रहा था, अतएव उनका अनुराग चिरकाल से उसी तुम्हारे करस्पर्श में बना हुआ है, अतः तुम्हीं राम को होश में लाने का स्वकर्त्तव्य पालन करो।

□ **टिप्पणी:-** व्याहृत्य□-□वि+आ□□□ हृ+ल्यप्। आमीलत्-आ+मील्+शतृ। निरुद्ध□-□नि+रूध+क्त । निःसहम् -निस्+सह्+अच्। विपर्यस्तः वि+परि+अस् (क्षेपणे)+क्त । निरतः□-□नि+रम्+क्त।

□ **सीता:**– (इति ससम्भ्रमं निष्क्रान्ता) यद् भवतु तद भवतु। यथा भगवत्याज्ञापयति।

(ततः प्रविशति भूम्यां निपतितः स्रास्रायां सीतया स्पृश्यमानः साह्लादोच्छ्वासो रामः।)

**सीता:**– (किंचित् सहर्षम्) जाने पुनः प्रत्यागतमिव जीवितं त्रैलोक्यस्य।

**राम**ः- हन्त! भोः किमेतत् -

**आश्च्योतनं नु हरिचन्दनपल्लवानां**
**निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजो नु सेकः।**
**आतप्तजीवितपुनः परितर्पणोऽयं**
**सञ्जीवनौषधिरसो नु हृदि प्रसिक्तः।। 11 ।।**

**अन्वय:-** हरिचन्दनपल्लवानामाश्च्योतनं नु ? निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजः सेकः नु ? अयम् आतप्तजीवितपुनः परितर्पणः सञ्जीवनौषधिरसः हृदि प्रसिक्तः नु ?।। 11 ।।

□ **अर्थः- सीता-** जो हो वह हो। भगवती की जैसी आज्ञा। (ऐसा कहकर घबराहट युक्त त्वरा के साथ निकल जाती है।) (तब भूमि पर पड़े हुए, आँखों में आँसू भरे सीता के द्वारा सहलाये जाते हुए तथा हर्ष और श्वाससंचारयुक्त राम का प्रवेश।)

**सीताः-** (कुछ हर्ष के साथ) मैं समझती हूँ कि तीनों लोकों का जीवन मानों फिर लौट आया है।

**रामः-** अहा! अरे, यह क्या? क्या (मेरे) हृदय पर हरिचन्दन के किसलयों का रस छिड़क दिया गया ? अथवा निचोड़े हुए चन्द्रकिरणरूप नवांकुरों के रस से सेचन किया गया? या सन्तप्त जीवन को पुनः परितृप्त करने वाला संजीवनी औषधि का रस छिड़क दिया गया है?॥11॥ यहाँ सन्देह अलंकार और वसन्ततिलका छन्द है।

**व्याख्याः- यद् भवतु तद् भवतु**- जो हो सो हो। सीता का अभिप्राय है कि निर्वासित मेरे हाथ के स्पर्श से आर्यपुत्र मुझ पर चाहे कुपित हों, चाहे प्रसन्न, यह मुझे नहीं सोचना है। भगवती तमसा के आज्ञानुसार मुझे उनके कल्याणकर कार्य में हिचकिचाहट छोड़कर लग जाना है।

**त्रैलोक्यस्य जीवनम्**- सकल जीवलोक के आधारभूत राम के ही जीवन पर तीनों लोकों का जीवन निर्भर है, अतः राम के होश में आ जाने पर सीता ने कहा कि मेरी समझ में मानो तीनों लोकों का जीवन फिर लौट आया है।

**हरिचन्दन-** हरिचन्दन एक देव वृक्ष है। एक विशेष प्रकार के चन्दन को हरिचन्दन कहते हैं। यह काटने पर तो लाल रंग का दिखलायी देता है, किन्तु घिसने पर पीले रंग का होता है - 'छेदे रक्तं कषे पीतं हरिचन्दनमुच्यते'। सीता के कर-स्पर्श से रामचन्द्र जी को अनिर्वचनीय आनन्द हुआ, जिसके कारण का वे अनेक प्रकार से अनुमान करते हैं।

□**टिप्पणीः-** स्पृश्यमानः□-□□□□स्पृश + लट् (कर्मणि)-शानच्। प्रत्यागतम्□-□प्रति-आ+गम्+क्त। जीवितम्□-□□□□जीव्+क्त (भावे)। त्रैलोक्यम्□-□त्रयाणां लोकानां समाहारः त्रिलोकी, त्रिलोक्येव त्रैलोक्यम्। स्वार्थेष्यञ् । आश्च्योतनम्□-□आ+श्च्युत्+ल्युट्। सेकः□-□सिच्+घञ् । परितर्पणः□-□ परि□+तृप्+ल्यु (अन) ('नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः') अथवा 'कृत्यल्युटो बहुलम्' के अनुसार कर्ता में ल्युट् (अन) - परि +तृप् + णिच्□+ल्युट् (अन) 'णेरनिटि' से णिच् का लोप, लघूपधगुण - परितर्पणः।

अपि च – **स्पर्शः पुरा परिचितो नियतं स एव**
**संजीवनश्च मनसः परितोषणश्च**
**सन्तापजां सपदि यः परिहृत्य मूर्च्छा-**
**मानन्दनेन जडतां पुनरातनोति॥ 12 ॥**

**अन्वयः-** पुरा परिचितः सञ्जीवनो मनसः परितोषणश्च नियतं स एव स्पर्शः। यः सन्तापजां मूर्च्छां परिहृत्य सपदि आनन्दनेन पुनर्जडताम् आतनोति॥12 ॥

□ **अर्थ:-** और भी-निश्चय ही समाश्वस्त करने वाला और मन को आह्लाद देने वाला यह वही पूर्व परिचित स्पर्श है, जो विरहसन्तापजनित मूर्च्छा को तत्काल दूर कर आनन्दविधान से पुनः जडता (विह्वलता)समुत्पन्न कर रहा है।।12।। इसमें विरोध अलंकार और वसन्ततिलका छन्द है।

**व्याख्या:- संजीवनः-** सम्यक्, जीवन देने वाला। परितोषण-परितोष देने वाला। इस श्लोक में 'स्पर्श मूर्च्छा को दूर कर जड़ता फैला रहा है' यह कथन होने से विरोध अलंकार है। जड़ता का अर्थ 'आनन्दविह्वलता' होने से उसका परिहार हो जाता है।

□ **टिप्पणी:-** सञ्जीवनः□-□सम् +जीव् + णिच् + ल्युट् (कर्तरि) 'कृत्यल्युटो बहुलम्'। इसी प्रकार परि +तुष् + णिच् +ल्युट् (कर्तरि)। परिहृत्य - परि +हृ +ल्यप्, तुगागम। आनन्दनम् - आ + नन्द् (टुनदि समृद्धौ + ल्युट् (भावे)।

## अभ्यास प्रश्न:1

निम्नलिखित प्रश्नों में से सही विकल्प चुनकर लिखिए -

1.उत्तररामचरितम् के तृतीय अंक का क्या नाम है ?

क. पञ्चवटी प्रवेश    ख. कौशल्या- जनकयोग

ग. छाया अंक    घ. चित्रदर्शन

2. तमसा और मुरला किसका नाम है ?

क. सीता की सखियाँ का    ख. नदियों का

ग. मुनिपत्नी    घ. वनदेवी का

3. अगस्तय ऋषि की पत्नी का क्या नाम है ?

क. तमसा    ख. लोपामुद्रा

ग. मुरला    घ. गोदावरी

4. 'दृष्टिया अपरिहीनराजधर्म: खलु स राजा ' यह कथन किसका है ?

क. सीता    ख. गोदावरी

ग. राम    घ. गंगा

5. लव-कुश का पालन-पोषण किसके आश्रम में हुआ था ?

क. अगस्तय ऋषि    ख. अत्रि ऋषि

ग. वशिष्ठ ऋषि    घ. बाल्मीकि ऋषि

**सीता:**–(ससाध्वसोत्कम्पमपसृत्य) एतावदेवेदानीं मे बहुतरम्।

**राम**:– (उपविश्य) न खलु वत्सलया सीता देव्याऽभ्युपपन्नोऽस्मि ?

**सीता:**– हा धिक्! हा धिक् ! किमिति ममार्यपुत्रो मार्गिष्यते ? रामः - भवतु, पश्यामि।

**सीता:-** भगवति तमसे! अपसरावस्तावत्। मां प्रेक्ष्यानभ्यनुज्ञातेन सन्निधानेन राजाऽधिकं कोपिष्यति।

**तमसा:-** अयि वत्से! भागीरथीप्रसादाद् वनदेवताऽप्यदृश्याऽसि संवृत्ता।

**सीता:-** आम् अस्ति खल्वेतत्।

**राम**ः- हा प्रिये जानकि!

**सीता:**– (समन्युगद्गदम्) आर्यपुत्र! असदृशं खल्वेतद्वचनमस्य वृत्तान्तस्य(..........)अथवा किमिति वज्रमयी जन्मान्तरेष्वपि पुनरसम्भावितदुर्लभदर्शनस्य मामेव मन्दभागिनीमुद्दिश्य वत्सलतयैवंवादिन आर्यपुत्रस्योपरि निरनुक्रोशा भविष्यामि ? अहमेवैतस्य हृदयं जानामि, ममाप्येषः।

**राम**ः– (सर्वतोऽवलोक्य) हा! न किंचिदत्र।

**सीता:-** भगवति तमसे! तथा निष्कारणपरित्यागिनोऽपि एतस्यैवंविधेन दर्शनेन कीदृश इव मे हृदयानुबन्ध् इति न जानामि।

**तमसा:-** जानामि वत्से! जानामि

**तटस्थं नैराश्यादपि च कलुषं विप्रियवशा-**
**द्वियोगे दीर्घेऽस्मिञ्झटिति घटनात्स्तम्भितमिव।**
**प्रसन्नं सौजन्याद् दयितकरुणैर्गाढकरुणं**
**द्रवीभूतं प्रेम्णा तव हृदयमस्मिन् क्षण इव।।13**

**अन्वय:-** तव हृदयम् अस्मिन् क्षणे नैराश्यात् तटस्थमिव, विप्रियवशात् कलुषमिव, दीर्घे अस्मिन् वियोगे झटिति घटनात् स्तम्भितमिव, दयितकरुणैः गाढकरुणम्, प्रेम्णा द्रवीभूतमिव।। 13 ।।

□**अर्थ:- सीता-** (भय और कम्पन के साथ हटकर) इतना ही इस समय मुझे बहुत अधिक है (अर्थात् इस निर्वासिता में अब भी स्नेह रखते हैं, मेरे कर स्पर्श को बहुत मानते हैं, आज की परिस्थिति में इतना ही मेरे लिए बहुत है - यह कम सौभाग्य की बात नहीं है)।

**राम:-**(बैठकर) (कहीं)स्नेहशील सीता देवी के द्वारा तो मैं अनुगृहीत नहीं किया गया हूँ?

**सीता:-** हा धिक्! हा धिक्! (कहीं) आर्यपुत्र मुझे ढूँढेंगे क्या ?

**राम:-** अच्छा, देखता हूँ।

**सीता:-** भगवति तमसे! अब हम दोनों यहाँ से हट चलें। मुझे देखकर बिना अनुमति के, समीप स्थित होने से राजा अधिक क्रोध करेंगे।

**तमसा:-** अरी बेटी, गंगा के अनुग्रह से वनदेवताओं के लिए भी तू अदृश्य हो चुकी है।

**सीता:-** हाँ, वस्तुतः यही (बात) है।

**राम:-** हा प्रिये जानकि!

**सीता:-** (प्रणयकोप के कारण अस्पष्ट उच्चारण के साथ) आर्यपुत्र! निश्चय ही (आप का 'हा प्रिये जानकि') यह वचन इस(मेरे परित्यागरूप) वृत्तान्त के अनुरूप है। (आँसू भरकर) अथवा (ऐसा वचन कह कर) अत्यन्त कठोर (वज्रमयी) मैं, अन्य जन्मों में भी जिनका दर्शन असंभव अतएव दुर्लभ है तथा मुझ अभागिन को ही लक्ष्य करके स्नेहशीलतावश (हा प्रिये जानकि!) ऐसा वचन बोलने वाले आर्यपुत्र के ऊपर क्यों निर्दय होऊँ ? मैं ही इनका हृदय जानती हूँ, और ये मेरा।

**राम:- (**चारों ओर देखकर, खेद के साथ) यहाँ कुछ भी नहीं है।

**सीता:**- भगवति तमसे! उस प्रकार अकारण ही निर्वासित करने वाले के भी इस प्रकार के दर्शन से मेरी मनोदशा कैसी हो रही है, यह जानती नहीं हूँ।

**तमसा:**- जान रही हूँ बेटी, जान रही हूँ। तुम्हारा हृदय इस समय पुनः समागम की आशा न होने से उदासीन, किन्तु (परित्याग-रूप) अप्रिय (वृत्तान्त) से रोषयुक्त-सा, इस लम्बे वियोग में अप्रत्याशित समागम से विस्मय के कारण स्तब्ध सा, (राम के)सौजन्य से प्रसन्न प्रिय की शोकाकुल दशा से अत्यन्त शोक युक्त, (प्रिय-विषयक) प्रेम से आर्द्र-सा है।।13।। प्रस्तुत पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार और शिखरिणी छन्द है।

□**व्याख्या:- राजाऽधिकं कोपिष्यति**- यहाँ राम के लिए सीता जी के द्वारा प्रयुक्त राजा शब्द ध्यान देने योग्य है। राम बड़ी कठोरता के साथ राजधर्म का पालन करने वाले राजा हैं, पत्नी तक का निर्वासन करने में राजधर्म ही उनका प्रेरक रहा है। अब सीता यदि उनकी अनुमति के बिना कहीं उनके समीप खड़ी मिल गयीं तो उन (सीता) को उनका कोपभाजन अवश्य बनना पड़ेगा।
**असदृशं...वृत्तान्तस्य-** इस वाक्य से सीता ने अपना प्रणयकोप व्यक्त किया है। उनके कहने का भाव यह है कि पहले तो आपने मुझे निर्वासित कर दिया और अब स्नेह प्रदर्शित करते हुए विलाप भी कर रहे हैं। आपके दोनों कार्यों में अनुरूपता नहीं है। आपको मैं निष्ठुर समझूँ या स्नेहशील?
**अहमेवैतस्य हृदयं जानामि ममाप्येष**:- रामायण-सुन्दरकाण्ड (15/12) में भी कहा गया है- अस्या देव्या मनस्त¯स्मस्तस्य चास्यां प्रतिष्ठितम्। तेनेयं स च धर्मात्मा मुहूर्तमपि जीवति।।
**हृदयानुबन्ध्:-** अनुबन्ध् का अर्थ यहाँ अबाध परम्परा, सातत्य आदि है, जैसे वैरानुबन्ध प्रेमानुबन्ध आदि। **हृदयानुबन्ध् का अर्थ हुआ** - हृदय के भावों की परम्परा-विशेष का अबाध रूप से बना रहना। इस श्लोक से कवि का मनोविज्ञान-पाण्डित्य सूचित होता है।
**कलुषं विप्रियवशात्-** निष्कारण परित्याग रूप अहित के कारण कालुष्यपूर्ण-रोषयुक्त। राम ने सीता का अकारण परित्याग कर दिया था, जो विप्रिय कर्म ही कहा जा सकता है। उसके कारण सीता के मन में राम के प्रति रोष-क्षोभ होना स्वाभाविक था।

**टिप्पणी:-** अपसृत्य-अप+सृ (गतौ)+ल्यप्, तुक्। अभ्युपपन्न:-□अभि+उप+पद् (गतौ)+क्त । अनभ्यनुज्ञातः□-□नञ् (अन्) अभि + अनु+ज्ञा+क्त। संनिधान□-□सम्+नि+धा+ल्युट् (भावे)।

**रामः-** देवि!

> **प्रसाद इव मूर्तस्ते स्पर्शः स्नेहार्द्रशीतलः।**
> **अद्याप्यानन्दयति मां त्वं पुनः क्वासि नन्दिनि।।14 ।।**

**अन्वयः**- स्नेहार्द्रशीतलः ते स्पर्शः, मूर्त्तः प्रसाद इव अद्यापि माम् आनन्दयति। नन्दिनि त्वं पुनः क्वासि।।14 ।।

**अर्थः- राम-** हे देवि

स्नेह से आर्द्र (अतएव) शीतल तुम्हारा स्पर्श मूर्तिमान् अनुग्रह-सा इस समय भी मुझे

आनन्दित कर रहा है। हे आनन्ददायिनि! तुम कहाँ हो?।।14 ।। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार एवं अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्याः- नन्दिनी-** प्रायः सभी प्रतियों में ऐसा ही पाठ मिलता है। नन्दिनि शब्द का प्रयोग प्रायः पुत्री के अर्थ में मिलता है। अतः घनश्याम ने 'नन्दयितुं शीलमस्या इति नन्दिनी' ऐसा अर्थ मानना उचित समझ कर प्रथमैकवचनान्त 'नन्दिनी' 'त्वम्' का विशेषणरूप पाठ रखा है। उन्होंने कहा है - 'नन्दिनीति कवेरचातुर्यम्। तथापि नन्दयतीति धातुबलादवान्तरभेद उह्यः। नन्दिनी प्रथमैकवचनम्, नन्दिनी त्वं पुनः क्वासि इत्यर्थः।'

**टिप्पणीः-** प्रसादः- प्र+सद्+घञ् । स्पर्शः- स्पृश+घञ् ।, आनन्दयति - आ+नन्द् (टुनदि समृद्धौ)+ लट्। नन्दिनी -नन्द+णिच्+णिनि। णिजन्त 'नन्दि' से 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः' से 'णिनि' प्रत्यय।

**वासन्तीः**– (सम्भ्रान्ता) कथं देवो रघुनन्दनः?

**सीताः-** हा कथं मे प्रियसखी वासन्ती?

**वासन्तीः-** जयतु जयतु देवः।

**रामः**– (निरूप्य) कथं देव्याः प्रियसखी वासन्ती?

**बासन्तीः-** देव! त्वर्यतां त्वर्यताम्। इतो जटायुशिखरस्य दक्षिणेन सीता तीर्थेन गोदावरीमवतीर्य सम्भावयतु देव्याः पुत्राकं देवः।

**सीताः**- हा तात जटायो! शून्यं त्वया विनेदं जनस्थानाम्।
**रामः:-** अहह!! हृदयमर्मच्छिदः खल्वमी कथोद्धाताः।

**वासन्ती:-** इत इतो देवः।

**सीता:-** भगवति! सत्यमेव वनदेवता अपि मां न प्रेक्षन्ते।

**तमसा:-** अयि वत्से! सर्वदेवताभ्यः प्रकृष्टतममै श्भर्यं मन्दाकिनीदेव्यास्तत् किमित्याशघड्ढसे?

**सीता:-** ततोऽनुसरावः। (इति परिक्रामति)

**राम:-** भगवति गोदावरि! नमस्ते।

**वासन्ती:**– (निरूप्य) देव! मोदस्व विजयिना वधूद्वितीयेन देव्याः पुत्रकेणः।

**राम:-** विजयतामायुष्मान्।

**सीता:-** अहो! ईदृशो मे पुत्राकः संवृत्तः।

**राम:-** हा देवि! दिष्टया वर्धसे।

> **येनोद्गच्छद्विसकिसलयस्निग्ध्दन्ताघ्वुफरेण**
> **व्याकृष्टस्ते सुतनु! लवलीपल्लवः कर्णमूलात्।**
> **सोऽयं पुत्रास्तव मदमुखां वारणानां विजेता**
> **यत्कल्याणं वयसि तरुणे भाजनं तस्य जातः।।15 ।।**

**अन्वय:-** सुतनु! उद्गच्छद्विसकिसलयस्निग्ध्दन्ताघ्वुफरेण येन ते कर्णमूलात् लवलीपल्लवः व्याकृष्टः, मदमुचां वारणानां विजेता सो{यं तव पुत्राः तरुणे वयसि तत् कल्याणं तस्य भाजनं जातः।।15 ।।

□**अर्थ:- सीता**- ये अत्यन्त प्रदर्शित स्नेहप्राचुर्य वाले, आनन्दड्डावी, अमृतमय आर्यपुत्र केतीव्र विलाप हैं, जिनके ज्ञान अथवा विश्वास से अकारण निर्वासन रूप शल्य से युक्त होकर भी मेरा जन्म लेना श्लाघ्य है।

**राम:-** अथवा (यहाँ) प्रियतमा (सीता) कहाँ से(आयी)? निश्चय ही यह रामभद्र का (अर्थात् मेरा) भ्रम है, जिसका उत्पत्ति कारण (मेरे) सी

**सीता:**- हा, क्या मेरी प्रियसखी वासन्ती (है)?

**वासन्ती:**- महाराज की जय हो, जय हो।

**राम:- (**देखकर) क्या देवी (सीता) की प्रियसखी वासन्ती है?

**वासन्ती:-** महाराज! शीघ्रता की जाय, शीघ्रता की जाय। यहाँ से जटायुशिखर के दक्षिण (स्थित) सीता घाट से गोदावरी में उतर कर देवी (सीता) के कृतकपुत्र को (बचा कर) सम्मान दें।

**सीता:-** हा तात जटायो! तुम्हारे बिना यह जनस्थान सूना (लग रहा) है।

**राम:-** अहह!! निश्चय ही ये कथाप्रसंग हृदय के मर्मस्थल को बेधने वाले हैं।

**वासन्ती:**- महाराज! इस ओर से, इस ओर से (चलें)।

**सीता:**- भगवति (तमसे)! सचमुच ही वनदेवताएँ भी मुझे नहीं देख रही हैं।

**तमसा:-** अरी बेटी, गंगा जी का ऐश्वर्य सभी देवताओं से बढ़ा चढ़ा है, तो क्यों शंका करती हो?

**सीता:-** तब हम (दोनों) अनुसरण करें।

(ऐसा कहकर घूमती है)

**राम:-** भगवति गोदावरि! तुम्हें नमस्कार है।

**वासन्ती:**- (देखकर) महाराज! सपत्नीक विजयी, देवी (सीता) के कृत्रिमपुत्र से आनन्दित हों।

**राम:-** आयुष्मान्! सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त करे।

**सीता:-** अहो! मेरा पुत्रक ऐसा (बलशाली और महाकाय) हो गया।

**राम:**- हा देवि! भाग्य से तुम बढ़ रही हो (अर्थात् तुम्हें बधाई है)

(पूर्वकाल में) सुन्दरि! मृणालकिसलय के समान स्निग्ध निकलते हुए दाँतों वाले जिस (गजशावक) ने तुम्हारे कर्ण-प्रदेश से (अवतंसरूप से धारण किये गये लवली लता का पल्लव (अपनी सूँड से) खींच लिया था, वही यह तुम्हारा मत्तगजों का विजेता पुत्र (गजशावक) युवावस्था में जो कल्याण (अर्थात् समृद्धि) चाहिए, उसका पात्र हो चुका है।।15।। प्रस्तुत पद्य में उपमा अलंकार एवं मन्दाक्रान्ता छन्द है।

**व्याख्या**:- **संकल्पाभ्यासपाटवोपादानो**...भ्रमः-पहले रामचन्द्र ने समझा कि सीता जी ने ही उन्हें स्पर्श किया, किन्तु इधर-उधर खोजने पर भी जब उन्हें सीता जी नहीं दिखलायी पड़ी तब उन्होंने सोचा कि उन्हें ऐसा भ्रम इस कारण हुआ कि वे निरन्तर सीताजी का चिन्तन किया करते हैं। किसी पदार्थ का निरन्तर चिन्तन करते रहने से कभी-कभी ऐसा भ्रम हो जाता है कि वह पदार्थ सामने उपस्थित मालूम पड़ता है, जब कि वस्तुतः वह रहता नहीं।

यहाँ ध्यातव्य है कि वासन्ती और राम को न तो सीता दिखलायी पड़ रही है और न उसका संवाद ही उन्हें सुनायी दे रहा है, ऐसा गंगा जी के प्रभाव से हो रहा है।

**जटायुशिखरस्य-** उस शिखर पर जटायु के निवास करने के कारण उसे जटायुशिखर कहते थे। जटायु शब्द यहाँ कवि के द्वारा उकारान्त रूप में प्रयुक्त किया गया है। यह शब्द षान्त(जटायुष्) भी प्रयुक्त मिलता है।

**तात जटायो-** जटायु सीता के श्वसुर दशरथ का मित्र था। उसने रावण द्वारा सीता का हरण होते समय सीता को रावण के चंगुल से छुड़ाने में अपने प्राण दे दिये थे। अतः सीता ने उसे स्मरण करते हुए तात शब्द से सम्बोधित किया।

**सीतातीर्थेन-** नदी में उतरने का स्थान (घाट) तीर्थ कहलाता है। सीता जी जिस स्थान पर गोदावरी में स्नानार्थ उतरा करती थीं, उसका नाम 'सीता तीर्थ' पड़ गया ।

यहाँ सीता और तमसा की उक्ति -प्रत्युक्ति से कथावस्तु में स्वाभाविकता लाने का प्रयत्न किया गया है। प्रेक्षकों को जब यह मालूम हो जाता है कि मन्दाकिनी के प्रभाव से रामचन्द्र तथा वासन्ती आदि

सीता जी को देख नहीं रहे हैं, तब सीताजी की उपस्थिति में ही उनके नाम से राम का रोना-धोना प्रेक्षकों के लिए विचित्र नहीं रह जाता है।

यहाँ ध्यातव्य है कि इस गजशावक की कथा की अवतारणा में कवि का उद्देश्य लव-कुश की ओर संकेत करना है।

□**टिप्पणी:-** सम्भारः□-□सम्+भृ+घञ् । आनन्दनिष्यन्दिनः□-□ आनन्दं निष्यन्दयन्तीति आनन्दनिष्यन्दिनः। नि+स्यन्द्+णिच्+णिनि (ताच्छील्ये)। उल्लापः-□उद्+लप्+घञ् । बहुमतः-□□मन्+क्त (वर्तमाने) 'मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च'। पाटवम् - पटोर्भावः, पटु+अण्। उपादानः - उप+आ+दा+ल्युट्। हृदयमर्मच्छिदः□-□ हृदयमर्माणि छिन्दन्ति ये ते तथोक्ताः। □□छिद्+क्विप्। उद्घातः□-□उद्+हन्+घञ्।

**सीता:**– अवियुक्त इदानीमयं दीर्घायुरनया सौम्यदर्शनया भवतु।

**राम**:- सखि वासन्ति! पश्य पश्य कान्तानुवृत्तिचातुर्यमपि शिक्षितं वत्सेन।

> **लीलोत्खातमृणालकाण्डकवलच्छेदेषु सम्पादिताः**
> **पुष्यत्पुष्करवासितस्य पयसो गण्डूषसङ्क्रान्तयः।**
> **सेकः शीकरिणा करेण विहितः कामं विरामे पुन-**
> **र्यत्स्नेहादनरालनालनलिनीपत्रातपत्रं धृतम।। 16 ।।**

**अन्वय**:- यत् स्नेहात् लीलोत्खातमृणालकाण्डकवलच्छेदेषु पुष्यत्पुष्करवासितस्य पयसः गण्डूषसङ्क्रान्तयः सम्पादिताः, शीकरिणा करेण कामं सेकः विहितः, पुनः विरामे अनरालनालनलिनीपत्रातपत्रं धृतम्।। 16 ।।

□ **अर्थ:- सीता-** अब यह दीर्घायु (अपनी) इस प्रियदर्शना (भार्या) से अविरहित होवे - कभी वियुक्त न होवे।

**राम:-** सखी वासन्ती! देखो, देखो, बच्चे ने प्रिया के चित्त को रंजित करने की कला भी सीख ली है। क्योंकि-स्नेहवश (पहले तो इसने) क्रीडा का रस लेने के निमित्त उखाड़े गये कमलदण्डों के ग्रासों के समाप्त हो जाने पर खिले हुए कमलों से सुवासित जल को (अपने) मुँह में भर कर (प्रिया के मुख में)छोड़ा (पिलाया)। तदनन्तर जलकणों से पूर्ण सूँड द्वारा उसे पर्याप्त सिक्त किया - नहलाया और फिर अन्त में, एक सीधी नाल वाले कमलपत्र रूप छत्र को (धूप के निवारणार्थ प्रिया के सिर पर) तान दिया।।16।। प्रस्तुत पद्य में स्वभावोक्ति एवं रूपक अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

**व्याख्या:-** अवियुक्त इदानीमयं...भवतु-सीता वियोग-वेदना का स्वयम् अनुभव कर चुकी हैं, अतः वे चाहती हैं कि संसार का कोई प्राणी वियोग का वह कष्ट न भोगे जो उन्हें अथवा राम को भुगतना पड़ रहा है।

**टिप्पणी:-** अवियुक्त:-न वियुक्त:। वि+युज्+क्त। चातुर्यम्-चतुरस्य भावः, चतुर+ष्यञ्। उत्खातः उद्+खन्+क्त (कर्मणि)। सम्पादिताः-सम्+पद्+क्त(कर्मणि)। पुष्यत्-पुष्+शतृ। संक्रान्तिः-सम्+क्रम्+ क्तिन्। सेकः-सिच्+घञ् । विहितः-वि+ध+क्त। शीकरिणा - शीकर+इनि (मतुबर्थक)।

**सीता:**- भगवति तमसे! अयं तावदीदृशो जातः। तौ पुनर्न जानामि कुशलवावेतावता कालेन कीदृशौ संवृत्ताविति।

**तमसा:-** यादृशोऽयं तादृशौ तावपि।

**सीता:-** ईदृश्यहं मन्दभागिनी यस्या न केवलं निःसह आर्यपुत्रविरहः पुत्रविरहोऽपि।तमसा - भवितव्यतेयमीदृशी।

**सीता:-** किं वा मया प्रसूतया येन तादृशमपि मम पुत्रकयोरीषद्विरलकोमल- धवलदशनोज्जवल कपोलमनुबद्धमुग्धकाकली विहसितं निबद्धकाकशिखण्डकम् अमलमुखपुण्डरीकयुगलं न परिचुम्बितमार्यपुत्रेण।

**तमसा:-** अस्तु देवताप्रसादात्।

**सीता:-**भगवति तमसे! एतेनापत्यसंस्मरेणोच्छ्वसितप्रस्नुतस्तनी इदानीं वत्सयोःपितुः सन्निधानेन क्षणमात्रां संसारिण्यस्मि संवृत्ता।

**तमसा:**- किमत्रोच्यते? प्रसवः खलु प्रकर्षपर्यन्तः स्नेहस्य। परं चैतदन्योन्यसंश्लेषणं पित्रोः।

**अन्तःकरणतत्त्वस्य दम्पत्योः स्नेहसंश्रयात्**
**आनन्दग्रन्थिरेकोऽयमपत्यमिति बध्यते।। 17 ।।**

**अन्वय:**- दम्पत्योः स्नेहसंश्रयात् अन्तःकरणतत्त्वस्य 'अपत्यम्' इति अयम् एकः आनन्दग्रन्थिः बध्यते।।17 ।।

**अर्थ:- सीता-** हे भगवति तमसे! यह (गजशावक) ऐसा (बड़ा तथा बलवान) हो गया है, नहीं मालूम कि इतने समय में वे कुश और लव कैसे (कितने बड़े) हुए होंगे?

**तमसा:-** जैसा यह (हो चुका) है, वैसे ही वे भी (हुए होंगे)।

**सीता:**- मैं ऐसी मन्दभागिनी हूँ, जिसको न केवल असह्य पति विरह ही हुआ है, (अपितु) पुत्र विरह भी।

**तमसा:-**यह होनी ही ऐसी (थी)।

**सीता:-** अथवा मुझ प्रसवकारिणी से क्या? जो मेरे उन दोनों अनुकम्पनीय पुत्रों के, ऐसे भी थोड़े-थोड़े विरल, कोमल एवं शुभ्र दाँतों से कान्तिमान् कपोलों से युक्त, सर्वदा सम्बद्ध मनमोहक तोतली बोली एवं मधुर हास वाले, नित्य प्रकाशमान् मुखकमलद्वय का आर्यपुत्र ने परिचुम्बन (ही)नहीं किया।

**तमसा:-** देवताओं के अनुग्रह से (ऐसा ही) हो।

**सीता:**- हे भगवति तमसे! सन्तानों के इस स्मरण से उच्छवसित एवं दुग्धस्राव करने वाले स्तनों वाली मैं, बच्चों के पिता की समीप उपस्थिति से इस समय क्षण भर के लिए संसारिणी (पति-पुत्रवती गृहिणी) हो गयी हूँ।

**तमसा:-** इसमें क्या कहना है। निसंशय ही सन्तान वात्सल्य की पराकाष्ठा है और वह माता-पिता दोनों के परस्पर बन्धन का हेतु (भी) है। दम्पती के स्नेह का आश्रय होने के कारण उनके अन्तःकरणरूप तत्त्व की 'अपत्य' इस प्रकार की अनुपम गाँठ (विधाता के द्वारा) बाँधी जाती है।।17।। प्रस्तुत पद्य में परिणाम अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्या:- न परिचुम्बितमार्यपुत्रेण-** पति को पुत्र का मुख चूमते देखकर पत्नी को जो आनन्द का अनुभव होता है, उससे वह अपने को धन्य समझती है तथा प्रसवकाल के सारे कष्टों को भूलकर पुत्रोत्पादन को सफल मानती है। सीताजी को यह अनुभव करने का शुभ अवसर नहीं मिला, अतएव वे पुत्रोत्पादन को निष्फल मान रही हैं।

**प्रकर्षपर्यन्त**ः-अपत्य के प्रति जितना बड़ा स्नेह होता है, उतना अन्य किसी के प्रति नहीं होता है। अतः अपत्य को स्नेह का प्रकर्षपर्यन्त (पराकाष्ठा) कहा गया है।

परं च-'परम' का अर्थ 'उत्कृष्ट' भी किया जा सकता है। तब यह शब्द 'संश्लेषण' का विशेषण होगा। संश्लेषण का अर्थ है - बाँधने का साधन।

**स्नेहसंश्रयात्-** पति और पत्नी का वात्सल्य अपत्य में केन्द्रित रहता है, अतः अपत्य उनके स्नेह का आश्रय होता है। उनका वह स्नेह सर्वथा वासना से अकलुषित रहता है।

**आनन्दग्रन्थि**ः-पति-पत्नी का हृदय अपत्य से बँध हुआ नित्य अलौकिक आनन्द का अनुभव करता है, अतः अपत्य को आनन्दमयी गाँठ कहा गया। अपत्य पति-पत्नी के हृदय को बाँधें रहने वाली वह अनुपम गाँठ (बन्धन) है, जिससे अन्य बन्धनों की तरह दुःख का अनुभव नहीं होता है, बल्कि नित्य नूतन आनन्द मिलता है। भवभूति ने अपत्य की भारतीय संस्कृति के अनुरूप वह परिभाषा प्रस्तुत की है, जिससे कवि की अपत्य-विषयक उच्च एवं पवित्र भावना अभिव्यक्त हो रही है। 'न पतति वंशो

येनेत्यपत्यम्’ इस व्युत्पत्ति के अनुसार ‘अपत्य’ वैसी उच्च एवं पवित्र भावना का विषय होने का अधिकार भी रखता है।

**टिप्पणी:-** निःसहः-निस्+सह्+खल्। भवितव्यता - भवितव्य+तल्+टाप्। उज्जवलः□-□उद्+ज्वल् +अच्। अनुबन्ध □- □अनु+बन्ध्+क्त । मुग्धः□- □□□□मुह्+क्त। विहसितम् -वि+हस्+क्त(भावे)। उच्छ्वसितः - उद्+श्वस्+क्त। प्रस्नुतः - प्र+स्नु+क्त (कर्तरि)। प्रसवः- प्रसूयते इति प्रसवः (अपत्यम) प्र+सू+क्त (कर्मणि)। संश्लेषणम् - सम्+श्लिष्+ल्युट् (करणे)। पित्रौ: - माता च पिता च इति पितरौ, तयोः (एकशेषद्वन्द्व समास)। बध्यते - □□बन्ध्+लट् (कर्मणि)।

**वासन्ती:-** इतोऽपि देवः पश्यतु-

> **अनुदिवसमवर्धयत् प्रिया ते यमचिरनिर्गतमुग्धलोलबर्हम्।**
> **मणिमुकुट इवोच्छिखः कदम्बे नदति स एष वधूसखः शिखण्डी।। 18 ।।**

**सीता:**– (सकौतुकस्नेहास्रम्) एष स एष सः।

**रामः-** मोदस्व वत्स! मोदस्व

**अन्वयः**- अचिरनिर्गतमुग्धलोलबर्हं यं ते प्रिया अनुदिवसम् अवर्धयत, स एष शिखण्डी वधू सखः (सन्) कदम्बे उच्छिखः मणिमुकुट इव नदनि।।18 ।।

**अर्थ:- वासन्ती-** इधर भी महाराज देखें। नयी निकली हुई सुन्दर एवं चंचल पूँछ वाले जिस (मयूर) को तुम्हारी प्रिया ने प्रतिदिन पाला पोसा था, वही यह उद्गत चूडा वाला मयूर उद्गत किरण युक्त मणिमुकुट के समान (लगता हुआ) कदम्ब वृक्ष पर अपनी वधू (मयूरी) के सहित बोल रहा है।।18।। इस पद्य में उपमा अलंकार एवं पुष्पिताग्रा छन्द है।

**टिप्पणी:-** शिखण्डी - शिखण्डः (शिखा) अस्त्यस्येति शिखण्डी: शिखण्ड+इनि। भ्रमिः –(स्त्री)□ भ्रम् + इ। आवृत्तिः - आ+भ्रम+इ। आवृत्तिः - आ+वृत्+क्तिन् (भावे)।

**सीता:-** एवं भवतु।

**रामः-** **भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृतिचक्षुः**
**प्रचलितचटुलभ्रूताण्डवैर्मण्डयन्त्या।**
**करकिसलयतालैर्मुग्धया नर्त्यमानं**
**सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि।। 19 ।।**

**अन्वयः-** भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षुः (कर्म) प्रचलितचटुलभ्रूलताताण्डवैः (करणैः) मण्डयन्त्या मुग्धया करकिसलयतालैः नर्त्यमानं त्वां सुतमिव वत्सलेन मनसा स्मरामि।। 19 ।।

**अर्थ:- सीता** – ऐसा ही हो ।

**रामः**– (तेरे द्वारा किये गये) चक्राकार भ्रमणों में ( उसका अनुवर्तन करने के कारण ) पलको के भीतर किये गये मण्डलाकार आवर्तन वाले नेत्रों को चंचल एवं सुन्दर भौहों के नर्तन से अलेकृत करती हुई मुग्धा (भोली) सीता के द्वारा करपल्लव के तालों से नचायें जाते हुए पुत्र की तरह तुमको स्नेहपूर्ण मन से स्मरण करता हूँ ।। 19 ।।

**व्याख्याः- कृतपुटान्तमण्डलावृत्तिचक्षः**- मयूरों के नाचने की गति चक्राकार या मण्डलाकार होती है। सीता जी के नेत्र मयूर की चक्राकार गति पर टिके रहते थे। अतः उसके साथ ही सीता के नेत्र भी मण्डलाकार गति में घूमते जाते थे।

**चटुल-** इस शब्द का अर्थ चपल या चंचल भी होता है, किन्तु यहाँ 'सुन्दर' अर्थ ही ग्राह्य है, क्योंकि 'प्रचलित' शब्द से 'चंचल' अर्थ सूचित हो रहा है।

**ताल-** गीत, नृत्त और वाद्य में नियतमात्राओं पर ताली देना 'ताल' कहलाता है। 'तालः कालक्रियामानम्' इत्यमरः। 'ताल करतलेऽघ्गुष्ठमध्यमाभ्यां च सम्मिते। गीतकालक्रियामाने करास्फले द्रुमान्तरे।।' इति विश्व।

**टिप्पणीः-** मण्डयन्त्या - चुरादि □ मण्ड+णिच् (स्वार्थे) +शतृ +ङीप्, तृएव। नर्त्यमानम् - □ नृत् + णिच् + शानच् (कर्मणि), द्विएव

□ हन्त! तिर्यश्चोऽपि परिचयमनुरुन्ध्ते।

**कतिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः**
**प्रियतमया परिवर्धितोऽयमासीत्।**

**सीताः**– (निरूप्य सास्रम्)सुष्ठु प्रत्यभिज्ञातमार्यपुत्रेण।

**रामः- स्मरति गिरिमयूर इव एष देव्याः**
**स्वजन इवात्र यतः प्रमोदमेति।। 20 ।।**

**अन्वयः**– अयं कदम्ब: प्रियतमा परिवर्धित: (सन्) कतिपयकुसुमोद्गम आसीत् ,एष: गिरिमयूर: देव्या स्मरति ,यत: अत्र स्वजने इव प्रमोदम् एति ।

**अर्थः- राम-** खेद है! पशु-पक्षी भी परिचय का लिहाज रखते हैं। यह थोड़े-से विकसित पुष्पों से युक्त कदम्ब प्रियतमा द्वारा (सीता के द्वारा) बड़ा किया गया था।

**सीताः**-(भली-भाँति देखकर, अश्रुसहित) आर्यपुत्र ने खूब पहिचाना।

**रामः**-यह पर्वतप्रिय मयूर देवी (सीता) का स्मरण करता है, क्योंकि (कदम्ब का भी परिवर्धन सीता के द्वारा ही होने से) इस (कदम्ब) में अपने बन्धु में जैसा हर्ष प्राप्त करता है।।20।। इसमें उपमा अलंकार और पुष्पिताग्रा छन्द है।

**व्याख्या:- हन्त! तिर्यश्चयोऽपि-**राम के कहने का आशय है कि परिचय का लिहाज करने वाले पशु-पक्षी भी अच्छे हैं किन्तु हम नहीं। जिसने परिचय का तनिक भी विचार न कर सीता को घर से निकाल दिया।

**स्मरति गिरिमयूर:**-मोर और कदम्बवृक्ष दोनों का परिवर्धन सीताजी ने किया था, अतः दोनों एक-दूसरे के भाई की तरह थे। यही कारण था कि मोर उस वृक्ष में स्वजन की-सी प्रीति रखता था और उसे देखते ही उस (मयूर) को सीताजी का स्मरण हो आता था।

**टिप्पणी:-** प्रमोदः - प्र+मुद् +घञ् । परिवर्धित: - परि+वृध्+णिच्+क्त। उद्गमः - उद् + गम् +अप् (ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' 3/3/58)।

**वासन्ती:-** अत्र तावदासनपरिग्रहं करोतु देवः।

(राम उपविशति)

**वासन्ती - एतत्तदेव कदलीवनमध्यवर्ति**
**कान्तासखस्य शयनीयशिलातलं ते।**
**अत्र स्थिता तृणमदाद् बहुशो यदेभ्यः**
**सीता ततो हरिणकैर्न विमुच्यते स्म।। 21 ।।**

**अन्वय:-** कान्तासखस्य ते एतत् तदेव कदलीवनमध्यवर्ति शयनीयशिलातलम्। अत्र: स्थिता सीता यद् एभ्यः बहुशः तृणम् अदात्, ततः (इदं) हरिणकैः न विमुच्यते स्म।। 21 ।।

**अर्थ:- वासन्ती-**यहीं महाराज आसन ग्रहण करें। (राम बैठते हैं)

**वासन्ती:-** कान्ता (सीता) के साथ रहने वाले आपका यह वही कदली वन के बीच में विद्यमान शयनार्थ शिलातल है। क्योंकि इसी पर बैठी हुई सीता इन (मृगों) को प्रायः घास देती रहती थी, अतएव (यह) बेचारे मृगों से (आज भी) नहीं छोड़ा जाता है।।21।। प्रस्तुत पद्य में वसन्ततिलका छन्द एवं प्रसाद गुण तथा लाटीरीति है।

**व्याख्या:- एतत्तदेव कदलीवनमध्यवर्ति-** नीरन्ध्रबाल0 (पाठान्तर) नीरन्ध्ररा: (निर्गतं रन्ध्रं याभ्यस्ताः) छिद्रस्याप्यकाशाभावादत्यन्तनिबिडा इति भावः) ताश्च ता बालकदल्यः नवरम्भाः, तासां वनस्य मध्ये वर्तते तच्छीलम्।

**न विमुच्यते स्म-** इसे भूतकाल-बोधक मानने पर अर्थ होगा - सीता बेचारे हरिणों के द्वारा नहीं छोड़ी जाती थीं - उनसे घिरी रहती थीं।

**टिप्पणी:-** बहुशः-बहु+शस्। विमुच्यते - वि + मुच् + लट् (कर्मणि)।

**रामः**–इदं तावदशक्यमेव द्रष्टुम्। (इत्यन्यतो रुदन्नुपविशति)

**सीता:-** सखि वासन्ति! किं त्वया कृतमार्यपुत्रस्य मम चैतद् दर्शयन्त्या। हा धिक् ! हा धिक्  ! स एवार्यपुत्रः, सैव प्रियसखी वासन्ती, त एव विविधविस्रम्भसाक्षिणो गोदावरीकाननोद्देशाः, त एव जातनिर्विशेषा मृगपक्षिपादपाः, सैव चाहम्। म पुनर्मन्दभाग्याया दृश्यमानमपि सर्वमवैतन्नास्तीति तदीदृशो जीवलोकस्य परिवर्तः।

**वासन्ती:-** सखि सीते! कथं न पश्यसि रामभद्रस्यावस्थाम्?

**नवकुवलयस्निग्धैरंगैर्ददन्नयनोत्सवं**
**सततमपि नः स्वेच्छादृश्यो नवो नव एव यः।**
**विकलकरणः पाण्डुच्छायः शुचा परिदुर्बलः**
**कथमपि स उन्नेव्यस्तथापि दृशोः प्रियः॥ 22 ॥**

**अन्वयः** – नवबुफवलयस्निग्धै: अंगैः नयनोत्सवं ददत्, सततमपि नः स्वेच्छादृश्यः अपि यः नवो नव एव (आसीत), शुचा विकलकरणः पाण्डुच्छायः परिदुर्बलः, तथापि दृशोः प्रियः, सः कथमपि उन्नेतव्यः॥ 22 ॥

**अर्थ:- राम-**यह तो देखा ही नहीं जा सकता। (ऐसा कहकर रोते हुए दूसरी ओर बैठ जाते हैं)।

**सीता:-** सखि वासन्ति! आर्यपुत्र को और मुझको यह (शयनशिलातल) दिखलाती हुई तूने (यह) क्या कर दिया (अर्थात् बहुत बुरा किया)। हा धिक्  हा धिक् ! वही आर्यपुत्र हैं, वही पंच वटी वन है, वही प्रियसखी वासन्ती है, वे ही (हम दोनों के)विविध विश्वस्त व्यापारों के (अधिक रण होने के कारण) प्रत्यक्षदर्शी गोदावरी नदी के वनप्रदेश हैं, वे ही पुत्र से अभिन्न मृग, पक्षी और वृक्ष हैं, वही मैं हूँ, (किन्तु इस समय) यह सब कुछ दिखलायी देते हुए भी मुझ अभागिन के लिए मानो है ही नहीं (नहीं के बराबर है), (मेरे सम्बन्ध में) संसार का ऐसा परिवर्तन हो गया।

**वासन्ती:-** हे सखि सीते! रामभद्र की अवस्था (दशा) कैसे नहीं देखती हो?

(पहले) जो नये नीलकमल के समान चिकने-कोमल अंगों से नेत्रों को आनन्द देते हुए, निरन्तर हमारे लिए यथेच्छ देखने योग्य (अर्थात् सुलभ दर्शन) होकर भी नये-नये ही (प्रतीत होते थे) (इस समय वे ही) शोक से विकलेन्द्रिय, धूसर कान्ति वाले तथा अत्यन्त दुर्बल होने पर भी नेत्रों के लिए प्रिय, किसी-

किसी तरह 'वह' (हैं) ऐसा पहचान में आने योग्य है।।22।। इस पद्य में उपमा अलंकार तथा हरिणी छन्द है।

**व्याख्या:– जीवलोकस्य परिवर्तः**- सीताजी के लिए तत्तत्पदार्थ जो सुखकारक प्रतीत होते थे, वे ही अब दुःखोत्पादक बन गये हैं। वे स्वरूपतः सामने विद्यमान हैं, तथापि दुःखोत्पादक होने के कारण सीता के लिए नहीं के बराबर हैं। उनमें यही सब से बड़ा परिवर्तन हो गया है।

**सखि सीते इत्यादि-** वासन्ती की यह उक्ति स्नेहाधिक्य के कारण सीता को लक्ष्य करके कही गयी है, उन्हें देखकर नहीं क्योंकि गंगा के प्रभाव से सीता वासन्ती आदि के लिए उस समय अदृश्य थीं।

नवो नव एव-सौन्दर्य का महत्त्व इसी में है कि उसे जितनी बार भी देखा जाय, उसकी चिर नवीनता की अनुभूति होती रहे, ताकि उसे देखकर मन कभी न भरे, अन्यथा वह सुन्दर कैसे रह जायेगा?

□**टिप्पणी:-** द्रष्टुम्-दृश्+तुमुन्। अशक्यम्-नञ्+शक्+यत्। दर्शयन्त्या □दृश्+णिच्+शतृ+ङीप् (तृएव)। जातः-जन्+क्त(कर्तरि)। परिवर्तः-परि+वृत्+घञ् (भावे)। ददत् - □दा+शतृ। उन्नतव्यः-उन्+नी+तव्य।

**सीता:-** प्रेक्षे, सखि! प्रेक्षे।

**तमसा:-** पश्यन्ती प्रियं भूयाः।

**सीता:-** हा दैव! एष मया विनाऽहमप्येतेन विनेति स्वप्नेऽपि केन सम्भावितमासीत्। तन्मुहूर्तमात्रं जन्मान्तरादिव लब्धदर्शनं बाष्पसलिलान्तरेषु पश्यामि तावद् वत्सलमार्यपुत्रम्।

**तमसा:**– (परिष्वज्य सास्रम्)

> **विलुलितमतिपूरैर्बाष्पमानन्दशोक-**
> **प्रभवमवसृजन्ती तृष्णयोत्तानदीर्घा।**
> **स्नपयति हृदयेशं स्नेहनिष्यन्दिनी ते**
> **धवलबहलमुग्धा दुग्धकुल्येव दृष्टिः।।23 ।।**

**अन्वयः**-अतिपूरैः विलुलितम् आनन्दशोकप्रभवं बाष्पम् अवसृजन्ती, तृष्णया उत्तानदीर्घा, धवलबहलमुग्धा दुग्धकुल्येव ते दृष्टिः स्नेहनिष्यन्दिनी (सती) हृदयेशं स्नपयति।। 23 ।।

□**अर्थ:- सीता-**हे सखि! देख रही हूँ, देख रही हूँ।

**तमसा:-**प्रिय को (यों ही) देखती रहो।

**सीता:-** हाय विधाता! ये (राम) मेरे बिना और मैं भी इनके बिना (रह सकूँगी) ऐसा स्वप्न में भी किससे संभावना की गयी थी? तो मानो दूसरा जन्म पा करके जिनका दर्शन मिला है, उन स्नेही आर्यपुत्र को

इस समय आँसुओं के (गिरने तथा पुनः निकलने के समय के) बीच के समयों में थोड़ी देर देख लूँ। (ऐसा कहकर देखती हुई स्थित रहती है)

**तमसा**-(आलिंगन करके, आँसू भरकर)

बड़े-बड़े प्रवाहों से विकीर्ण, आनन्द एवं शोक से उत्पन्न आँसू को डालती हुई, दर्शनोत्कण्ठा से ऊपर की ओर विस्तारित और (दूर तक डाली जाने के कारण) लम्बी अतिशुभ्र एवं मनोज्ञ (अतएव)दूध् की छोटी कृत्रिम नदी-सी तेरी दृष्टि स्नेह की वर्षा करती हुई हृदयेश्वर(राम) को नहला रही है।।23।। यहाँ पर शंकर अलंकार तथा मालिनी छन्द है। माधुर्यगुण तथा वैदर्भी रीति है

**व्याख्या:- जन्मान्तरादिव-जन्मान्तरात्**=जन्मान्तरं प्राप्य 'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' वार्तिक से ल्यबन्त 'प्राप्य' के लोप होने पर कर्म (जन्मान्तर) से पंचमी हो गयी है(जन्मान्तरात्)। अर्थ है-दूसरा जन्म प्राप्त करके । सीता ने अपने इस जन्म में पुनः राम के दर्शन की आशा छोड़ ही दी थी। अतएव राम का दर्शन होने पर उन्होंने यही समझा कि मानो उनका दूसरा जन्म हो गया हो।

**बाष्पसलिलान्तरेषु**-'अन्तरम् अवकाशावधिपरिधान0' अमरकोशकार के इस वचन के अनुसार यहाँ अन्तर शब्द का 'अवकाश' (अर्थात् अन्तराल) अर्थ है। आँखों में आँसू भर जाने के कारण सीता जी को राम के दर्शन में बड़ी कठिनाई पड़ गयी। अतः आँसू गिरने के बाद पुनः जब तक वे आँखों में न आ जायें, उतना ही थोड़ा सा समय उन्हें राम के दर्शन के लिए मिल सकता था, उसी को ही उन्होंने अपने लिए बहुत समझा।

**दुग्धकुल्येव**-प्रोषितभर्तृका होने के कारण सीताजी नेत्र में काजल नहीं लगाती थीं, अतएव उनकी दृष्टि अत्यन्त शुभ्र थी। इसी से दृष्टि को दूध् की छोटी कृत्रिम नदी-सा कहा गया है। प्रोषितभर्तृका के लिए शरीर-संस्कार आदि वर्जित है - 'क्रीडां शरीरसंस्कारं, समाजोत्सवदर्शनम्। हास्यं परगृहे यानं, त्यजेत् प्रोषितभर्तृका'। (याज्ञवल्क्यस्मृति 1/84)

□ **टिप्पणी:-** पश्यन्ती- □ दृश्+शतृ+ङीप्, नुमागम। सम्भावितम् - सम्+भू+णिच्+क्त। लब्ध्ः- लभ्+ क्त (कर्मणि)। परिष्वज्य- परि+स्वञ्ज्+ल्यप्। प्रभवः- प्र+भू+अप्। अवसृजन्ती- अव+सृज्+शतृ+ङीप्, नुमागम। स्नेहनिष्यन्दिनी-स्नेहं निष्यन्दयति तच्छीला स्नेह+नि+स्यन्द्+णिच्+ णिनि+ङीप्।

**वासन्ती -ददतु तरवः पुष्पैरर्घ्यं फलैश्च मधुश्च्युतः**
**स्फुटितकमलामोदप्रायाः प्रवान्तु वनानिलाः।**
**कलमविरलं रज्यत्कण्ठाः क्वणन्तु शकुन्तयः**
**पुनरिदमयं देवो रामः स्वयं वनमागतः।। 24 ।।**

**अन्वयः-** मधुश्च्युतः तरवः पुष्पैः फलैश्च अर्घ्यं ददतु, स्फुटितकमलामोदप्रायाः वनानिलाः प्रवान्तुः रज्यत्कण्ठाः शकुन्तयः अविरलं कलं क्वणन्तु। अयं देवो रामः स्वयम् इदं वनं पुनः आगतः।।24 ।।

**अर्थ**:–वासन्ती- मकरन्द बरसाने वाले वृक्ष पुष्पों और फलों से अर्घ्य दें, खिले हुए कमलों के सौरभ के आधिक्य से पूर्ण वनवायु बहें, राग युक्त कण्ठ वाले पक्षी सतत मधुर शब्द करें। यह महाराज राम स्वयं इस वन में पुनः पधारे हैं।।24।। इसमें काव्यलिंग अलंकार तथा हरिणी वृत्त है।
□**व्याख्या:-** क्वणन्तु-'गीतावाद्यभेदेन शब्दं कुर्वन्तु, अत एव कूजन्त्विति नोक्तम्' (वीरराघव)।

**टिप्पणी:-** मधुश्च्युतः- मधु+श्चयुत्+क्विप्। अर्घ्य- अर्घाय हितम्, अर्थ्+यत्। रज्यत्कण्ठाः- रज्यन्तः ('रंज रागे' दिवादि से शतृ) कण्ठा येषां ते।

## 1.4 सारांश:-

इस इकाई में आपने तृतीय अंक के पूर्वार्द्ध भाग का अध्ययन किया और यह जाना कि रामचन्द्रजी के विचारों में सीताजी छाया के समान निरन्तर घूम रहीं हैं। सीताजी तो राम को देख सकती हैं किन्तु राम सीता को नहीं देख सकते हैं।

इस इकाई के अध्ययन से आप यह भी जान पाये कि उत्तररामचरितम् के तृतीय अंक को महकवि भवभूति ने 'छाया' अंक नाम से नामांकित किया है। इसमें 'छाया' सीता की कल्पना कवि की मौलिक कल्पना है। जो नाटकीय दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। राम का पंचवटी में वासन्ती से मिलन भी उनकी मौलिक उद्धावना है।तृतीय अंक के अन्तर्गत तमसा और मुरला नामक दो नदियों के वार्तालाप के माध्यम से ज्ञात होता है कि परित्यक्त होने के पश्चात् सीताजी प्राण विसर्जन हेतु गंगा जी में कूदती हैं और वहीं लव-कुश का जन्म होता है। गंगा जी उनके पुत्रों की रक्षा कर वाल्मीकि को सर्मिर्पत करती हैं। आज उनकी बारहवीं वर्षगांठ है इसलिए भगवती भागीरथी ने सीताजी को आज्ञा दी है कि वे अपने कुल उपास्य देव भगवान सूर्य की उपासना करें। उन्हें भागीरथी का वरदान है कि उन्हें पृथ्वी पर देवता भी नहीं देख सकते, पुरुषों की तो बात ही क्या है? इसके अनन्तभगवान रामचन्द्र जी का प्रवेश होता है। वह पंचवटी प्रवेश में वनदेवी वासन्ती के साथ पूर्वानुभूत दृश्यों को देखकर सीता की स्मृति से अत्यन्त व्याकुल होते हैं। सीता अदृश्य रूप में उन्हें स्पर्श करके प्रबुद्ध करती हैं। इस प्रकार छाया नामक तृतीय अंक में सीता के हृदय की शुद्धि हो जाती है।

## 1.5 शब्दावली:-

पुटपाक - औषधि विशेष

| | | |
|---|---|---|
| रसातल | - | पाताल |
| करिकलभ | - | हाथी का बच्चा |
| दृष्टिया | - | भाग्य से |
| जगतपति | - | संसार का स्वामी |
| हरिचन्दन | - | देववृक्ष |

## 1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1.उत्तररामचरितम् (भवभूति), एम.आर.काले (वीरराघवकृत टीका) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1962

2.उत्तररामचरितम् (भवभूति), स्वरूप आनंद एवं जनार्दन शास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1977

3.उत्तररामचरितम् (भवभूति), ब्रह्मानन्द शुक्ल, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1987

## 1.8 सहायक व उपयोगी पुस्तकें:-

1.भवभूति और उनकी नाट्यकला, अयोध्या प्रसाद सिंह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1988

2.भवभूति ग्रन्थावली, राम प्रताप त्रिपाठी शास्त्री, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973

3.भवभूति के नाटक, ब्रज वल्लभ शर्मा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1973

# इकाई 2 - उत्तररामचरितम् तृतीय अंक का उत्तरार्द्ध

इकाई की रूपरेखा:

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 25 से 48 तक (मूलपाठ अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी)

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 सहायक ग्रन्थ
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

## 2.1 प्रस्तावना:-

उत्तररामचरितम् के तृतीय खण्ड की यह द्वितीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने तृतीय अंक के पूर्वार्द्ध का अध्ययन किया। जिसमें आपने जाना कि भगवती भागीरथी के आर्शीवाद के कारण सीता जी को पृथ्वी पर कोई देख नहीं सकता है और इधर श्रीराम का पंचवटी में प्रवेश होता है।

इस इकाई में उत्तररामचरितम् तृतीय अंक के उत्तरार्द्ध की कथावस्तु को रखा गया है। राम की करूण दशा को देखकर तथा अपनी स्वर्णमयी मूर्ति की चर्चा राम के मुख से सुनकर सीताजी द्रवित होकर राम की ओर अभिमुख होती है। उनका राम के प्रति बारह वर्षो तक निरन्तर बना हुआ निर्वासन –जनित क्षोभ नष्ट हो जाता है और हृदय पूर्ववत् निर्मल ,निष्कलुष एवं आत्मीयता पूर्ण प्रेम से ओत प्रोत हो जाता है। इस कथा के अनन्तर कवि ने करुण रस के स्वरूप तथा भेद की चर्चा करते हुए तृतीय अंक का पर्यवसान किया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता पायेगें कि करुण रस का स्वरूप क्या है और राम और सीता के प्रेम की उदात्तता का भी वर्णन कर पायेगें।

## 2.2 उद्देश्य:-

**इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता पायेगें कि** –

- सीता किस प्रकार अदृश्य रूप से राम का दर्शन करती हैं।
- करूण रस का स्वरूप क्या है।
- किसकी स्वर्णमयी मूर्ति की चर्चा की गई है।
- श्लोकों मे प्रयुक्त छन्द एवं अलंकार को समझा पायेगें।

## 2.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 25 से 48 तक (अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी )

**राम**:- एहि सखि वासन्ति! नन्वितः स्थीयताम्।

**वासन्ती**:– (उपविश्य, सास्रम्) महाराज! अपि कुशलं कुमारलक्ष्मणस्य।

**राम**:– (अश्रुतिमभिनीय) -

**करकमलवितीर्णैरम्बुनीवारशष्पै-**
**स्तरुशकुनिकुरंगान्मैथिली यानपुष्यत्।**
**भवति मम विकारस्तेषु दृष्टेषु कोऽपि**

**द्रव इव हृदयस्ये प्रस्तरोद्भेदयोग्यः।।25 ।।**

**अन्वयः-** मैथिली यान् तरुशकुनिकुरंगान् करकमलवितीर्णैः अम्बुनीवारशष्पैः अपुष्यत्, तेषु दृष्टेषु, प्रस्तरोद्भेदयोग्यः हृदयस्य द्रव इव मम कोऽपि विकारः भवति।।25।।

**अर्थः- राम**-हे सखि वासन्ति! आओ, इधर बैठो।

**वासन्तीः- (**बैठकर, अश्रुसहित) महाराज! कुमार लक्ष्मण का कुशल तो है?

**रामः- (**न सुनने का अभिनय कर) सीता ने जिन वृक्षों, पक्षियों तथा मृगों को (अपने) करकमलों से दिये गये जल, नीवार तथा कोमल घासों से पाला-पोसा था, उनके देखे जाने पर पत्थर को विदीर्ण करने में समर्थ हृदय के द्रव-सा मेरे कोई (अनिर्वचनीय) विकार उत्पन्न हो रहा है।।25।। यहाँ यथासंख्य अलंकार एवं मालिनी छन्द है।

**व्याख्याः- द्रव इव हृदयस्य प्रस्तरोद्भेदयोग्यः**-सीता द्वारा पोषित तरु आदि को देखकर राम के हृदय में जो अनिर्वचनीय विकार का उदय हुआ, उसने उनके हृदय को द्रवीभूत कर दिया। राम ने उस विकार को पत्थर को भी विदीर्ण करने में समर्थ कहकर अपने हृदय की कठोरता ध्वनित की है।

**मन्ये विदितसीतावृत्तान्ता**-वासन्ती ने रामचन्द्र को महाराज शब्द से सम्बोधित किया,
जिससे राम के प्रति उसका उदासीन-भाव प्रकट हो रहा था। उसने केवल लक्ष्मण के विषय में कुशल-प्रश्न पूछा, सीता के विषय में नहीं और लक्ष्मण का नाम लेते ही उसके नेत्रों में आँसू आ गये, जिससे प्रश्नाक्षर भी अस्पष्ट थे। इन बातों से राम ने समझ लिया कि वासन्ती को सीता-निर्वासन की पूरी जानकारी है।

**टिप्पणीः-** एहि - आ+इ (गतौ)+लोट् (सिप्)। स्थीयताम् - □ स्था+लोट् (भावे)। उपविश्य-उप+विश्+ल्यप्।

**वासन्तीः**- महाराज! ननु पृच्छामि, अपि कुशलं कुमारलक्ष्मणस्येति।

**रामः**– (आत्मगतम्) अये महाराजेति निष्प्रणयमामन्त्रणपदं सौमित्रि मात्रे च बाष्पस्खलिताक्षरः कुशलप्रश्नः। तथा मन्ये विदितसीतावृत्तान्तेयमिति। (प्रकाशम्) आं कुशलं कुमारस्य।

**वासन्तीः**– (रुदती) अयि देव! किं परं दारुणः खल्वसि?

**सीता**:- सखि वासन्ति! किं त्वमेवंवादिनी भवसि? प्रियार्हः खलु सर्वस्यार्यपुत्रो विशेषतो मम प्रियसख्याः।

**वासन्तीः- त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं**
**त्वं कौमुदी नयनयोरमृतं त्वमअंगे।**
**इत्यादिभिः प्रियशतैरनुरुध्य मुग्धां**
**तामेव शान्तमथवा किमिहोत्तरेण।।26।**

**अन्वयः-** त्वं जीवितं, त्वं मे द्वितीयं हृदयमसि, त्वं नयनयोः कौमुदी, त्वम् अंगे अमृतम् इत्यादिभिः प्रियशतैः मुग्धम् अनुरुध्य तामेव....अथवा शान्तम्, इह उत्तरेण किम्?।।26।

□ **अर्थ** - **वासन्ती-**महाराज! अरे, मैं कुमार लक्ष्मण का कुशल पूछ रही हूँ।

**रामः- (**आत्मगत) अरे! 'महाराज! यह स्नेहशून्य सम्बोधन पद है। केवल लक्ष्मण के विषय में आँसू से अस्पष्ट अक्षर वाला कुशल प्रश्न है। इससे मैं समझता हूँ कि यह सीता के वृत्तान्त को जान चुकी है। (प्रकाश) हाँ, कुमार (लक्ष्मण) कुशल है।

**वासन्तीः**- (रोती हुई) हे देव! हे महाराज! क्यों आप अत्यन्त कठोर हैं?

**सीताः**- हे सखी वासन्ती! तुम क्यों इस प्रकार बोलने वाली हो रही हो? आर्यपुत्र सबके, विशेष कर मेरी प्रियसखी केप्रियवचनों केयोग्य हैं।

**वासन्तीः-** 'तुम (मेरा) जीवन हो, तुम मेरा दूसरा हृदय हो, तुम मेरे नेत्रों के लिए कौमुदी हो, तुम मेरे अंगों में अमृत हो' इत्यादि सैकड़ों चापलूसी-भरे वाक्यों से भोली-भाली (सीता) को फुसला कर आपने उसी को...अथवा बस रहने दो, अगले वाक्य से क्या लाभ?।।26।। इस पद्य में शंकर अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है। (ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाती है)।

**व्याख्याः-** शान्तम्-बस, और कुछ नहीं करना चाहिए। वासन्ती आगे कहना चाहती थी कि 'तुमने घर से निकाल दिया' परन्तु सीता-निर्वासन की बात उसके लिए हृदयविदारक होने केकारण इतनी असह्य हो गयी कि मुख से निकल न सकी, अतः वाक्य पूरा किये बिना ही वह बीच में ही रुक गयी।

**टिप्पणीः-** एवंवादिनी - एवं वदितुं शीलमस्याः एवम्+वद्+णिनि (ताच्छील्ये) +ङीप्। (इति मुह्यति)**तमसा** - स्थाने वाक्यनिवृत्तिर्मोहश्च।

**राम**ः- सखि! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि।

**वासन्ती**:– (समाश्वस्य) तत्किमिदकमकार्यमनुष्ठितं देवेन?

**सीताः**- सखि वासन्ति! विरम विरम।

**राम**ः- लोको न मृष्यति।

**वासन्ती**ः- कस्य हेतोः?

**राम**ः- स एव जानाति किमपि।

**तमसा**ः- चिरादुपालम्भः।

**वासन्तीः-अयि कठोर यशः किल ते प्रियं किमयशो ननु घोरमतः परम्।**
**किमभवद्विपिने हरिणीदृशः कथय नाथ कथं बत मन्यसे।।27 ।।**

**अन्वयः-** अयि कठोर! ते यशः प्रियं किल, ननु अतः परं घोरम् अयशः किम् (स्यात्)? विपिने हरिणीदृशः किम् अभवत्? हे नाथ! कथय कथं बत मन्यसे?।।27 ।।

**अर्थः-तमसा**-वाणी का निरोध् और मूर्च्छा उचित ही है।

**रामः-** सखि! समाश्वस्त हो, समाश्वस्त हो।

**वासन्तीः**- (समाश्वस्त होकर) तो महाराज ने यह अनुचित कार्य कैसे किया?

**सीताः**- सखि वासन्ति! रुको, रुको।

**रामः**- लोग सहन नहीं करते।

**वासन्तीः**- किस कारण से?

**रामः-** वह (लोक) ही कुछ (कारण) जानता है।

**तमसाः-** बहुत समय बाद उपालम्भ (दिया) है।

**वासन्तीः**-हे कठोर! तुम्हें यश प्यारा है, ऐसी प्रसिद्धि हैंकिन्तु इससे बढ़कर घोर अपयश क्या (हो सकता) है ? जंगल में मृगाक्षी का क्या हुआ? हे नाथ! कहिए, खेद है, कैसा समझते हैं?।।27।। यहाँ पर विषम अलंकार तथा द्रुतविलम्बित छन्द है।

**व्याख्याः-** चिरादुपालम्भः-तमसा केकहने का आशय है कि श्रीरामचन्द्र के मुख से लोक के प्रति उपालम्भ पूर्ण वाक्य तो निकला किन्तु बहुत देर के बाद। अब इसकी क्या उपयोगिता है? लोक सीता को अकारण ही बदनाम कर रहा है - यह बात उन्हें पहिले ही समझनी चाहिए थी।

नाथ-यह सम्बोधन भी व्यंग्यपूर्ण है। वासन्ती का अभिप्राय है कि आप तो सीता के नाथ हैं। उसे निर्वासित कर देने पर भी उसके कुशल-क्षेम का उत्तरदायित्व आप पर आता है, किन्तु आज तक आप ने उसकी खोज-खबर भी नहीं ली, फिर आप कैसे नाथ हैं?

**टिप्पणीः-** निवृत्तिः - नि + वित् +क्तिन् (स्त्रियां भावे)। मोहः - □ मुह् +घञ् ।

**सीताः**- त्वमेव सखि वासन्ति! दारुणा कठोरा च यैवमार्यपुत्रां प्रदीप्तं प्रदीपयसि।

**तमसाः-** प्रणय एवं व्याहरति शोकश्च ।

**रामः- ** सखि! किमत्र मन्तव्यम्?

> **त्रस्तैकहायनकुरंगविलोलदृष्टे-**
> **स्तस्याः परिस्फुरितगर्भभरालसायाः।**
> **ज्योत्स्नामयीव मृदुबालमृणालकल्पा**
> **क्रव्याद्भिरंगलतिका नियतं विलुप्ता।।28 ।।**

**अन्वयः-** त्रस्तैकहायनकुरंगविलोलदृष्टेः, परिस्फुरितगर्भभरालसायाः तस्याः ज्योत्स्नामयीव मृदुबालमृणालकल्पा अंगलतिका नियतं क्रव्याद्भि: विलुप्ता।।28।।

**अर्थः-** सीता-हे सखि वासन्ति! तुम्हीं दारुण और कठोर हो जो इस प्रकार सन्तप्त आर्यपुत्र को सन्तप्त कर रही हो।

**तमसाः-**स्नेह और शोक (ही) इस प्रकार कह रहा है।

**रामः-**सखि! इसमें विचारना क्या है? डरे हुए एक वर्ष वाले मृग की जैसी अतिचंच ल दृष्टि वाली, स्पन्दमान गर्भ केभार से अलसायी हुई उस (सीता) की चन्द्रिकामयी-सी, कोमल नवीन कमलदण्ड केसमान अंगलता को निश्चय ही मांसभक्षी जन्तुओं ने विलुप्त कर दिया होगा (खा डाला होगा)।।28।। इस पद्य में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

**व्याख्याः-** सीता केअंग की लता, ज्योत्स्ना, मृदु-नूतनमृणाल से समता देकर कवि ने उसकी सौन्दर्यातिशयशीलता तो अभिव्यक्त ही की है, कवि का यह भी अभिप्राय है कि उसके शरीर को विनष्ट करने में हिंसकजन्तुओं को विलम्ब भी न लगा होगा। 'त्रस्तैकहायनकुरंगविलोलदृष्टेः' पद से सीता केनेत्रसौन्दर्य की अभिव्यक्ति केसाथ-साथ उसकी कातरता और दैन्यावस्था की अभिव्यंजना की गयी है। 'परिस्फुरितगर्भभरालसायाः' पद से सीता की ऐसी विवशता अभिव्यक्त की गयी है कि वह अपनी रक्षा केलिए अन्यत्र भागने में भी असमर्थ थी।

**सीता -** आर्यपुत्र! ध्रिये एषा ध्रिये।

**रामः-** हा प्रिये जानकि! क्वासि?

**सीताम्ः–** हाधिक्! हाधिक्! अन्य इवार्यपुत्राः प्रमुक्तकण्ठं रोदिति।

**तमसाः-** वत्से! साम्प्रतिकमेवैतत् कर्त्तव्यानि खलु दुःखितैर्दुःखनिर्वापणानि।

> **पूरोत्पीडे तटाकस्य परीवाहः प्रतिक्रिया।**
> **शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते।।29 ।।**

**अन्वयः**:- तटाकस्य पूरोत्पीडे परीवाहः प्रतिक्रिया। शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते।।29 ।।

**अर्थः-सीता-**आर्यपुत्र! जी रही हूँ, यह मैं जी रही हूँ।

**रामः-** हाय, प्रिये जानकि! (तुम) कहाँ हो?

**सीताः-**हाय (मुझे) धिक्कार है, धिक्कार है। (जिसके कारण) अन्य (साधारण) जन की भाँति आर्यपुत्र मुक्तकण्ठ से रो रहे हैं।

**तमसाः**-पुत्री! यह उचित ही है। दुःखी लोगों केद्वारा दुःख का उपशमन किया जाना ही चाहिए।

तडाग की जलवृद्धि अधिक हो जाने पर (नाली द्वारा) जल को निकाल देना (ही) प्रतीकार है। शोक से विक्षोभ होने पर प्रलापों (रोना-पीटना) केद्वारा ही हृदय धारण किया जाता है।।29।। यहाँ पर दृष्टान्त अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्याः- दुःखनिर्वापणानि**- निर्वापण का अर्थ 'बुझाना' होता है, दुःख की तुलना अग्नि से की जाती है, अतः उसके लिए निर्वापण शब्द का प्रयोग समीचीन है।

**पूरोत्पीडे-** पूर शब्द का अर्थ है - जल का बढ़ना (पूरः स्यादम्भसां वृद्धौ' इति हैमः), उत्पीड का अर्थ है।- आधिक्य।

**टिप्पणीः-** साम्प्रतिकम्- साम्प्रतमेव साम्प्रतिकम् (स्वार्थे ठक्)। निर्वापणानि - निर्+वा+णिच्, पुक का आगम+ल्युट्। □ विशेषतो रामभद्रस्य यस्य बहुतेरप्रकारकष्टो जीवलोकः।

**इदं विश्वं पाल्यं विधिवदभियुक्तेन मनसा**
**प्रियाशोको जीवं कुसुममिव धर्मो ग्लपयति।**
**स्वयं कृत्वा त्यागं विलपनविनोदोऽप्यसुलभ-**
**स्तदद्याप्युच्छवासो भवति ननु लाभो हि रुदितम्।।30 ।।**

**अन्वयः-** अभियुक्तेन मनसा इदं विश्वं विधिवत् परिपाल्यम् प्रियाशोकः धर्मः कुसुममिव जीवं ग्लपयति, स्वयं त्यागं कृत्वा विलपनविनोदः अपि असुलभः, तत् अद्यापि उच्छवासो भवति, ननु रुदितं लाभो हि।।30 ।।

**अर्थः**- विशेष रूप से रामभद्र केलिए (रोना युक्त ही है), जिनका संसार (अर्थात् सांसारिक जीवन) बहुत प्रकार के कष्टों से युक्त है। सावधान मन से इस संसार का विधिवत् पालन करना पड़ता है, प्रिया (सीता) का शोक पुष्प को आतप की तरह (उनके) जीवन को म्लान करता रहता है,( तुझ सीता का) स्वयं (स्वेच्छा से) त्याग कर विलापों द्वारा शोक का अपनोदन भी (उन्हें) दुर्लभ है फिर भी प्राण धारण किये

हुए हैं, निश्चयही रोदन लाभप्रद है।।30।। इस पद्य में उपमा और परिणाम अलंकार तथा शिखरिणी छन्द है।

**टिप्पणी:-** पाल्यम् - □ पाल्+ण्यत् (ऋहलोर्ण्यत्)। अभियुक्तेन - अभि+युज्+क्त।

**राम**ः- कष्टं भोः! कष्टम्।

> **दलति हृदयं गाढोद्वेगं द्विधा तु न भिद्यते**
> **वहति विकलः कायो मोहं न मुञ्चयति चेतनाम्।**
> **ज्वलयति तनूमन्तर्दाहः करोति न भस्मसात्**
> **प्रहरति विधिर्मर्मच्छेदी न कृन्तति जीवितम्।।31 ।।**

**अन्वय**ः- गाढोद्वेगं हृदयं दलति, द्विधा तु न भिद्यते। विकलः कायः मोहं वहति चेतनां न मुञ्चति। अन्दार्हः तनूं ज्वलयति, भस्मसात् न करोति। मर्मच्छेदी विधि: प्रहरति, जीवितं न कृन्तति।।31।।

**अर्थ:- राम**-अरे! कष्ट है, कष्ट है। गाढ व्यथा-सम्पन्न हृदय फटता (तो) है, किन्तु दो खण्डों में विभक्त नहीं होता शोकविह्वल शरीर मूर्च्छा को धारण (तो) करता है, किन्तु चेतना को नहीं छोड़ता हृदय का सन्ताप शरीर को जलाता तो है, किन्तु भस्म नहीं करता, मर्मान्तक पीडा देने वाला दैव प्रहार तो करता है, किन्तु जीवन को काटता नहीं, समाप्त नहीं करता।।31।। प्रस्तुत पद्य में विशेषोक्ति अलंकार तथा हरिणी छन्द है।

**व्याख्या:-** इस श्लोक में दलनादि रूप कारण के होने पर भी द्विधभेदनादि रूप फल के न होने से विशेषोक्ति अलंकार है। कतिपय विद्वान् प्रत्येक चरण में विरोधभास अलंकार मानते हैं, कतिपय 'परिसंख्या' अलंकार मानते हैं।

**टिप्पणी:-**उद्वेगः - उद् + विज् + घञ् । भिद्यते - कर्मकर्तरि लट्। ज्वलयति - □ ज्वल्+णिच्+लट्, मितां ह्रस्व: से उपधा को ह्रस्व ।

**सीता:-** एवं न्विदम्

**राम**ः- हे भगवन्तः पौरजानपदाः!

> **न किल भवतां देव्याः स्थानं गृहेऽभिमतं तत-**
> **स्तृणमिव वने शून्ये त्यक्ता न चाप्यनुशोचिता।**
> **चिरपरिचितास्ते ते भावाः परिद्रव्यन्ति मा-**
> **मिदमशरणैरद्यास्माभिः प्रसीदत रुद्यते।।32 ।।**

**अन्वय**ः-देव्याः गृहे स्थानं भवतां न अभिमतं किल, ततः शून्ये वने तृणमिव त्यक्तवा, न चापि अनुशोचिता, चिरपरिचिताः ते ते भावाः मां परिद्रवयन्ति अशरणैः अस्माभिः इदं रुद्यते, प्रसीदत।32।

**अर्थ:- सीता**-यह बात ऐसी ही है।

**राम:-**हे महानुभाव पुरवासियो और जनपदवासियो!

देवी (सीता)का (मेरे) घर में रहना आप लोगों को अभिमत नहीं है - ऐसा सुना गया, अतः वह तृण केसमान निर्जन वन में त्याग दी गयी और उसके लिए शोक भी नहीं किया गया, किन्तु चिरपरिचित

वे-वे (सभी) पदार्थ (आज पुनः देखे जाने पर) मुझे द्रवित कर रहे हैं, ( अतः) निरुपाय हम रो रहे हैं, अब प्रसन्नहोइए।।32।। इस पद्य में भी विशेषोक्ति अलंकार तथा हरिणी छन्द है।

**व्याख्या:-** इस श्लोक में एक स्थान पर 'माम्' ऐसा एकवचनान्त और दूसरी जगह 'अस्माभिः' ऐसा बहुवचनान्त प्रयोग युक्त नहीं लगता, किन्तु ऐसे अयुक्त प्रयोग से राम का चित्त विक्षेप सूचित होता है, जो विप्रलम्भ श्रृंगार का पोषक है, अतः कोई दोष नहीं है।

**टिप्पणी:-** अभिमतम् - अभि+मन्+क्त । त्यक्ता- □ त्यज्+क्त+टाप्। अनुशोचिता -

**वासन्तीः**–(स्वगतम्) अतिगम्भीरमापूरणं मन्युसम्भारस्य। (प्रकाशम्) देव! अतिक्रान्ते धैर्यमवलम्ब्यताम्।

**रामः-** सखि! किमुच्यते धैर्यमिति।

**देव्या शून्यस्य जगतो द्वादशः परिवत्सरः।**
**प्रनष्टमिव नामापि न च रामो न जीवति।।33 ।।**

**अन्वयः-** देव्याशून्यस्य जगतः द्वादशः परिवत्सरः नामापि प्रनष्टमिव रामः च न जीवति।।33 ।।

**अर्थः- वासन्ती-**(स्वगत) शोकसंघात की अतिगम्भीर पूर्णता है। (प्रकाश) महाराज! बीती बातों केविषय में धैर्य का अवलम्बन करें।

**रामः-** क्या कह रही हो, धैर्य? देवी से शून्य संसार का बारहवाँ वर्ष है, (उसका) नाम भी जैसे विलुप्त हो गया, राम नहीं जीवित है,( ऐसी बात) नहीं।।33।। प्रस्तुत पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्या:-** न च रामो न जीवति-जहाँ दो 'न' का प्रयोग होता है, वहाँ स्वीकारोक्ति ही होती है।

**टिप्पणी:-** अतिक्रान्ते- अति+क्रम् +क्त (कर्तरि)। द्वादशः- द्वादशानां पूरणः 'तस्य पूरणे डट्' द्वादशन+डट् (अ), □

**सीता:-** मोहितास्म्येतैरार्यपुत्रवचनैः।

**तमसा:-** एवमेव वत्से!

**नैताः प्रियतमा वाचः स्नेहार्द्राः शोकदारुणाः।**
**एतास्ता मधुनो धाराः श्च्योतन्ति सविषास्त्वयि।।34 ।।**

**अन्वयः-** तत्स्नेहार्द्रा: शोकदारुणा एता: वाच: प्रियतमा: न ता: एता: सविषामधुन: धारा: त्वयि श्च्योतन्ति ।।34।।

**अर्थ:-सीता-**आर्यपुत्र के इन वचनों से मैं मोहित (विह्वल) हो रही हूँ।

**तमसा:-**वत्से! ऐसा ही है।

प्रेम से सिक्त और शोक से निष्ठुर राम के ये वचन निरतिशय प्रीतिकारक नहीं हैं। वे ये (राम के वचन) विष से सम्पृक्त मधु की धारा (केरूप में) तुम्हारे ऊपर बरस रहे हैं।।34।। इस पद्य में अपह्नुति अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

**टिप्पणी-** श्च्योतन्ति - □ श्च्युत् (अथवा श्चुत्) +लट् - श्च्योतन्ति, श्चोतन्ति वा।

**रामः-** अयि वासन्ति! मया खलु -

> **यथा तिरश्चीनमलातशल्यं प्रत्युप्तमन्तः सविषश्च दंशः।**
> **तथैव तीव्रो हृदि शोकशंकर्मर्माणि कृन्तन्नपि किं न सोढः।।35 ।।**

**अन्वयः-** अन्तः प्रत्युप्तम् तिरश्चीनम् अलातशल्यं सविषः दंशश्च यथा, तथैव तीव्रः हृदि शोकशंकु मर्माणि कृन्तन् अपि किं न सोढः।।35 ।।

**अर्थः- राम-**अरी वासन्ति! मैंने - भीतर (हृदय में)गाड़ा हुआ तिरछा अंगारमय लोहकील और विष सहित (सर्पादि का) दन्तप्रवेश जिस प्रकार तीव्र (होता है)उसी प्रकार तीव्र, मर्मस्थलों को छेदता हुआ, हृदय में रहने वाला शोकशंकु˜ क्या नहीं सहा?।।35।। इस पद्य में उपमा और रूपक अलंकार तथा उपजाति छन्द है।

**टिप्पणीः-** प्रत्युप्तम् - प्रति+वप्+क्त (कर्मणि), 'वचिस्वपियजादीनां किति' सूत्र से सम्प्रसारण ।

**सीताः-** एवमस्मि मन्दभागिनी पुनरप्यायासकारिण्यार्यपुत्रास्य।

**रामः-** एवमतिनिष्कम्पस्तम्भितान्तःकरणस्यापि मम संस्तुततत्तत्प्रियवस्तुदर्शनादुद्दामोऽय मावेगः। तथा हि -

> **लोलोल्लोलक्षुभितकरुणोज्जृम्भणस्तम्भनार्थ**
> **यो यो यत्नः कथमपि मयाऽऽधीयते तं तमन्तः।**
> **भित्त्वा भित्त्वा प्रसरति बलात् कोऽपि चेतोविकार-**
> **स्तोयस्येवाप्रतिहतरयः सैकतं सेतुमोघः।।36 ।।**

**अन्वयः-** लोलोल्लोलक्षुभितकरुणोज्जृम्भणार्थं मया यो यो यत्नः कथमपि आधीयते तं तं कोऽपि चेतोविकारः तोयस्य अप्रितहतिरयः ओघः सैकतं सेतुमिव अन्तः बलात् भित्त्वा भित्त्वा प्रसरति।। ।।

**अर्थः**- सीता-मैं ऐसी भी अभागिन हूँ, जो आर्यपुत्र के लिए पुनः क्लेशकारिणी हुई।

**रामः-**इस प्रकार मुझ अतिनिश्छल रूप से किये हुए अन्तःकरण वाले का भी, उन पूर्वपरिचित वस्तुओं के देखने से यह चित्त-विकार अनियन्त्रित भाव से बढ़ गया। जैसा कि- चंचल महातरंग के समान क्षोभ को प्राप्त शोक की अभिवृद्धि को रोकने के लिए मुझसे किसी प्रकार जो-जो यत्न किया जाता है, उस-

उसको बीच में ही बलपूर्वक छिन्न-भिन्न कर अनिर्वचनीय हृदय-विकार इस प्रकार प्रसरित होता है, जैसे अप्रतिरुद्ध वेग वाला जलप्रवाह बालू से बने पुल को तोड़कर फैलता है।।36।। प्रस्तुत पद्य में उपमा अलंकार तथा मन्दाक्रान्ता छन्द है।

**व्याख्या:-** अतिनिष्कम्पस्तभ्भितŭ-'अतिनिष्कम्पम्' क्रिया-विशेषण हैऋ अन्यथा स्तम्भित पद व्यर्थ हो जायेगा।

**टिप्पणी:-** संस्तुतः - सम्+स्तु+क्त। उज्जृम्भणः - उद्+जृम्भ+ल्युट्। आधीयते - आ+ध+लट् (कर्मणि)। भित्त्वा - □ भिद्+क्त्वा।

**सीता:-** एतेनार्यपुत्रास्य दुर्वारदारुणारम्भेण दुःखसघ्क्षोभेण परिमुषितनिजदुःखं किमपि प्रमुग्धं मे हृदयम्।

**वासन्तीः**– (स्वगतम्)कष्टमभ्यापन्न देवः। तदन्यतः क्षिपामि तावत्। (प्रकाशम्) चिरपरिचितानिदानीं जनस्थानभागानवलोकनेन मानयतु देवः।

**रामः**- एवमस्तु (इत्युत्थाय परिक्रामति)

**सीता:-** सन्दीपन एव दुःखस्य प्रियसख्या विनोदनोपाय इति तर्कयामि।

**वासन्ती :**– (सकरुणम्) देव देव!

**अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्तन्मार्गदत्तेक्षणः**
**सा हंसैः कृतकौतुका चिरमभूद् गोदावरीसैकते।**
**आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वीक्ष्य बद्धस्तया**
**कातर्यादरविन्दकुड्मलनिभो मुग्ध्ः प्रणामाअंजलिः।।37 ।।**

**अन्वयः-** अस्मिन् एव लतागृहे त्वं तन्मार्गदत्तेक्षणः अभवः। सा गोदावरीसैकते हंसैः कृतकौतुका चिरम् अभूत्। आयान्त्या तया त्वां परिदुर्मनायितामिव वीक्ष्य कातर्यात् अरविन्दकुडमलनिभः मुग्ध्ः प्रणामाअंजलिः बद्ध ।।37 ।।

**अर्थ:- सीता-** आर्यपुत्र के इस दुर्निवार दारुण आरम्भ वाले शोक-वेग से मेरे हृदय का अपना दुःख हर उठा और वह कुछ-कुछ विमूढ हो रहा है।

**वासन्ती:-(**स्वगत) महाराज कष्ट में पड़ गये हैं। अतः इन्हें दूसरे विषय की ओर प्रेरित करती हूँ। (प्रकाश) महाराज अब चिरपरिचित जनस्थान के भागों को देखने से सम्मानित करें।

**राम:-**ऐसा ही हो। (उठकर घूमते हैं)

**सीता:-**प्रियसखी (वासन्ती) के विनोद का उपाय दुःख का उद्दीपक ही है, ऐसा समझती हूँ।

**वासन्ती:**-(शोक के साथ) महाराज, महाराज! इसी लतागृह (निकुंज) में उस (सीता) के मार्ग में दृष्टि रखने वाले आप थे (और)गोदावरी के रेतीले प्रदेश में हंसों के साथ क्रीडा कर चुकने वाली वह (सीता)देर तक थी आती हुई उसने आपको अप्रसन्नचित्त-सा देखकर कातरता से कमलकली के समान सुन्दर प्रणामाअंजलि बाँधी थी।।37।। इस पद्य में उपमा अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

**व्याख्या:-** दुःखसंक्षोभेण-पाठा दुःखसंयोगेन=दुःख के संयोग से। परिमुषितनिजदुः खम्- यह हृदय का विशेषण है। राम के दुःख को देखकर सीता जी को अपना दुःख भूल गया। कहीं 'परिमुषित' के स्थान पर 'प्रस्फुटित' तथा 'परिस्फुरित' पाठ मिलता है। देव देव-संभ्रम में द्विवचन है।

**टिप्पणी:-** दुर्वारः - दुर्+वृ+णिच्+खल् (कर्मणि)। परिमुषितः - परि+मुष्+क्त । प्रमुग्ध्ः- प्र+मुह् +क्त।

**सीता:-** दारुणासिवासन्ति! दारुणासि, या एतैहृदयमर्मगूढशल्यसंगट्टनैः पुनरपि मां मन्दभागिनीमार्यपुत्रं च सन्तापयसि।

**राम:-** अयि चण्डि जानकि! इतस्ततो दृश्यस इव न चानुकम्पसे।

**हा हा देविस्फुटति हृदयं ध्वंसते देहबन्ध्ः**
**शून्यं मन्ये जगदविरतज्वालमन्तर्ज्वलामि।**
**सीदन्नधे तमसि विधुरो मज्जतीवान्तरात्मा**
**विष्वंगमोहः स्थगयति कथं मन्दभाग्यः करोमि।।38 ।।**

**अन्वय:-** हा हा देवि! हृदयं स्फुटति, देहबन्ध्ः ध्वंसते, जगत् शून्यं मन्ये अविरतज्वालम् अन्तः ज्वलामि। सीदन् विधुरः अन्तरात्मा अन्धे तमसि मज्जतीव, मोहःविष्वंग स्थगयति, मन्दभाग्यः कथं करोमिः।।38 ।।

**अर्थ:- सीता-**कठोर हो, वासन्ति! तुम कठोर हो, जो (तुम) हृदय के मर्मस्थलों में छिपे इन कीलों को बार-बार हिला-हिला कर (बार-बार पुराने प्रसंगोंको उभार-उभार कर) मुझे और आर्यपुत्र को सन्तप्त कर रही हो।

**राम:-**अरी चण्डि जानकि! तुम मुझे (यहाँ कण-कण में बसी हुई-सी लगने के कारण) इधर-उधर दिखलायी-सी दे रही हो, किन्तु (संभाषण आदि से)मुझ पर दया नहीं कर रही हो।

हाय! हाय! देवि! हृदय फटा जा रहा है, देह का बन्ध्न विदीर्ण हो रहा है, संसार शून्य समझ रहा हूँ, निरन्तर ज्वालायुक्त भाव से भीतर-भीतर जल रहा हूँ, दुःखी होता हुआ विकल अन्तःकरण घोर

अन्धकार में जैसे डूब रहा है, मूर्च्छा चारों ओर से घेर रही है, मैं अभागा क्या करूँ?( कुछ सूझ नहीं रहा है)॥38॥ इसमें उत्प्रेक्षा अलंकार तथा मन्दाक्रान्ता छन्द है।

**व्याख्या:-** चण्डि जानकि-वीरराघव के अनुसार 'जानकि' सम्बोधन पद से यह अर्थ अभिव्यक्त किया गया - तुम परमदयालु जनकराज की पुत्री हो, तुम्हारा इस प्रकार निर्दय होना उचित नहीं है।

□**टिप्पणी-** सीदन्- □ सद्+शतृ। विष्वक् - वि सु+अच्+क्विन्। स्थगयति- □ स्थग् (णिच्)+लट्।

(इति मूर्च्छति)

**सीता:-** हाधिक्! हाधिक्! पुनरपि प्रमूढ आर्यपुत्र:।

**वासन्ती:-** देव! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि।

**सीता -** आर्यपुत्र! मां मन्दभागिनीमुद्दिश्य सकलजीवलोकमंगलाधारस्य ते वारं वारं संशयितजीवितदारुणो दशापरिणाम इति हा हतास्मि।

**तमसा:-** वत्से! समाश्वसिहि, समा श्भसिहि। पुनस्त्वपाणिस्पर्श एव संजीवनोपायोरामभद्रस्य।

**वासन्ती:-** कथमद्यापि नोच्छवसिति। हा प्रियसखि सीते! क्वासि? सम्भावयात्मनो जीवितेश्वरम्।

(सीता ससम्भ्रममुपसृत्य हृदि ललाटे च स्पृशति)

**वासन्ती:-** दिष्टड्ढा प्रत्यापन्नचेतनो रामभद्रः।

**रामः-** **आलिम्पन्नमृतमयैरिव प्रलेपैरन्तर्वा बहिरपि वा शरीरधातून।**
**संस्पर्शः पुनरपि जीवयन्नकस्मादानन्दादपरविधं तनोति मोहम्॥39 ॥**

**अन्वयः-** अन्तर्वा बहिरपि वा शरीरधातून् अमृतमयैः प्रलेपैः आलिम्पन् इव संस्पर्शः पुनरपि जीवयन् अकस्मात् आनन्दात् अपरविधं मोहं तनोति॥39॥

**अर्थ:-** (ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाते हैं)

**सीता:-**हा (धिक्, हाधिक्! आर्यपुत्र पुनः मूर्च्छित हो गये।

**वासन्ती:-**देव! आश्वस्त होइए, आश्वस्त होइए।

**सीता:-**आर्यपुत्र! मुझ मन्दभागिनी को उद्देश करके सम्पूर्ण संसार के कल्याण के आधारभूत आपके बार-बार संशयपूर्ण जीवन के कारण भीषण (यह) दशा का परिणाम है। अतः हाय मैं मारी गयी हूँ। (इस प्रकार मूर्च्छित हो जाती है)

**तमसा:-**पुत्री! आश्वस्त हो, आश्वस्त हो। पुनः तुम्हारे पाणि का स्पर्श ही रामभद्र केजीवन का उपाय है।

**वासन्ती:-**क्यों अभी तक चेतना को नहीं प्राप्त हो रहे हैं? हाय, प्रियसखी सीता! कहाँ हो? अपने प्राणेश्वर को सम्मानित करो।

(सीता घबड़ाहट केसाथ समीप जाकर हृदय और ललाट पर स्पर्श करती है)

**वासन्ती:-**सौभाग्य से रामभद्र की चेतना पुनः लौट आयी।

**राम:-**भीतर और बाहर स्थित शरीर की धातुओं को अमृतमय लेपों से आलिप्त करता हुआ-सा संस्पर्श, सहसा जीवित करता हुआ, आनन्द केकारण अन्य प्रकार की (सुखजन्य)मूर्च्छा (निश्चेष्टता) फैला रहा है।।39।। प्रस्तुत पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा प्रहर्षिणी छन्द है।

**व्याख्या:-** शरीरधातून्-रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र - ये शरीर के सात धातुएँ हैं। ‘बहिरपि’ कथन से त्वक् (चर्म)को भी धातु मानना चाहिए। कथन का अभिप्राय यह है कि स्पर्श शरीर को भीतर और बाहर दोनों ओर से सुख दे रहा है। अपरविधम्-अधिक आनन्द की अनुभूति होने पर भी निश्चेयष्टता आ जाती है, अतः उसे भी एक भिन्न प्रकार का मोह कहा गया, जो दुःखानुभूति से उत्पन्न मोह से भिन्न है।

**टिप्पणी:-** परिणामः- परि+नम्+घञ् । स्पर्शः- □ स्पृश+घञ् । संस्पर्शः- सम्+स्पृश्+घञ् । (आनन्दनिमीलिताक्ष एव) सखि वासन्ति! दिष्टया वर्धसे।

**वासन्ती:-** देव! कथमिव?

**रामः-** सखि! किमन्यत्। पुनः प्राप्ता जानकी।

**वासन्ती:-** अयि देव रामभद्र! क्व सा?

**रामः** – (स्पर्शसुखमभिनीय) पश्य, नन्वियं पुरत एव।

**वासन्ती:-** अयि देव! किमिति मर्मच्छेददारुणैरेभिः प्रलापैः प्रियसखीदुःखदग्धमपि मां पुनर्मन्दभाग्यां दहसि?

**सीता:-** अपसर्तुमिच्छामि। एष पुनः चिरप्रणयसम्भारसौम्यशीतलेनार्यपुत्रस्पर्शेन दीर्घदारुणमपि झटिति सन्तापमुल्लाघयता वज्रलेपोपन ( इव पर्यस्तव्यापार आसञ्जत इव मेऽग्रहस्तः।

**रामः-** सखि! कुतः प्रलापाः?

**गृहीतो यः पूर्वं परिणयविधौ कंकणधर-**
**श्चिरं स्वेच्छास्पर्शैमृतशिशिरैर्यः परिचितः।**

**सीता -** आर्यपुत्र! स एवेदानीमसि त्वम्!

**रामः- स एवायं तस्यास्तुहिननिकरौपम्यसुभगो।**
**मया लब्ध्: पाणिर्ललितलवलीकन्दलनिभः।।40 ।।**

**अन्वय:-** पूर्वं परिणयविधौ कंकणधर:य:(पाणिगृहीत:, अमृतशिशिरै: स्वेच्छास्पर्शेय:चिरं परिचित: तुहिननिकरौपम्यसुभग: ललितलवलीकन्दलनिभ:स एवायं तस्या: पाणि: लब्ध: ।।40।।

**अर्थ:-(**आनन्द से आँखें बन्द किये हुए) सखी वासन्ती! भाग्य से बढ़ रही हो।

**वासन्तीः**-महाराज! वह कैसे?

**रामः-** सखी और क्या, सीता फिर मिल गयी।

**वासन्तीः-** अरे महाराज रामभद्र! वह कहाँ?

**रामः-(**स्पर्शसुख का अभिनय करके) देखो, यह सामने ही है।

**वासन्तीः**-अरे महाराज! मर्मस्थानों को बाँधनें केकारण दुःसह इन अनर्थक वचनों से क्यों भला, प्रियसखी के दुःखों से सन्तप्त भी मुझ अभागिन को बार-बार सन्तप्त कर रहे हो?

**सीताः-** दूर हट जाना चाहती हूँ। किन्तु बहुत समय के प्रेमाधिक्य से हर्ष करने वाला और शीतल, दीर्घ और दारुण सन्ताप को भी कम करने वाला जो आर्यपुत्र का स्पर्श है, उससे वज्रलेप से बँधे हुए की तरह निश्चेष्ट होकर मेरे हाथ का अग्रभाग मानो आर्यपुत्र में बुरी तरह चिपक गया है।

**रामः-** सखि! प्रलाप कैसे?

पूर्व समय में विवाह-संस्कार के अवसर पर वैवाहिक मंगलसूत्र धारण किये हुए जो (पाणि) मेरे द्वारा ग्रहण किया गया था जो अपने अमृत के समान स्वच्छन्दता से प्राप्त होने वाले स्पर्शों से मेरा चिरपरिचित था।।40।। प्रस्तुत पद्य में उपमा अलंकार शिखरिणी छन्द है।

**टिप्पणीः-** दग्धम् - □ दह् + क्त। प्रणयः - प्र + नी +अच्। लब्धः - □ लभ् + क्त।

(इति गृह्णाति)

**सीताः-** हाधिक्! हाधिक्! आर्यपुत्रास्पर्शमोहितायाः प्रमादः खलु मे संवृत्तः।

**रामः-** सखि वासन्ति! आनन्दनिमीलियतेन्द्रियः प्रियास्पर्शसध्वसेन परवानस्मि! तत् त्वं तावदेनां धारय।

**वासन्तीः-** कष्टम् ! उन्माद एव

(सीता ससम्भ्रमं हस्तमाक्षिप्यापसर्पति)

**राम**ः- हाधिक्! प्रमादः।

**करपल्लवः स तस्याः सहसैव जडो जडात्परिभ्रष्टः।**
**परिकम्पिनः प्रकम्पी करान्मम स्विद्यतः स्विद्यन्।।41 ।।**

**अन्वय**ः- तस्याः सः जडः प्रकम्पी स्विद्यन् करपल्लवः मम जडात् परिकम्पिनः स्विद्यतः करात् परिभ्रष्टः।।41 ।।

**अर्थः- सीता-** आर्यपुत्र! अब भी आप वही हैं?

**रामः-** हिमराशि के समान सुहावना तथा लवलीलता के कोमल अलंक`र के सदृश वही यह उसका हाथ मुझे प्राप्त हो गया है। (ऐसा कहकर पकड़ते हैं)

**सीताः-**हाय! छिः! छिः! आर्यपुत्र के स्पर्श से विमुग्ध् होने केकारण मुझसे असावधनी हो गयी।

**रामः-**हे सखी वासन्ति! आनन्द से मेरी इन्द्रियाँ निश्चेष्ट हो गयी हैं। आनन्दजनित विक्षोभ से मैं परवश हो गया हूँ, अतः तुम इस (सीता)को पहले सँभालो।

**वासन्तीः-**कष्ट है! ;महाराज को उन्माद ही है। (सीता शीघ्रता से हाथ खींचकर दूर हट जाती है)

**रामः-** हाय! धिक्कार है! असावधनी हो गयी।

उस (सीता)का स्तब्ध्, स्वेदयुक्त एवं काँपता हुआ किसलय-सदृश वह हाथ मेरे स्तब्ध्, स्वेदयुक्त एवं काँपते हाथ से सहसा ही छूट गया।।41।। प्रस्तुत पद्य में काव्यलिंग अलंकार एवं आर्या जाति छन्द है।

□ **व्याख्याः- साध्वसेन**-साध्वस शब्द का सामान्य अर्थ ‘भय’ होता है। **करपल्लवः स तस्या**ः- यहाँ सीता और राम दोनों के स्तम्भ, वेपथु (कम्पन) और स्वेद इन तीन सात्त्विक भावों का वर्णन होने से रति नामक स्थायी भाव की पुष्टि होने के कारण विप्रलम्भ श्रृंगार रस है, जो नाटक केअंगीरस ‘करुण’ का पोषक है।

**टिप्पणीः-** मोहितः- □ मुह+णिच्+क्त । करपल्लवः - करः पल्लव इव, उपमित समास। परिभ्रष्टः- परि+भ्रंश+क्त। □

**सीताः-** हाधिक्! हाधिक्! अद्याप्यनुबद्धबहुघूर्णमानवेदनं न संस्थापयाम्यात्मानम्।

**तमसा**ः– (सस्नेहकौतुकस्मितं निर्वर्ण्य)

**सस्वेदरोमांचितकम्पितांगी जाता प्रियस्पर्शसुखेन वत्सा।**
**मरुन्नवाम्भःप्रविधूतसिक्ता कदम्बयष्टिः स्फुटकोरकेव।।42 ।।**

**अन्वय**ः- वत्सा प्रियस्पर्शसुखेन मरुन्नवाम्भःप्रविधूतसिक्ता स्फुटकोरका कदम्बयष्टिः इव सस्वेदरोमांचित कम्पितांगी जाता।।42 ।।

**अर्थः- सीता**- छिः! छिः! अभी तक बहुत अधिक बार-बार उत्पन्न होने वाली वेदना से युक्त अपने को प्रकृतिस्थ नहीं कर पा रही हूँ।

**तमसाः-** (स्नेह, कौतुक और मुस्कराहट केसाथ)

सीता प्रिय के स्पर्श के सुख से, वायु से कम्पित, नूतन जल से सिंचित, उद्गत कलियों से युक्त कदम्ब की डाली की तरह स्वेद, रोमांच और कम्पन युक्त अंगों वाली हो गयी है।।42।। इस पद्य में उपमा और यथासंख्य अलंकार का सांकर्य तथा उपजाति छन्द है।

**व्याख्या:-** वत्सा-पाठान्तर-'बाला'। 'वत्सा' पाठ अधिक युक्त है, क्योंकि स्नेहानुबन्ध् के कारण तमसा सीता को पुत्री के समान मानती है, अतः उसके मुख से 'वत्सा' ऐसा कथन संगत ही है। सीता केलिए सर्वत्र उसने वत्सा शब्द का प्रयोग किया है।

**टिप्पणी:-** सिक्त: - □ सिच् + क्त(कर्मणि)।

**सीता:-** अवशेनैतेनात्मना लज्जापितास्मि भगवत्या तमसया। किमिति किलैषा मंस्यते - 'एष परित्याग एषोऽभिषंग' इति।

**रामः**– (सर्वतोऽवलोक्य) हा! कथं नास्त्येव? नन्वकरुणे वैदेहि!

**सीता:-** अकरुणास्मि, यैवंविधं् त्वां पश्यन्त्येव जीवामि।

**रामः-** क्वासि देवि! प्रसीद। न मामेवंविधं् परित्यक्तुमर्हसि।

**सीता:-** आर्यपुत्र! विपरीतमेवैतत्।

**वासन्ती:-** देव! प्रसीद प्रसीद। स्वेनैव लोकोत्तरेण धैर्येण संस्तम्भयातिभूमि गतमात्मानम्। कुत्र मे प्रियसखी?

**रामः-** व्यक्तं नास्त्येव। कथमन्यथा वासन्त्यपि तां न पश्येत्। अपि खलु स्वप्न एष स्यात्। न चास्मि सुप्तः। कुतो रामस्य निद्रा? सर्वथा स एवैष भगवान् अनेकवारपरिकल्पनानिर्मितो विप्रलम्भः पुनः पुनरनुबध्नाति माम्।

**सीता:-** मयैव दारुणया विप्रलब्ध् आर्यपुत्रः।

**वासन्ती:-** देव! पश्य पश्य -

> **पौलस्त्यस्य जटायुषा विघटितः कार्ष्णायसोऽयं रथ-**
> **स्ते चैते पुरतः पिशाचवदनाः कंकालशेषाः खराः।**
> **खड्गच्छिन्नजटायुपक्षतिरितः सीतां चलन्तीं वह-**
> **न्नन्तर्व्याकुलविद्युदम्बुद इव द्यामभ्युदस्थादरिः।।43 ।।**

**अन्वयः-** अयं जटायुषा विघटितः पौलस्त्यस्य कार्ष्णायसः रथः। पुरतः च ते एते पिशाचवदनाः कंकालशेषाः खराः। इतः खड्गच्छिन्नजटायुपक्षतिः अरिः चलन्तीं सीतां वहन् अन्तर्व्याकुलविद्युद् अम्बुद इव द्याम् अभ्युदस्थात्।।43 ।।

**अर्थ:- सीता**- (स्वगत) विवश इस देह केकारण भगवती तमसा के द्वारा मैं लज्जित की गयी हूँ। वह (अपने मन में) क्या समझेगी।(कहाँ) यह (पतिके द्वारा) तेरा परित्याग और (कहाँ) तेरी (पति में) यह आसक्ति।

**राम:-** (सभी ओर देखकर)क्यों, है ही नहीं? अरे अकरुणे वैदेहि!

**सीता:**- मैं सचमुच 'अकरुणा' हूँ, जो इस प्रकारके आपको देखती हुई भी जी रही हूँ।

**राम:-** देवि! कहाँ हो? तुम्हें इस प्रकार के मुझ को छोड़ना उचित नहीं।

**सीता:-** हे आर्यपुत्र! यह तो विपरीत-सा है (आपने मुझे छोड़ा है, मैंने तो आपको नहीं छोड़ा है)।

**वासन्ती:**- महाराज! प्रसन्नहों, प्रसन्न हों। अपने ही लोकोत्तर धैर्य से सीमा लाँघ कर दूर चले गये अपने को स्थिर करो। मेरी प्रियसखी (यहाँ) कहाँ?

**राम:-** स्पष्टतः नहीं ही है। अन्यथा कैसे वासन्ती भी न देखती। सम्भव है यह स्वप्न हो, किन्तु मैं सोया नहीं हूँ। भला राम को नींद कहाँ? सर्वथा वही यह बहुशः संकल्प-निर्मित सामर्थ्य-सम्पन्न भ्रम मुझे बाँध लेता है - मेरा अनुसरण करता है।

**सीता:-** मुझ कठोर केद्वारा ही आर्यपुत्र प्रताड़ित किये गये हैं।

**वासन्ती:**- महाराज! देखिए, देखिए-

यह जटायु के द्वारा भग्न किया हुआ रावण का कृष्णायस (फौलाद लोह) से बना रथ है, और आगे ये पिशाचों के मुख के समान मुख वाले वे(रावण केरथ को खींचने वाले) खच्चर हैं, जिनका अस्थिपंजर मात्रा अवशेष रह गया है, इसी स्थान से जटायु के पक्ष मूल को तलवार से काटने वाला शत्रु(रावण) छटपटाती सीता को ले जाता हुआ, भीतर-भीतर चंचल विद्युत् वाले मेघ के समान आकाश की ओर उड़ गया था।।43।। प्रस्तुत पद्य में उपमा अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

**व्याख्या:-** अपि खलु स्वप्नः-'अपि' शब्द का प्रयोग 'संभावना' केअर्थ में हुआ है, 'अन्तर्व्याकुल-पाठान्तर-अन्तर्व्यापृत। विशालकाय और कृष्णवर्ण होने के कारण रावण मेघ के समान तथा स्वभावतः गौरवर्ण और रावण के फन्दे में पड़ने से चंचल (छटपटाती हुई) होने के कारण सीता विद्युत् के समान है। अतः सीता से युक्त रावण को उस मेघ के समान कहा गया है, जिसके भीतर बिजली चमक रही हो।

**टिप्पणी:-** विप्रलब्ध्ः - वि + प्र + लभ् + क्त। पौलस्त्यः - पुलस्तेर्गोत्रापत्यं पुमान्। पुलस्ति+घञ्।

**सीता:**– (सभयम्) आर्यपुत्र! तातो व्यापाद्यते अहमप्यपह्रियेे। तस्मात् परित्रायस्व परित्रायस्व।

**राम**ः– (सवेगमुत्थाय) आः पाप! तातप्राणसीतापहारिन! क्व यासि?

**वासन्तीः**- अयि देव! राक्षसकुलप्रलयधूमकेतो! किमद्यापि ते मन्युविषयः?

**सीताः-** अहो! अहमप्युद्भ्रान्तास्मि।

**राम**ः- अन्य एवायमधुना विपर्ययो वर्तते।

**उपायानां भावादविरतविनोदव्यतिकरै-**
**विमर्दैर्वीराणां जगति जनिताद्भुतरसः।**
**वियोगो मुग्धाक्ष्याः स खलु रिपुघातावधिरभूत्**
**कथं तूष्णीं सह्यो निरवधिरयं त्वप्रतिविधः।।44 ।।**

**अन्वय**ः-उपायानां भावात् अविरतविनोदव्यतिकरैः वीराणां विमर्दैः जगति जनिताद्भुतरसः मुग्धक्ष्याः सः वियोगः रिपुघातावधिः अभूत् खलु। अयं तु अप्रतिविधः निरवधिः कथं तूष्णीं सह्यः? ।।44 ।।

□**अर्थः-** सीता-(भय के साथ) आर्यपुत्र! तात (जटायु) मारे जा रहे हैं, मैं भी हरी जा रही हूँ, अतः बचाइए, बचाइए।

**रामः- (**वेग से उठकर) आः पापी! तात के प्राणों तथा सीता का अपहरण करने वाला (लंकापति) तू कहाँ जा रहा है?

**वासन्तीः**- अयि महाराज! राक्षसकुल के प्रलय के लिए धूमकेतु! क्या आज भी (वह रावण) आपके कोप का भाजन है?

**सीताः**- आश्चर्य है! मैं भी अत्यन्त भ्रान्त हो गयी थी।

**रामः-** इस समय यह (सीता-वियोगरूप) दशा-विपर्यास दूसरे ही प्रकार का है।

उपायों के होने के कारण निरन्तर विनोद के सम्पर्कों वाले, वीरों के संग्रामों से जगत् में उत्पन्न किये गये अद्भुत रस से सम्पन्न, सुनयना (सीता) का वह वियोग शत्रु के विनाश तक ही था, किन्तु यह (वियोग) तो प्रतीकार शून्य और अवधि(अतएव) चुपचाप कैसे सहन किया जा सकता है?।।44।। इसमें व्यतिरेक अलंकार एवं शिखरिणी छन्द है।

**टिप्पणीः-** व्यापाद्यते - वि + आ +पद् + णिच् +लट् (कर्मणि)। अपहारिन् - अप + हृ + णिनि। □
**सीताः-** निरवधिरिति हा हतास्मि मन्दभागिनी।

**राम**ः- हा कष्टम्!

**व्यर्थं यत्र कपीन्द्रसख्यमपि मे, वीर्यं हरीणां वृथा**
**प्रज्ञा जाम्बवतोऽपि यत्र न गतिः पुत्रास्य वायोरपि।**

**मार्गं यत्र न विश्वकर्मतनयः कर्तुं नलोऽपि क्षमः**
**सौमित्रेरपि पत्रिणामविषये तत्र प्रिये! क्वासि मे?॥45 ॥**

**अन्वयः-** 'यत्र मे कपीन्द्रसख्यपि व्यर्थम्, यत्र हरिणां वीर्यं वृथा, यत्रा जाम्बवतोऽपि प्रज्ञा वृथा, यत्र वायोरपि पुत्रस्य गतिः न, यत्रा विश्वकर्मतनयः नलःअपि मार्गं कर्तुं न क्षमः, सौमित्रोः अपि पत्रिणाम् अविषये तत्र मे प्रिये! क्व असि?॥45 ॥

**अर्थः-** सीता-'अवधिरहित' ऐसा है हाय मैं मन्दभागिनी विनष्ट हुई।

**रामः-**हाय, दुःख है।

जहाँ मेरी सुग्रीव के साथ मैत्री भी व्यर्थ है, वानरों का पराक्रम भी व्यर्थ है, जहाँ जाम्बवान् की बुद्धि भी नहीं (काम कर सकती), पवनपुत्र (हनुमान) की भी जहाँ पहुँच नहीं है, जहाँ विश्वकर्मा के पुत्र नल भी मार्ग (पुल)बनाने में समर्थ नहीं है, लक्ष्मण के बाणों के लक्ष्य में न आने वाले उस प्रकार के मेरी प्रिया किस प्रदेश में हो?॥45॥ इसमें समुच्चय अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

**व्याख्याः-**विश्वकर्मतनयो नलः-विश्वकर्मा देवशिल्पी के रूप में प्रसिद्ध ही है। यह कभी ऋतध्वज नामक मुनि के शाप से वानरयोनि को प्राप्त हो गया था। उस समय उसी के वीर्य से घृताची नामक अप्सरा में नल का जन्म हुआ था। इसी नल ने वह सेतु बनाया था, जिससे वानरसेना ने समुद्र को पार किया था।

**टिप्पणीः-** सख्यम् - सख्युर्भावः सख्यम् । सखि +य ('सख्युर्यः' 5/1/126)। प्रज्ञा - प्र + ज्ञा +अघ् (भावे)। सौमित्रिः - सुमित्राया अपत्यं पुमान् सौमित्रिः अपत्यार्थ ।
**सीताः**- बहुमानितास्मि पूर्वविरहे।

**रामः-** सखि वासन्ति! दुःखायैव सुहृदामिदानीं रामस्य दर्शनम्। कियच्चिरं त्वां रोदयिष्यामि तदनुजानीहि मां गमनाय।

**सीताः**– (सोद्वेगमोहं तमसामाश्लिष्य) भगवति तमसे! कथं गच्छत्येवार्यपुत्रः।

**तमसाः-** वत्से! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि। नन्वावामप्यायुष्मतोः कुललवयोर्वर्षवर्धनमंगलानि सम्पादयितुं भागीरथीपदान्तिकमेव गच्छावः।

**सीताः-** भगवति! प्रसीद क्षणमात्रमपि तावद् दुर्लभदर्शनं जनं प्रेक्षे।

**रामः-** अस्ति चेदानीमश्वमेधाय सहधर्मचारिणी मे।

**सीताः**– (सोत्कम्पम्) आर्यपुत्र! का?

**वासन्तीः-** परिणीतमपि किम्?

**रामः-** नहि नहि! हिरण्मयी सीताप्रतिकृतिः।

**सीताः**– (सोच्छ्वास्रम्) आर्यपुत्र! इदानीमसि त्वम्। अहो! उत्खातमिदानीं मे परित्यागशल्यमार्यपुत्रेण।

**रामः-** तत्रापि तावद् बाष्पदिग्धं् चक्षुर्विनोदयामि।

**सीताः**– धन्या खलु सा यैवमार्यपुत्रेण बहुमन्यते या चार्यपुत्रां विनोदयन्त्याशानिबन्धनं जाता जीवलोकस्य।

**तमसाः**– (सस्मितस्नेहास्रं परिष्वज्य) अयि वत्से! एवमात्मा स्तूयते।

**सीताः**– (सलज्जमधोमुखी स्वगतम्) परिहसितास्मि भगवत्या।

**वासन्तीः-** महानयं व्यतिकरोऽस्माकं प्रसादः। मगनं पुनर्यथा कार्यहानिर्न भवतु तथास्ताम्।

**रामः**– तथास्तु

**सीताः-** प्रतिकूलेदानीं मे वासन्ती संवृत्ता।

**तमसाः-** वत्से! एहि गच्छावः।

**सीताः**– (सकष्टम्) एवं करिष्यावः।

**तमसा -** कथं वा गम्यते? यस्यास्तव-

> **प्रत्युप्तस्येव दयिते तृष्णादीर्यस्य चक्षुषः।**
> **मर्मच्छेदपरैर्यत्नैराकर्षो न समाप्यते।।46 ।।**

**अन्वयः-** 'तृष्णादीर्घस्य (अत एव) दयिते प्रत्युप्तस्येव (यस्याः तव) चक्षुषः आकर्षः मर्मच्छेदपरैः यत्नैः न समाप्यते।।46 ।।

**अर्थः-** सीता-पहले के विरह में मैं बहुत सम्मानित हूँ।

**रामः-** सखि वासन्ति! राम का दर्शन इस समय मित्रों के दुःख के लिए ही है। तुम्हें कितनी देर तक रुलाऊँगा। अतः मुझे जाने की अनुमति दो।

**सीताः-** (उद्वेग और मोह के साथ तमसा का आलिंगन करके) हे भगवति तमसे! क्या

आर्यपुत्र जा ही रहे हैं? (ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाती है)।

**तमसा:-** पुत्री! समाश्वस्त होओ, समाश्वस्त होओ। हम दोनों भी आयुष्मान् कुश तथा लव के (द्वादश)वर्षपूर्ण निमित्तक मंगलों के सम्पादन के लिए भागीरथी के चरणों के समीप ही चलें।

**सीता:-** हे भगवति! प्रसन्न होओ, क्षणभर दुर्लभ दर्शन (प्रिय) जन (राम) को और देख लूँ।

**राम:-** और इस समय अश्वमेध् यज्ञ के अनुष्ठान के लिए मेरी सहधर्मचारिणी है।

**सीता:-**(काँप कर) आर्यपुत्र! कौन?

**वासन्ती:-**विवाह भी कर लिया क्या?

**राम:-**नहीं नहीं, सुवर्ण की बनी हुई सीता की प्रतिमूर्ति।

**सीता:-(**उच्छवास और अश्रु के साथ) अब आप आर्यपुत्र (सच्चे पति) हैं। अहो, अब आर्यपुत्र ने परित्याग रूप कील को उखाड़ दिया।

**राम:-**और तब तक उसी में आँसुओं से लिप्त नेत्रों को बहलाउँगा।

**सीता:-** निश्चय वह (मेरी प्रतिकृति) धन्य है, जो इस प्रकार आर्यपुत्र के द्वारा सम्मानित है तथा जो आर्यपुत्र के दुःखों का अनुमोदन करती हुई संसार की आशा का हेतु हो गई है।

**तमसा:- (**मुस्कराहट, स्नेह तथा आँसू के साथ आलिंगन करके) अरी पुत्री, इस प्रकार अपनी ही स्तुति हो रही है।

**सीता:- (**सलज्ज, अधोमुखी होकर, स्वगत) भगवती तमसा के द्वारा मेरा परिहास किया जा रहा है।

**वासन्ती:-** यह समागम हम लोगों पर बड़ा अनुग्रह है। जिस प्रकार कर्त्तव्य की हानि न हो, उस प्रकार गमन किया जाय।

**राम:-**वैसा ही हो।

**सीता:-**वासन्ती इस समय मेरे प्रतिवूफल हो गयी है।

**तमसा:-**पुत्री, आओ चलें।

**सीता:-(**कष्ट के साथ) ऐसा (ही) करें।

**तमसा:-**अथवा कैसे चला जा सकता है? जिस तुम्हारे (पतिदर्शन) की लालसा से दीर्घ (विस्फारित) अतएव प्रिय में गड़े हुए-से नेत्रों को (प्रिय की ओर से) खींचना मर्मस्थलों को भेदने वाले गमन प्रयत्नों द्वारा सम्पन्न नहीं हो पा रहा है।।46।। इसमें उत्प्रेक्षा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्या:-**सोच्छवास्रम्-उच्छवास के साथ इसलिए कि यज्ञ सम्पादनार्थ विवाह के आवश्यक होने पर भी राम ने वैसा नहीं किया और अश्रु के साथ इसलिए कि राम ने सभी तरह के सुखों को उसी (सीता) के कारण छोड़ दिया।

**टिप्पणी:-** उत्खातम् - उद् + खन् +क्त । परिहसिता - परि + हस् + क्त + टाप्। □

**सीता:-** नमो नमोऽपूर्वपुण्यजनितदर्शनाभ्यामार्यपुत्रचरणकमलाभ्याम्।

**तमसा:-** वत्से! समाश्वसिहि समाश्वसिहि।

**सीता:-** कियच्चिरं वा मेघान्तरेण पूर्णिमाचन्द्रस्य दर्शनम्।

**तमसा:-** अहो संविधानकम्!

**एको रसः करुण एव निमित्तभेउाद्भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान्।**
**वर्तबुद्बुदतरंगमयान् विकारानम्भो यथा सलिलमेवतु तत्समग्रम्।।47 ।।**

**अन्वय:-** एक एव करुणः रसः निमित्तभेदाद् भिन्न सन् पृथक् पृथग् विवर्तान् आश्रयते इव, यथा अम्भः आवर्तबुद्बुदतरंगमयान् विकारान् आश्रयते, तत्समग्रं तु सलिलमेव।।47 ।।

**अर्थ:- सीता-**अपूर्व पुण्यों से जिनके दर्शन हुए, उन आर्यपुत्र के चरणकमलों को बार-बार प्रणाम है। (ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाती है)

**तमसा:-** पुत्री! आश्वस्त होओ, आश्वस्त होओ।

**सीता:-**(आश्वस्त होकर) अथवा मेघ के अवकाश (थोड़ी देर केलिए हटने) से कितनी देर तक पूर्णिमा के चन्द्र का दर्शन (हो सकता है)?

**तमसा:-** अहो! कैसा रचना वैचित्र्य है।

एक ही करुणरस निमित्त के भेद से भिन्न होता हुआ पृथक् पृथक् ( श्रृंगारादि) विवर्तों (परिणामों) का आश्रयण करता है, ऐसा मालूम पड़ता है। जैसे एक जल ही भँवर, बुद्बुद और तरंग रूप विकारों का आश्रयण करता है, किन्तु वह तत्त्वतः जल ही है।।47।। इसमें उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

**व्याख्या:-** पूर्णिमाचन्द्रस्य दर्शनम्-पाठांú-पूर्णचन्द्रदर्शनम्। सीता के कहने का अभिप्राय है - अथवा जिस प्रकार मेघों से आच्छादित पूर्णचन्द्र के दर्शन कभी-कभी क्षण भर के लिए मेघों के थोड़ी देर केलिए हट जाने पर हो जाते हैं, वैसे ही मेरे दुर्भाग्य रूप मेघ से छिपाये गये राम के दर्शन सौभाग्य वश कुछ क्षणों के लिए हो गये।

**टिप्पणी:-** संविधानकम् - सम् +वि □ ध + ल्युट् + कन् (स्वार्थे)। □

**राम**:- अयि विमानराज! इत इतः।

(सर्वे उत्तिष्ठन्ति)

**तमसा:-** वासन्त्यो – (सीतारामौ प्रति)

**अवनिरमरसिन्धु: सार्धमस्मद्विधाभिः**
**स च कुलपतिराद्यश्छन्दसां यः प्रयोक्ता।**
**स च मुनिरनपुयातारुन्धती को वसिष्ठ-**
**स्त्वयि वितरतु भद्रं भूयसे मंगलाय।।48 ।।**

**अन्वय**:- अस्मद्विधभिः सार्धम् अवनिः, अमरसिन्धुः , स च कुलपतिः यः छन्दसाम् आद्यः प्रयोक्ता, स च अनुयातारुन्धतीकः वसिष्ठो मुनिः भूयसे मंगलाय त्वयि भर्द्रं वितरतु।।48 ।।

**अर्थ:-** राम-अयि व्योमयानश्रेष्ठ (पुष्पक)! इस तरफ, इस तरफ।(सब उठते हैं)

**तमसा और वासन्ती**-(सीता और राम के प्रति)

हम-जैसे लोगों के साथ ही पृथिवी, गंगा, वह कुलपति (वाल्मीकि) जो (वेद-प्रयुक्त छन्दों से भिन्न, लौकिक)छन्दों का प्रथम प्रयोक्ता है और अरुन्धती से अनुगत वसिष्ठ मुनि, तुममें महान् मंगल के लिए कल्याण वितरित करें।।48।। प्रस्तुत पद्य में तुल्योगिता अलंकार तथा मालिनी छन्द है।

**व्याख्या:-** छन्दसाम्-इसका तात्पर्य ‘अनुष्टप्’ आदि लौकिक छन्दों से है, वैदिक छन्दों से नहीं।

**टिप्पणी:-** आद्यः - आदौ भवः आदि + यत्। प्रयोक्ता - प्र + युज् + तृच्।

**(इति निष्क्रान्ताः सर्वे) (सभी चले गये)**

**इति महाकवि-श्रीभवभूतिविरचित उत्तररामचरिते छाया नाम तृतीयोअंक: ।**

## अभ्यास-प्रश्न-1

**1. निम्नलिखित पद्यों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -**

क. पूरोत्पीडे......................धर्यते।।

ख. देव्या शून्यस्य................रामो न जीवति।।

## अभ्यास प्रश्न 2.

**2. निम्नलिखित पद्यों का अनुवाद कीजिए -**

(क) त्वं जीवितं त्वमसि....................किमिहोत्तरेण।।

(ख) अयि कठोर यशः.......................कथं बत मन्यसे।।

(ग) दलति हृदयं..........................न कृन्तति जीवितम्।।

(घ) करवल्लवः स तस्याः....................स्विद्यतः स्विद्यन्।।

## 2.4 सारांश:-

इस इकाई में आपने उत्तररामचरितम् तृतीय अंक के उत्तरार्द्ध की कथावस्तु का अध्ययन किया। राम की करूण दशा को देखकर तथा अपनी स्वर्णमयी मूर्ति की चर्चा राम के मुख से सुनकर सीताजी द्रवित होकर राम की ओर अभिमुख होती है। उनका राम के प्रति बारह वर्षों तक निरन्तर बना हुआ निर्वासन–जनित क्षोभ नष्ट हो जाता है और हृदय पूर्ववत् निर्मल, निष्कलुष एवं आत्मीयता पूर्ण प्रेम से ओत प्रोत हो जाता है। इस कथा के अनन्तर कवि ने करुण रस के स्वरूप तथा भेद की चर्चा करते हुए तृतीय अंक का पर्यवसान किया है।

## 2.5 शब्दावली:-

मैथिली - सीता

उपालम्भ - उलाहना
घर्म: - आतप
सविष: - गरलयुक्त

## 2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1 एवं 2 के उत्तर इकाई में देखिये।

## 2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः-

1.उत्तररामचरितम् (भवभूति), एम.आर. काले (वीरराघवकृत टीका) मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1962

2.उत्तररामचरितम् (भवभूति), स्वरूप आनंद एवं जनार्दन शास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1977

3.उत्तररामचरितम् (भवभूति), ब्रह्मानन्द शुक्ल, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1987

## 2.8 सहायक व उपयोगी पुस्तकें:-

1.भवभूति और उनकी नाट्यकला, अयोध्या प्रसाद सिंह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1988

2.भवभूति ग्रन्थावली, राम प्रताप त्रिपाठी शास्त्री, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973

3.भवभूति के नाटक, ब्रज वल्लभ शर्मा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1973

## 2.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. एको रसः करुण एव इस उक्ति की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. पठित पाठ के आधार पर 'आनन्दग्रन्थि' को स्पष्ट कीजिए।

# इकाई : 3 - उत्तररामचरितम् चतुर्थ अंक का पूर्वार्द्ध

इकाई की रूपरेखा:

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 1 से 15 तक (मूलपाठ अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी)

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.8 सहायक ग्रन्थ

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

## 3.1प्रस्तावना:-

उत्तररामचरितम् के तृतीय खण्ड की यह तृतीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने तृतीय अंक का अध्ययन किया। जिसमें आपने जाना कि भगवती भागीरथी के आर्शीवाद के कारण सीता जी को पृथ्वी पर कोई देख नहीं सकता है और इधर श्रीराम का पंचवटी में प्रवेश होता है।

प्रस्तुत इकाई में आप उत्तररामचरितम् के चतुर्थ अंक कौशल्या-जनकयोग के पूर्वार्द्ध का अध्ययन करेगें। इसके नामकरण का कारण यह है कि द्वितीय अंक में आत्रेयी ने वासन्ती से जैसा कहा था कि सीता-निर्वासन को सुनकर दुःखित अरुन्धती ने अपना निश्चय बतलाया कि मैं सीता से शून्य अयोध्या में नहीं जाऊँगी। राम की माताओं ने भी अरुन्धती का ही समर्थन किया और उनके अनुरोध से वशिष्ठ ने यह निर्णय लिया कि हम सब वाल्मीकि के तपोवन में चलकर रहेंगे। तदनुसार सब वाल्मीकि के आश्रम में आते हैं। सीता-निर्वासन से अत्यन्त दुःखित राजर्षि जनक भी वाल्मीकि का दर्शन करने आते हैं। वशिष्ठ जी के आदेशानुसार कौशल्या स्वयं अरुन्धती और गृष्टि नामक कंचुकी के साथ जनक से भेंट करती हैं। इसलिए इस अंक का नाम 'कौसल्या-जनक योग' रखा गया।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता पायेगें कि बाल्मीकि के आश्रम में कौशल्या अरून्धती और गृष्टि नामक कंचुकी के साथ जनक से भेंट करती हैं इसलिए इस अंक का नाम 'कौसल्या-जनक योग' रखा गया।

## 3.2उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोकों मे प्रयुक्त छन्द एवं अलंकार को समझा पायेगें।
- राम की माताओं का सीता के प्रति अगाध प्रेम का वर्णन कर पायेगें।
- दु:खित पिता के मनोभावों का वर्णन कर पायेगें।
- करूण रस को उद्धरणों के द्वारा समझा पायेगें

## 3.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 1 से 15 तक (मूलपाठ अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी)

**एकः** - सौधातके! दृश्यतामद्य भूयिष्ठसन्निधापितातिथिजनस्य समधिका-रम्भरमणीयता भगवतो वाल्मीकेराश्रमपदस्य। तथा हि -

**नीवारौदनमण्डमुष्णमधुरं सद्यःप्रसूताप्रिया-**
**पीतादभ्यधिकं तपोवनमृगः पर्याप्तमाचामति।**

**गन्धेन स्फुरता मनागनुसृतो भक्तस्य सर्पिष्मतः**
**कर्कन्धूफलमिश्रशाकपचनामोदः परिस्तीर्यते ।। 1 ।।**

**अन्वयः -** तमोवनमृगः सद्यःप्रसूताप्रियापीताद् अभ्यधिकम् उष्णमधुरं नीवारौदनमण्डं पर्याप्तम् आचमति। सर्पिष्मतः भक्तस्य स्फुरता गन्धेन मनाकअनुसृतः कर्कन्धूफलमिश्रशाकपचनामोदः परिस्तीर्यते।।1 ।।

**अर्थ-** (कौसल्याजनकयोग)(तदनन्तर दो तपस्वी ;दाण्डायन और सौधातकि प्रवेश करते हैं)

**एक-**हे सौधातकि! इस समय अत्यधिक संख्या में समवेत अतिथियों वाले भगवान् वाल्मीकि के आश्रमस्थान की (अतिथि-सत्कारार्थ) प्रचुर आयोजन से होने वाली शोभा तो देखिए। वह इस प्रकार है-

आश्रम का मृग तत्काल प्रसूता प्रिया (मृगी) के पीने से बढ़े हुए(अवशिष्ट) गरम-गरम तथा मीठे-मीठे नीवार (तिन्नी) के भात के माँड़ को प्रचुर मात्रा में पी रहा है। घृत युक्तभात के उद्गत गन्ध् से कुछ अनुगत (युक्त) बेर के फलों से मिश्रित शाक के पकाने की सुगन्ध चारों ओर (हवा से) फैल रही है।।1।। प्रस्तुत पद्य में स्वभावोक्ति अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

**व्याख्या-** सद्यःप्रसूताप्रियापीतात्-सद्यःप्रसूता चासौ प्रिया च तस्याःपीतात्(भावे)'प्रसूताप्रिया' में कर्मधारय समास है।

**टिप्पणी-** सौधातकिः - सुधातुरपत्यं पुमान् सुधात्+इञ् । आचामति - आ □ चम् + लट् (तिप्), धातु के अच् (अ) को दीर्घ।

**सौधातकिः -** स्वागतमनेकप्रकाराणां जीर्णकूर्चानामनध्यायकारणानां तपोधनानाम्।

**प्रथमः** – (विहस्य) अपूर्वः कोऽपि ते बहुमानहेतुर्गुरुषु सौधातके!

**सौधातकिः** - भो दाण्डायन! किन्नामधेय एष महतः स्थविरसार्थस्य

धुरन्धरोऽद्यातिथिरागतः?

**दाण्डायानः** -धिक्! प्रहसनम् नन्वयमृष्य श्रृंगाश्रमादरुन्धतीं पुरस्कृत्य महाराजदशरथस्य दारानध्ष्ठिाय भगवान् वसिष्ठः प्राप्तः। तत्किमेवं प्रलपसि?

**सौधातकिः -** हुँ वसिष्ठः?

**दाण्डायन** - अथ किम्?

**सौधातकिः -** मया पुनर्ज्ञातं व्याघ्रो वा वृको वैष इति।

**दाण्डायनः -** आः किमुक्तं भवति?

सौधातकिः - येन परापतितेनैव सा वराकी कपिला कल्याणी मडमडायिता।

**दाण्डायानः** - 'समांसो मधुपर्क' इत्याम्नायं बहुमन्यमानाः श्रोत्रियाभ्यागताय वत्सतरीं महोक्षं वा महाजं वा निर्वपन्ति गृहमेधिन:। तं हि धर्मं धर्मसूत्राकाराः समामनन्ति।

**सौधातकिः -** भो निगृहीतोऽसि।

**दाण्डायनः** - कथमिव?

**सौधातकिः -** येनागतेषु वसिष्ठमिश्रेषु वत्सतरी विशसिता। अद्यैव प्रत्यागतस्य राजर्षेर्जनकस्य भगवता वाल्मीकिना दधिमधुभ्यामेव निर्वतितो मधुपर्कः। वत्सतरी पुनर्विसर्जिता।

**दाण्डायनः -** अनिवृत्तमांसानामेवं कल्पमृषयो मन्यन्ते। निवृर्त्तमांसस्तु तत्र भवाज्जनक:।

**सौधातकिः** - किं निमित्तम्?

**दाण्डायनः -** स तदैव देव्याः सीतायास्तादृशं दैवदुर्विपाकमुपश्रुत्य वैखानसः संवृत्तः। तथाऽस्य कतिपये संवत्सराश्चन्द्रद्वीपतपोवने तपस्तप्यमानस्य।

**सौधातकिः** - ततः किमित्यागतः?

**दाण्डायनः -** चिरन्तनप्रियसुहृदं भगवन्तं प्राचेतसं द्रष्टुम्।

**सौधातकिः -** अप्यद्य सम्बन्धिनीभिः समं संवृत्तमस्य दर्शनं न वेति?

**दाण्डायनः -** सम्प्रत्येव भगवता वसिष्ठेन देव्याः कौसल्यायाः सकाशं भगवत्यरुन्धती प्रहिता यत् स्वयमुपेत्य वैदेहो द्रष्टव्य इति।

**सौधातकिः -** यथैते स्थविराः परस्परं मिलितास्तथावामपि वटुभिः सह मिलित्वाऽनध्यायमहोत्सवं खेलन्तौ सम्भावयावः।

**दाण्डायनः -** तदयं ब्रह्मवादी पुराणराजर्षिर्जनकः प्राचेतसवसिष्ठावुपास्य सम्प्रत्याश्रमस्य बहिर्वृक्षमूलमधितिष्ठति। य एष -

**हृदि नित्यानुषक्तेन सीताशोकेन तप्यते।**

**अन्तः प्रसृप्तदहनो जरन्निव वनस्पति:।।2 ।।**

**अन्वयः** - हृदि नित्यानुषक्तेन सीताशोकेन अन्तःप्रसृप्तदहनः जरन् वनस्पतिरिव तप्यते।।2 ।। **अर्थ-**

**सौधातकि**-अत्यन्त पुरानी (पकी सफेद) दाढ़ी वाले अनध्याय के कारणभूत अनेक प्रकार के तपस्वियों का स्वागत है।

**पहला-**(हँसकर) हे सौधतके! गुरुजनों (पूज्य अतिथियों) के विषय में अत्यधिक सम्मान का कारण विलक्षण है।

**सौधातकि**-हे दाण्डायन! महान् वृद्ध समूह का अग्रणी किस नाम का यह अतिथि आज आया है?

**दाण्डायन**-प्रहसन को धिक्कार है। अरे, अरुन्धती को आगे कर, महाराज दशरथ की पत्नियों को अधिष्ठित कर (उनका अध्ष्ठिाता होकर ) ऋष्य श्रृंगके आश्रम से यह भगवान् वसिष्ठ आये हैं। तो, क्यों इस प्रकार बेकार बातें करते हो?

**सौधातकि**-हूँ, वसिष्ठ?

**दाण्डायन**-और क्या?

**सौधातकि-**मैंने तो समझा था कि यह (कोई) व्याघ्र या भेड़िया है।

**दाण्डायन-**आः, क्या मतलब है?

**सौधातकि-**क्योंकि आते ही (इस वृद्धअतिथि से) वह बेचारी कपिला दो वर्ष की बछिया मडमडशब्दयुक्त की गयी (मार डाली गयी)।

**दाण्डायन-**'मांसयुक्त मधुपर्क (होना चाहिए)' इस वेद-वाक्य का अत्यन्त आदर करते हुए गृहस्थ लोग वेदज्ञ अतिथि को बछिया अथवा भारी बैल अथवा भारी बकरा (भोज्यार्थ)प्रदान करते हैं। इस धर्म का उपदेश (मन्वादि) धर्मसूत्रकार करते हैं।

**सौधातकि**-(तब तो)तुम पराजित हो गये।

**दाण्डयान-**वह कैसे?

**सौधातकि-**क्योंकि पूज्य वसिष्ठ के आने पर गवालम्भ किया गया। आज ही आये हुए राजर्षि जनक का मधुपर्क भगवान् वाल्मीकि के द्वारा (केवल) दही और मधु से ही निष्पन्न किया गया, बछिया तो मुक्त कर दी गयी (नहीं मारी गयी)।

**दाण्डयान**-मांस-भोजन का परित्याग न करने वालों के लिए ऋषि लोग ऐसी (समांस मधुपर्क) की विधि मानते हैं। पूज्य जनक जी तो मांस-भोजन से विरत हैं।

**सौधातकि**-क्या कारण है?

**दाण्डायन-**वे देवी सीता का उस प्रकार का भाग्य का दुष्परिणाम सुनकर उसी समय वानप्रस्थ हो गये और चन्द्रद्वीप तपोवन में तपस्या करते हुए इन्हें कतिपय वर्ष(हो गये हैं)।

**सौधातकि**-वहाँ से क्यों आये हैं?

**दाण्डायन-**चिरकालीन प्रियमित्र भगवान् प्राचेतस(वाल्मीकि) के दर्शनार्थ।

**सौधातकि**-क्या आज समधिनों (कौसल्या आदि)के साथ इन (जनक) का साक्षात्कार हुआ या नहीं?

**दाण्डायन-**अभी-अभी भगवान् वसिष्ठ के द्वारा देवी कौसल्या के पास भगवती अरुन्धती भेजी गयी हैं कि वे स्वयं पास जाकर जनक का साक्षात्कार करें।

**सौधातकि**-जिस तरह ये बड़े-बूढ़े परस्पर मिल गये हैं, उसी तरह हम-दोनों भी बालक ब्रह्मचारियों के साथ मिलकर खेलते हुए अनध्याय का महोत्सव मनायें।

(ऐसा कहकर दोनों घूमते हैं)

**दाण्डायन**-तो ये ब्रह्मोपदेष्टा वृद्ध राजर्षि जनक, वाल्मीकि और वसिष्ठ की आराधना करके बाहर आश्रम के वृक्ष के नीचे बैठे हुए हैं। जो ये-

हृदय में निरन्तर विद्यमान सीता निमित्तक शोक से, भीतर फैली हुई आग वाले जीर्ण वृक्ष की तरह तप रहे हैं (जल रहे हैं)।।2।। इस श्लोक में उपमा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्या-** इस अवतरण में आये हुए दो पात्रों में सौधातकि का स्वभाव परिहासप्रिय है, अतएव वसिष्ठादि के लिए उसने ‘जीर्णकूचानाम्’ का प्रयोग किया है, किन्तु उनके आने से ‘शिष्टे च गृहमागते (अनध्यायः)’ याज्ञवल्क्य की इस उक्ति के अनुसार उसे जो आज पढ़ने से छुट्टी मिल गयी, उसकी खुशी में उनका स्वागत भी करता है। किन्तु दाण्डायन गम्भीर स्वभाव का है अतः सौधातकि के परिहास का विरोध करता है।

**टिप्पणी-** उपास्य . उप + आस् + ल्यप्। तप्यते . □ तप् +लट् (यकर्मणि)। प्रसृप्त . प्र +सृप् +क्त यकर्तरि। वनस्पतिः . वनस्य पतिः सुट् का आगम यपारस्करादित्वात्‌द्ध।

(इति निष्क्रान्तौ)मिश्रविष्कम्भः

(ततः प्रविशति जनकः)

□(तदनन्तर जनक प्रवेश करते हैं )

**जनकः . अपत्ये यत्तादृग्दुरितमभवत् तेन महता**

**विषक्तस्तीव्रेण व्रणितहृदयेन व्यथयता।**

**पटुर्धारावाही नव इव चिरेणापि हि न मे**

**निकृन्तन्मर्माणि क्रकच इव मन्युर्विरमति।।3 ।।**

**अन्वय-** अपत्ये यत् तादृक् दुरितम् अभवत् महता तीव्रेण व्रणितहृदयेन व्थयता तेन विवक्त: पटु: धारावाही चिरेणापि नव इव क्रकच इव मर्माणि निकृन्तन् मे मन्यु: न विरमति।

**अर्थ** – जनक (मेरी) सन्तान (सीता) पर जो इस प्रकार का( निर्वासनरूप) व्यसन आ पड़ा उस महान दारूण हृदय को व्रणित कर देने वाले व्यसन से हृदय में उत्पन्न प्रबल निरन्तर संचरणशील इतने दीर्घकाल के बाद भी नया सा मेरा शोक आरे की तरह मर्मस्थान को चीरता हुआ सा शान्त नहीं होता है।। 3 ।।

**टिप्पणी-** दुरितम् – दुर +इ(गतौ) +क्त(नपुंसक भावे) ।निकृन्तन् – नि + कृत् (छेदने )+शतृ।

हा पुत्री !

**अनियतरूदितस्मितं विराजत्कपयकोमलदन्तकुंगमलाग्रम् ।**

**वदनकमलकं शिशो: स्मरामि स्खलदसमञ्जसमञ्जुल्पितं ते ।।4।।**

**अन्वय-** अनियतरूदितस्मितं विराजत्कतिपयकोमलदन्त कुंगमलाग्रम्  स्खलदसमञ्जसमञ्जुल्पितं शिशो: ते वदनकमलकं स्मरामि ।।4।।

**अर्थ-** हा पुत्री अनिश्चित रोदन हास वाले कोमल कलियों के अग्रभाग के समान (छोटे-छोटे)

विरल दांतो से सुशोभित तथा बिना किसी क्रम के मनोहर एवं तोतले वचन वाले तुम्हारे शैशव के समय के मुख का स्मरण करता हूँ।।4।। इसमें उपमा और स्वभावोक्ति का संकर तथा पुष्पिताग्रा छन्द है।

**टिप्पणी-** विराजत- वि+राज्+शतृ। स्खलत् – स्खल् +शतृ ।

भगवति वसुन्धरे! सत्यमति दृढासि।

**त्वं वह्निर्मुनयो वसिष्ठगृहिणी गंगा च यस्या विदु.**

**र्माहात्म्यं यदि वा रघोः कुलगुरुर्देवः स्वयं भास्करः।**

**विद्यां वागिव यामसूत भवती तद्वत्तु या दैवतं**

**तस्यास्त्वदुहितुस्तथा विशसनं किं दारुणेऽमृष्यथाः।।5 ।।**

**अन्वयः .** यस्याः माहात्म्यं त्वम् (वेद) वह्निः मुनयः वसिष्ठगृहिणी गंगा च विदुःयदि वा रघोः कुलगुरुः देवः भास्करः स्वयं (वेद) विद्यां वागिव यां भवती असूत, या तद्वत् तु दैवतम्, तस्याः त्वदुहितुः तथा विशनसनम्,दारुणे! किम् अमृष्यथाः?।।5 ।।

**अर्थ-**भगवती पृथिवी! तू निस्सन्देह अत्यन्त कठोर है। जिसके प्रभाव को तू जानती है,( वसिष्ठ, वाल्मीकि आदि) मुनि लोग, अग्नि, वसिष्ठ की पत्नी (अरुन्धती) और गंगा जानती हैं, तथा रघुकुल के आदि.पुरुष सूर्यदेव स्वयं जानते हैं। विद्या को सरस्वती के समान, जिसे आपने जन्म दिया और जो स्वयं उन देवताओं के समान ही देवता है,उसी तुम्हारी पुत्री (सीता) का इस प्रकार अपघात! हे कठोरे, भला इसे तुमने कैसे सह लिया।।5।। प्रस्तुत पद्य में उपमा और दीपक की संसृष्टि तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(नेपथ्ये)इत इतो भगवतीमहादेव्यौ।

**जनकः .** (दृष्ट्वा) अये, गृष्टिनोपदिश्यमानमार्गा भगवत्यरुन्धती। (उत्थाय) कां पुनर्महादेवीत्याहघ् (निरूप्य) हा हा कथमियं महाराजदशरथस्य धर्मदाराः प्रियसखी मे कौसल्या। क एतां प्रत्येति सैवेयमिति।

**आसीदियं दशरथस्य गृहे यथा श्रीः श्रीरेव वा किमुपमानपदेन सैषा।**

**कष्टं बतान्यदिव दैववशेन जाता दुःखात्मकं किमपि भूतमहो विपाकः।।6 ।।**

**अन्वयः** . इयं दशरथस्य गृहे श्रीः यथा आसीत्,अथवा श्रीः एव, उपमानपदेन किम् ?कष्टं बत सा एषा दैववशेन अन्यत् किमपि दुःखात्मकं भूतम् इव जाता, अहो! विपाकः।।6 ।।

☐ **अर्थ-** (नेपथ्य में) भगवती (अरुन्धती) और महादेवी (कौसल्या) इधर से(इधर से चलें)।

जनक.( देखकर) अये भगवती अरुन्धती (हैं) इन्हें दृष्टि के द्वारा मार्ग.निर्देश किया जा रहा है। (उठकर)तो किसे (महादेवी) ऐसा कह रहा है। (भली.भाँति देखकर) हाय हाय ये कैसे महाराज दशरथ की धर्मपत्नी यह दशरथ घर में लक्ष्मी की तरह थींअथवा उपमानपद (यथा)से क्या प्रयोजन, यह लक्ष्मी ही थीं। महान् कष्ट है,वही यह दैववश मानों दूसरा कोई दुःखात्मक जीव हो गयी हैं। आश्चर्य है (ऐसा)शोचनीय दशाविपर्यास (हो गया है)।।6।। इसमें उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा की संसृष्टि तथा वसन्ततिलका छन्द है। **व्याख्या-** यथा श्रीः श्रीरेव.जनक भावप्रवाह में कौसल्याजी को -लक्ष्मी के

समान कह तो गये किन्तुकौसल्या के प्रति अपने आदरभाव की अभिव्यक्ति के लिए उसे अपर्याप्त समझ कर सन्तुष्ट नहीं हो सके। तब उन्हें श्रीरेव साक्षात् लक्ष्मी ही इस रूपक का सहारा लेना पड़ा। विपाकः.पाठाú.विकारः.विकृति अर्थात् दुष्परिणाम।

□ **टिप्पणी**-उपदिश्यमानः . उप +दिश् + शानच् (कर्मणि)। प्रत्येति . प्रति +इ +लट् (तिप्)। उपमानम् . उप +मा +ल्युट् (भावे)।

□अयमपरः पापो दशाविपर्यासः।

**य एव मे जनः पूर्वमासीन्मूर्तो महोत्सवः।**
**क्षते क्षारमिवासह्यं जातं तस्यैव दर्शनम्।।7 ।।**

**अन्वयः** . य एव जनः पूर्वं मे मूर्तो महोत्सवः आसीत् तस्यैव दर्शनं क्षते क्षारमिव असह्यं जातम्।**।7 ।।**

यह दूसरा पापी दशाविपर्यास हो गया.

जो ही व्यक्ति मेरे लिए मूर्तिमान् महोत्सव था उसी का दर्शन कटे हुए पर नमक की तरह असह्य हो गया है।।7।। यहाँ पर भी रूपक और उपमा की संसृष्टि तथा अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्या-** क्षते क्षारम् (कटे पर नमक). यह लोकोक्ति बन गया है। अर्थ होता है . पीडा को जो पहले से ही असह्य है और बढ़ा देना।

**टिप्पणी-** विपर्यासः . वि +परि + अस् (क्षेपे) +घञ् । मूर्तः . □ मूर्च्छ +क्त ।

(ततः प्रविशत्यरुन्धती कौसल्या कंचुकी च) □

**अरुन्धती -** ननु ब्रवीमि द्रष्टव्यः स्वयमुपेत्यैव वैदेह इत्येष वः कुलगुरोरादेशः। अत एव चाहं प्रेषिता। तत्कोऽयं पदे पदे महाननध्यवसायः।

**कंचुकी**-देवी! संस्तभ्यात्मानमनुरुध्यस्व भगवतो वसिष्ठस्यादेशमिति विज्ञापयामि।

**कौसल्या -** ईदृशे काले मिथिलाधिपो मया द्रष्टव्य इति सममेव सर्वाणि दुःखानि समुद्भवन्ति। तस्मान्न शक्नोम्युद्वर्तमानमूलबन्धनं हृदयं पर्यवस्थापयितुम्।

**अरुन्धती-** अत्र कः सन्देहः ?

**सन्तानवाहीन्यपि मानुषाणां दुःखानि सम्बन्धिवियोगजानि।**

**दृष्टे जने प्रेयसि दुःसहानि स्रोतः सहस्रैरिव सम्प्लवन्ते।।8 ।।**

**अन्वयः** . मानुषाणां सम्बन्धिवियोगजानि दुःखानि सन्तानवाहीन्यपि प्रेयसि जने दृष्टे दुःसहानि (सन्ति) स्रोतः सहस्रैरिव सम्प्लवन्ते।**।8 ।।**

**अर्थ** -(तदनन्तर अरुन्धती, कौसल्या और कंचुकी प्रवेश करते हैं)

**अरुन्धती**.-अरे मैं कह रही हूँ स्वयं जाकर ही विदेहाधिपति जनक को देखना चाहिए ऐसा यह तुम्हारे कुलगुरु (वसिष्ठ)का आदेश है और इसीलिए मैं भेजी गयी हूँ तो पग.पग पर यह कैसा अनुत्साह (हिचकिचाहट)

**कंचुकी**-.हे देवि! अपने आपको व्यवस्थित करके भगवान् वसिष्ठ के आदेश का पालन करो यह मेरा निवेदन है।

**कौसल्या**-.ऐसे समय में मिथिलाधिपति (जनक) से मुझे मिलना है अतः एक ही साथ सभी दुःख उत्पन्न हो रहे हैं। इसलिए उखड़ते हुए मूलबन्धन वाले हृदय को प्रकृतिस्थ नहीं कर सकती।

**अरुन्धती.**-इसमें क्या सन्देह।

लोगों के सम्बन्धियों के वियोग से उत्पन्न दुःख सतत प्रवाहमान (अर्थात् अनुभूयमान) होते हुए भी प्रियजन के देखे जाने पर दुःसह होते हुए मानो हजारों धाराओं से उमड़ कर बहने लगते हैं।**।8।।** इसमें उत्प्रेक्षा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

□**व्याख्या-**

महाननध्यवसायः.पाठा.महानध्यवसायः. रामचन्द्र द्वारा सीता.निर्वासन किये जाने से लज्जावश कौसल्या को जनक के सामने जाने में पगपग पर हिचकिचाहट हो रही है, जो स्वाभाविक ही है।

सन्तानवाहीन्यपि.अविच्छिन्न भाव से बहते रहने से दुःख का वेग शिथिल पड़ जाता है और वह चिरानुभूयमान दुःख सह्य हो जाता हैए फिर भी उसे दुःसह तथा सहस्रों प्रवाहों से बहने वाला कहा गया है,अतः विरोधभास अलंकार है।

□ **टिप्पणी -** पर्यवस्थापयितुम् . परि + अव + स्था +णिच् + तुमुन् (धातु के पुक् का आगम)। सन्तानवाहीनि . सन्तानेन वहन्ति,तच्छीलानि। ताच्छील्ये णिनिः। □

**कौसल्या -** कथं नु खलु वत्साया वध्वा एवं गते तस्य राजर्षेर्मुखं दर्शयामः ?

**अरुन्धती- . एष वः श्लाघ्यसम्बन्धी जनकानां कुलोद्वहः।**

**याज्ञवल्क्यो मुनिर्यस्मै ब्रह्मापरायणं जगौ।।9 ।।**

अन्वयःएषः वःश्लाघ्यसम्बन्धी जनकानां कुलोद्वहः, यस्मै मुनिः याज्ञवल्क्यः ब्रह्मपारायणं जगौ।।9 ।।

□**अर्थ- कौसल्या-**.वात्सल्यभागिनी बहू (सीता) के ऐसा होने पर उन राजर्षि (जनक) को कैसे मुँह दिखावें।

**अरुन्धती-.**ये तुम्हारे प्रशंसनीय समधी जनकवंशियों के कुल में श्रेष्ठ हैं, जिन्हें याज्ञवल्क्य मुनि ने उपनिषत् सहित समग्र वेद का उपदेश दिया है।।9।। इस पद्य में स्मृति अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

□**व्याख्या**-याज्ञवल्क्यः.याज्ञवल्क्य मुनि को बृहदारण्यकोपनिषद् में कई स्थलों पर जनक का उपदेष्टा कहा गया है। ये शुक्लयजुर्वेद के प्रधान ऋषि हैं। कहा जाता है कि याज्ञवल्क्यसंहिता इन्हीं का रचित धर्मग्रन्थ है।

ब्रह्मपारायण.यों तो पारायण का सामान्य अर्थ है . पार जाना ,पूरा पढ़ना, आद्योपान्त अध्ययन आदि। किन्तु पारायण शब्द का प्रयोग किसी वस्तु की समष्टि के अर्थ में भी होता है,यथा . मन्त्रापारायण। इस प्रकार ब्रह्मपारायण का वेदसमष्टि.समग्र वेद (ब्रह्मवेद) अर्थ मानना समीचीन है। उपनिषदों का भी वेद में अन्तर्भाव है।

□**टिप्पणी** - गते . □ गम् + क्त (नपुसंक भावे)।दर्शयामः -□ दृश् +णिच् + लट् (मस्)। श्लाघ्यः . □ श्लाघ् + ण्यत्।

**कौसल्या -** एष स महाराजस्य हृदयानन्दो वत्साया वध्वाः पिता राजर्षि:। स्मारितास्मि

अनिर्वेदरमणीयान् दिवसान्। हा दैव! सर्वं तन्नास्ति।

**जनक** – (उपसृत्य) भगवत्यरुन्धति! वैदेहः सीरध्वजोऽभिवादयते।

**यया पूतम्मन्यो निधिरपि पवित्रस्य महसः**

**पतिस्ते पूर्वेषामपि खलु गुरूणां गुरुतमः।**

**त्रिलोकीमंगल्यामवनितललीनेन शिरसा।**

**जगद्वन्द्यां देवीमुषसमिव वन्दे भगवतीम्।।10 ।।**

**अन्वयः** -पवित्रस्य महसः निधिरपि, पूर्वेषां गुरूणां गुरुतमोक्ष्पि ते पतिः यया पूतम्मन्यः खलु त्रिलोकीमंगल्यां जगद्वन्द्यां देवीम् उषसमिव भगवतीम् अवनितललीनेन शिरसा वन्दे।।**10** ।।

□**अर्थ-कौसल्या**-.ये वे (ही) महाराज (दशरथ) के हृदय को आनन्द देने वाले वत्सा वधू (सीता) के पिता राजर्षि (जनक) हैं। हाधिक्! हाधिक्! (इनके दर्शन से)मुझे उन अवसाद सहित रमणीय दिनों की याद करा दी गयी। हाय दैव! वह सब कुछ (अब) नहीं है।

**जनक**-(समीप जाकर) हे भगवति अरुन्धति! विदेहराज सीरध्वज अभिवादन करता है।

पवित्र तेज का आधार भी, पूर्व गुरुओं का पूज्यतम भी तुम्हारा पति जिससे अपने को पवित्र मानता है, उषा देवी के समान तीनों लोकों का मंगल करने वाली तथा जगत् की वन्दनीय तुझ भगवती को भूतल पर रखे हुए शिर से प्रणाम करता हूँ।।**10**।। यहाँ पर उमा अलंकार तथा शिखरिणी छन्द है।

☐ **व्याख्या- सीरध्वजः**.जनक के हल चलाने पर सीता जी उत्पन्न हुई थीं। अतः ये सीरध्वज कहलाते हैं। कुछ लोगों का मत है कि सीर (हल) जनकवंशी राजाओं का चिह्न था। उनके झण्डे पर सीर का चिह्न बना होता था।

देवीमुषसम्.यहाँ उषस् शब्द प्रातरधिष्ठातृदेवता के अर्थ में है, अतःस्त्रीलिंग है। उषः काल का बोधक होने पर नपुंसक लिंग होता है।

☐ **टिप्पणी-** स्मारिता-☐ स्मृ + णिच् +क्त (गौणे कर्मणि)+ टाप्। । त्रिलोकी - त्रयां लोकानां

समाहारः त्रिलोकी।

**अरुन्धती-** . परं ते ज्योतिः प्रकाशताम्। अयं त्वां पुनातु देवः परोरजा य एष तपति।

**जनकः -** आर्य गृष्टे! अप्यनामयमस्याः प्रजापालकस्य मातुः ?

**कंचुकी** – (स्वगतम्) निरवशेषमतिनिष्ठुरमुपालब्धः स्मः। (प्रकाशम्)राजर्षे! अनेनैव मन्युना चिरपरित्यक्तरामभद्रमुखचन्ददर्शनां नार्हसि दुःखयितुमतिदुःखितां देवीम्। रामभद्रस्यापि दैवदुर्योगः कोऽपि यत्किल समन्ततः प्रवृत्तबीभत्सकिंवदन्तीकाः पौरजानपदा नाग्निशुद्धि मनल्पकाः प्रतियन्तीति दारुणमनुष्ठितं देवेन।

**जनकः-(**सरोषम्) आः! कोऽयमग्निर्नामास्मत्प्रसूतिपरिशोधने। कष्टमेवं वादिना जनेन रामभद्रपरिभूता अपि वयं पुनः परिभूयामहे।

**अरुन्धती-** . (निःश्वस्य) एवमेतत्। अग्निरति वत्सां प्रति परिलघून्यक्षराणि। सीतेत्येव पर्याप्तम्। हा वत्से!

**शिशुर्वा शिष्या वा यदसि मम तत्तिष्ठतु तथा**

**विशुद्धेरुत्कर्षस्त्वयि तु मम भक्तिं द्रढयति।**

**शिशुत्वं स्त्रैणं वा भवतु ननु वन्द्यासि जगतां**

**गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः।।11 ।।**

**अन्वयः -** मम शिशुर्वा शिष्या वा यदसि तत् यथा तिष्ठतु। विशुद्धे उत्कर्षः तु त्वयि मम भक्तिं द्रढयति। शिशुत्वं स्त्रैणं वा भवतु, ननु जगतां वन्द्या असि। गुणिषु गुणाः पूजास्थानं न च लिंगं न च वयः।।**11 ।।**

**अर्थ- अरुन्धती-**.तुम्हें परमज्योति (ब्रह्म)अवभासित हो। यह रजोगुण से परे स्थित देव (सविता) तुम्हें पवित्र करे, जो यह तपता है (प्रकाश देता है)।

**जनक-**हे आर्य गृष्टि! प्रजापालक की इन माता का आरोग्य तो है ।

**कंचुकी-**(स्वगत) हम लोगों को पूरी तरह और अत्यन्त कठोरतापूर्वक उलाहना दिया गया। (प्रकाश) राजर्षे! इसी शोक के कारण महारानी ने बहुत समय से रामभद्र के मुख.चन्द्र का देखना छोड़ दिया है अति दुःखित उनको दुःखी करना आपके लिए उचित नहीं है। रामभद्र का भी निश्चय ही कोई भाग्य का बुरा संयोग था कि पुरवासियों और जनपदवासियों के द्वारा घृणित किंवदन्ती फैल गयी और उन तुच्छ हृदय वालों को अग्निशुद्धि पर भी विश्वास नहीं है, इसी कारण महाराज के द्वारा (ऐसा)भीषण कर्म किया गया।

**जनक-**(क्रोध् सहित) आः! हमारी सन्तान की परिशुद्धि के विषय में यह अग्नि नाम का कौन है। कष्ट की बात है, ऐसा कहने वाले व्यक्ति के द्वारा राम से अपमानित होकर भी हम पुनः अपमानित किये जा रहे हैं।

**अरुन्धती-** ( लम्बी साँस लेकर)यही बात है। पुत्री (सीता) के सम्बन्ध में अग्नि ये अक्षर अत्यन्त स्वल्प हैं। (पावनता के विषय में) सीता यही पर्याप्त है। हा पुत्री!

तुम बालिका अथवा शिष्या जो भी तुम मेरी हो वह (सम्बन्ध) वैसा ही रहे। किन्तु निर्दोषता का जो आधिक्य है, वह तुममें मेरी भक्ति को दृढ़ करता है। तुममें बालभाव हो या स्त्रीभाव, तुम संसार की वन्दनीया हो। गुणियों में गुण ही पूजा के कारण होते हैं, स्त्रीत्व,पुंस्त्वादि और वृद्धत्वादि अवस्था नहीं।**।11।।** यहाँ पर अर्थान्तरन्यास अलंकार तथा शिखरिणी छन्द है।

**व्याख्या-**प्रजापालकस्य मातुः.यह जनक का ताना भरा शब्द है। राम प्रजापालक हैं,पत्नीपालक नहीं। ऐसे पुत्र की जन्मदात्री होने के नाते कौसल्या की भी निन्दा द्योतित हो रही है।

कोऽप्यमग्निपरिशोधनेजनक का अभिप्राय है कि सीता जी पवित्रतम हैं। उनके विषय में अग्निशुद्धि की बात करना यह उनका अपमान है।

**टिप्पणी-**उपालब्धः . उप +आ + लभ् +क्त ।परिभूताः -परि + भू + क्त (कर्मणि)। परिभूयामहे - परि +भू +कर्मणि लट् (महिङ्)। शिष्या - शास् + क्यप् + टाप्।

**कौसल्या -** (इति मूर्च्छन्ति) अहो! उन्मीलन्ति वेदनाः।

**जनकः** -हा कष्टं,किमेतत् ?

**अरुन्धती-.** राजर्षे! किमन्यत् ?

**स राजा तत्सौख्यं स च शिशुजनस्ते च दिवसाः**

**स्मृताविर्भूतं त्वयि सुहृदि दृष्टे तदखिलम्।**

**विपाके घोरेऽस्मिन्नथ खलु विमूढा तव सखी**

**पुरन्ध्रीणां चित्तं कुसुमसुकुमारं हि भवति।।12 ।।**

**अन्वयः**-स राजा, तत् सौख्यम्, स च शिशुजनःएते च दिवसाः, सुहृदि त्वयि दृष्टे तत् अखिलम् आविभूर्तम्। अथ अस्मिन् घोरे विपाके तव सखी विमूढा खलु। पुरन्ध्रीणां चित्तं कुसुमकुमारं भवति हि।।12 ।।

**अर्थ- कौसल्या**-अहो! वेदनाएँ पैदा हो रही हैं (ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाती है)।

**जनक**-हाय, शोक है। यह क्या हो गया ?

**अरुन्धती-** .हे राजर्षि! और क्या होता ?

वे राजा यदशरथ, वह सुख,वह बालसमुदाय और वे दिन,वह सभी तुझ प्रिय सुहृद् को देख कर स्मृतिपथ में आ गया। इसके बाद इस भयंकर दशाविपर्यास में तुम्हारी सखी मूर्च्छित हो गयी है, क्योंकि कुलांगनाओं का चित पुष्प के समान सुकुमार होता है।।12।। प्रस्तुत पद्य में समुच्चय और उपमा का संकर तथा शिखरिणी छन्द है।

☐ **व्याख्या-** इस पद्य में कुलांगनाओं का चित्त पुष्प के समान कोमल होता है इस सामान्य अर्थ के द्वारा साधर्म्य के आधार पर कौसल्या के चित्त की पुष्पसुकुमारता रूप विशेष अर्थ का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यासअलंकार है तथा कौसल्या के विमूढ़ होने में साधक रूप से राजा का स्मरण रूप एक कारण पर्याप्त होने पर भी खले कपोतिकान्यायेन सुखादि अन्य कारणों का भी साधक रूप में समावेश होने से समुच्चयअलंकार है और कुसुमसुकुमारम् के द्वारा कुसुम के साथ चित्त की समता का कथन होने से लुप्तोपमा अलंकार है। ये तीनों अलंकार परस्पर सापेक्ष हैं अतएव संकर हुआ।

☐ **टिप्पणी**-विमूढा . वि + मुह् +क्त+ टाप्।

**जनकः -** हन्त! हन्त! सर्वथा नृशंसोऽस्मि्। यश्चिरस्य दृष्टान् प्रियसुहृदः प्रियान् दारान्न स्निग्धं पश्यमि।

**स सम्बन्धी श्लाघ्यः प्रियसुहृदसौ तच्च हृदयं**
**स चानन्दः साक्षादपि च निखिलं जीवितफलम्।**
**शरीरं जीवो वा यदधिकमतोऽन्यत्प्रियतरं**
**महाराजः श्रीमान् किमिद मम नासीद् दशरथः।।13 ।।**

**अन्वयः -** सः श्लाघ्यः सम्बन्धी, असौ प्रियसुहृद्,तच्च हृदयम्,स च साक्षादानन्दः,अपि च निखिलं जीवितफलम् शरीरं जीवः वा अतोक्ष्धिकं प्रियतरं यत् अन्यत् (,तदपि),श्रीमान् महाराजः दशरथः मम किमिव न आसीत्।।13 ।।

**अर्थ- जनक.**-खेद! खेद! मैं सब प्रकार से क्रूर हूँए जो बहुत दिनों वेफ बाद दीख पड़ी प्रिय सुहृत् यदशरथद्ध की प्रिय पत्नी को स्नेह भाव से नहीं देखता हूँ।

वे मेरे प्रशस्य समधी थे, वे मेरे हृदय थे, वे मूर्तिमान् आनन्द थे, वे मेरे जीवन के फल थे, वे मेरे शरीर थे, जीवात्मा थे, इससे भी अधिक प्यारा जो कुछ और हो सकता है, वह भी थे। श्रीमान् महाराज दशरथ मेरे क्या नहीं थे **?।।13।।** इसमें काव्यलिंग, रूपक तथा अर्थापत्ति का संकर तथा शिखरिणी छन्द है।

**व्याख्या-** इस पद्य से जनक और दशरथ की घनिष्ठ मित्रता पर प्रकाश डाला गया है। इससे पता चलता है कि दोनों कितने अभिन्न हृदय थे।

**टिप्पणी-** सुहृद्- शोभनं हृदयं यस्य स सुहृद्, हृदय को हृद् आदेश। । जीवितम् . □ जीव्+क्त(नंपुसकभावे)।

कष्टमियमेव सा कौसल्या

**यदस्याः पत्युर्वा रहसि परमं दूषितमभू.**

**दभूवं दम्पत्योः पृथगहमुपालम्भविषयः।**

**प्रसादे कोपे वा तदनु मदधीनो विधिरभू.**

**दलं वा तत्स्मृत्वा दहति यदवस्कन्द्य हृदयम्।।14 ।।**

**अन्वयः -** अस्याः पत्युः वा रहसि यत् परमं दूषितम् अभूत् (तत्रा) दम्पत्योः पृथक् उपालम्भविषयः (अहमेव) अभूवम्। तदनु प्रसादे कोपे वा विधि: मदधीन: अभूत्, वा तत्स्मृत्वा अलम्,यद् हृदयम् अवस्कन्द्य दहति।**।14 ।।**

**अर्थ-**कष्ट है,यही वह कौसल्या है.

इसका अथवा इसके पति का एकान्त में जो भारी प्रणयापराध होता था (उसके विषय में)पति.पत्नी दोनों के अलग.अलग उपालम्भ का पात्र मैं ही होता था। उसके बाद प्रसन्न करने अथवा कुपित करने में व्यवस्था मेरे अधीन थी। अथवा उस बीती बात को याद करना बेकार है,जो हृदय को आक्रान्त कर जलाती है**।।14।।** इसमें असंगति अलंकार तथा शिखरिणी वृत्त है।

**टिप्पणी-**दम्पत्योः . जाया च पतिश्चेति दम्पती,तयोः। अवस्कन्द्य.अव + स्कन्द् +ल्यप्।

**अरुन्धती-**हा कष्टम्! अतिचिरनिरुद्धनिःश्वासनिष्पन्दं हृदयमस्याः।

**जनकः -** हा प्रियसखि! (इति कमण्डलूदकेन सिञ्चति )

**कंचुकी-** **सुहृदिव प्रकटव्य सुखप्रदः प्रथममेकरसामनुकूलताम्।**

**पुनरकाण्डविवर्तनदारुणो विधिरहो विशिनष्टि मनोरुजम्।।15 ।।**

**अन्वयः** -अहो विधि: प्रथमं सुहृदिव एकरसाम् अनुकूलतां प्रकटव्य सुखप्रदः (सन्) पुनः अकाण्डविवर्तनदारुणः (सन्) मनोरुजं विशिनष्टि।।15 ।।

**अर्थ-अरुन्धती-** .हाय कष्ट है। बहुत समय तक रुके हुए श्वास के कारण इसका हृदय निष्पन्द (निश्चल) है।

**जनक**.- हाय प्रियसखी! (ऐसा कहकर कमण्डलु के जल से सींचते हैं)

**कंचुकी-**अहो! विधाता मित्र के समान पहले एकरस अनुकूलता प्रकट कर सुखप्रद (होता हुआ) पुनः असमय में परिवर्तन के कारण कठोर (होता हुआ) मनोव्यथा को बढ़ाता है।**।15।।** यहाँ पर्याय एवं उपमा का संकर तथा द्रुतविलम्बित छन्द है।

**टिप्पणी-** प्रकटव्य- प्र +कट् +णिच् +ल्यप्। अनुकूलताम् . अनुकूलस्य भावः,अनुकूल +तल् + टाप्। विवर्तनम् . वि +वृत् +ल्युट्।

**इति महाकवि भवभूति विरचित उत्तररामचरिते कौशल्या.जनकयोगो नाम चतुर्थो अंकस्य। पूर्वार्ध ।।**

## अभ्यास प्रश्न 1.

निम्नलिखित पद्यों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

(क) शिशुर्वा शिष्या................न च लिंगंन च वयः।।

(ख) स राजा वत्सौख्यं...............कुसुमसुकुमारं हि भवति।।

## अभ्यास प्रश्न 2.

निम्नलिखित पद्यों का अनुवाद कीजिए।

(क) सन्तानवाहीन्यपि...................सम्प्लवन्ते।।

(ख) अनियतरुदितस्मितं..........जल्पितं ते।।

(ग) यया पूतम्मन्यो.............वन्दे भगवतीम्।।

## 3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1 एवं 2 के उत्तर इकाई में देखिये ।

## 3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1.उत्तररामचरितम् (भवभूति), एमúआरú काले (वीरराघवकृत टीका)मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1962

2.उत्तररामचरितम् (भवभूति), स्वरूप आनंद एवं जनार्दन शास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1977

3.उत्तररामचरितम् (भवभूति), ब्रह्मानन्द शुक्ल, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1987

## 3.8 सहायक व उपयोगी पुस्तकें:-

1.भवभूति और उनकी नाट्यकला, अयोध्या प्रसाद सिंह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1988

2.भवभूति ग्रन्थावली, राम प्रताप त्रिपाठी शास्त्री लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973

3.भवभूति के नाटक, ब्रज वल्लभ शर्मा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1973

## 3.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. उत्तररामचरितम् के चतुर्थ अंक के पूर्वार्द्ध का सारांश लिखिये।

2. सीता निर्वासन से दु:खित जनक की दशा का वर्णन कीजिये।

# इकाई 4 - उत्तररामचरितम् चतुर्थ अंक का उत्तरार्द्ध

इकाई की रूपरेखा:


4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 16 से 29 तक (मूलपाठ अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी )
4.4 सारांश
4.5 शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 सहायक ग्रन्थ
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

## 4.1 प्रस्तावना:-

उत्तररामचरितम् के तृतीय खण्ड की यह अन्तिम इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने जाना कि बाल्मीकि के आश्रम में कौशल्या अरून्धती और गृष्टि नामक कंचुकी के साथ जनक से भेंट करती हैं इसलिए इस अंक का नाम 'कौसल्या-जनक योग' रखा गया।

प्रस्तुत इकाई में उत्तररामचरितम् के चतुर्थ अंक के उत्तरार्द्ध में वाल्मीकि के आश्रम परिसर में अश्वमेध् यज्ञ के घोड़े का आगमन होता है। लव को घोड़ा दिखलाने के लिए बच्चे खींच ले जाते हैं। लव-अश्वरक्षक वीरों की घोषणा न सहन कर पाने के कारण बच्चों से कहता है कि अश्व को ढेलों से मारते हुए आश्रम में ले चलो, यह बेचारा मृगों के बीच में चरेगा। अन्य बच्चे सैनिकों को देखकर भाग जाते हैं, परन्तु लव शस्त्र लेकर खड़ा हो जाता है। इसके अतिरिक्त अश्व की रक्षा में संलग्न चन्द्रकेतु तथा वाल्मीकि के काव्यादि की चर्चा की गई है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता पायेगें कि बाल्मीकि के आश्रम में जनक, वशिष्ठ और कौशल्यादि का आगमन होता है। लव को देखकर सभी को उसके सीता पुत्र होने की सम्भावना होती है।

## 4.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- बता पायेंगे कि इस अंक का नाम कौशल्या-जनक योग क्यों पड़ा।
- श्लोकों मे प्रयुक्त छन्द एवं अलंकार को समझा पायेगें।
- राम की माताओं का बाल्मीकि के आश्रम में आने का कारण समझा पायेगें।
- राजा जनक के दु:ख का वर्णन कर सकेंगे।

## 4.3 उत्तररामचरितम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 16 से 29 तक (मूलपाठ अर्थ व्याख्या एवं टिप्पणी)

**कौसल्या** - हा वत्से जानकि! कुत्रासि? स्मरामि ते नवविवाहलक्ष्मीपरिग्रहैकमण्डनं प्रस्फुरच्छुद्धविहसितं मुग्धमुखपुण्डरीकम्। आस्फुरच्चन्द्रचन्द्रिकासुन्दरैरङ्गैः पुनरपि मे जाते उद्योतयोत्संगम्। सर्वदा महाराजो भणति एषा रघुकुलमहत्तराणां वधूरस्माकं तु जनकसुता दुहितैव।
**कंचुकी** - यथाह देवी -

**पंचप्रसूतेरपि तस्य राज्ञः प्रियो विशेषेण सुबाहुशत्रुः।**
**वधूचतुष्केऽपि यथैव शान्ता, प्रियातनूजास्य तथैव सीता।।16 ।।**

**अन्वयः -** पंचप्रसूतेः अपि तस्य राज्ञः सुबाहुशत्रु: विशेषेण प्रियः, वधूचतुष्केऽपि यथैव अस्य तनूजा शान्ता प्रिया तथैव सीता ।।16 ।।

☐ **अर्थ-कौसल्या-(**चेतना प्राप्त कर) हा पुत्रि जानकि! तुम कहाँ हो? तुम्हारे नये विवाह की शोभा का धारण रूप प्रधान भूषण वाले, खिलते हुए नैसर्गिक हास से युक्त, सुन्दर भोले-भाले मुखकमल को याद करती हूँ। हे पुत्रि! चारों ओर प्रकाशमान् चन्द्रमा की चाँदनी के समान सुन्दर अंगों से मेरी गोद को पुनः भी प्रकाशित करो। महाराज (दशरथ) सदा कहा करते थे कि यह जनकपुत्री रघुकुल के(अन्य) बड़े-बूढ़ों के लिए बहू है, किन्तु हमारी पुत्री ही है।

**कंचुकी**-देवी जैसा कहती हैं (वैसा ही है)।

पाँच सन्तानों वाले भी राजा (दशरथ) को सुबाहुशत्रु (राम) विशेष रूप से प्यारे (थे), चारों बहुओं में भी सीता उन्हें वैसी ही प्यारी (थी) जैसी पुत्री शान्ता।।16।।

इसमें उपमा अलंकार तथा उपजाति छन्द है।

☐ **व्याख्या-**पंचप्रसूतेः-राजा दशरथ के रामादि चार पुत्रों केअतिरिक्त शान्ता नामक ज्येष्ठ कन्या भी थी, जिसे लोमपाद राजा ने गोद ले लिया था तथा जिनका विवाह ऋष्यश्रृंग से हुआ था। इसलिए वहाँ राजा दशरथ को पंचप्रसूति (पाँच सन्तानों वाला) कहा गया है।

☐**टिप्पणी-** परिग्रहः - परि +ग्रह् +अप्। प्रस्फुरत् - प्र +स्फुर + शतृ। उद्योतय - उद् +द्युत् + णिच् + लोट् (सिप्)। प्रसूतिः - प्र +सू (प्राणिगर्भविमोचने) +क्तिन्।

**जनकः -** हा प्रियसखा महाराज दशरथ! एवमसि सर्वप्रकारहृदयंगमः, कथं विस्मर्यसे?

**कन्यायाः किल पूजयन्ति पितरो जामातु राप्तं जनं**

**सम्बन्धे विपरीतमेव तदभूदाराधनं ते मयि।**

**त्वं कालेन तथाविधेऽस्यपहृतः सम्बन्धबीजं च तद्**

**घोरेऽस्मिन् मम जीवलोकनरके पापस्य धिग्जीवितम् ।। 17।।**

**अन्वयः -** कन्यायाः पितरः जामातुः आप्तं जनं पूजयन्ति, किल, सम्बन्धे मयि ते तत् आराधनं विपरीतमेव अभूत्। तथाविधः त्वं कालेन अपहृतः, तत् सम्बन्धबीजं च (अपहृतम्) घोरे अस्मिन् जीवलोकनरके पापस्य मम जीवितं धिक्।। **17 ।।**

☐ **अर्थ-जनक-**हा प्रियसुहृद् महाराज दशरथ! इस प्रकार आप सर्वात्मना मेरे हृदय में बसने वाले (प्रिय) हो गये हैं। आप कैसे भुलाये जा सकते हैं ?(सामान्यतः लोक की प्रसिद्ध रीति है) कन्या के पिता आदि लोग जामाता के आत्मीय जनों का सम्मान करते हैं, परन्तु हम दोनों का सम्बन्ध हो जाने पर मेरे विषय में आपका वह सम्मान (इस लोकव्यवहार के सर्वथा) विपरीत था (मैं आपका सम्मान करूँ, इसके स्थान में आप ही मेरा स्वागत-सत्कार करते थे) किन्तु ऐसे आप सज्जन काल के द्वारा (हमसे) छीन लिये गए और सम्बन्ध का मूल कारण (सीता) को भी छीन लिया गया। अब इस दारुण संसार रूपी नरक में मुझ पापी के जीवन को धिक्कार है ।।17।।

प्रस्तुत पद्य में उपमा अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

☐**टिप्पणी-** विस्मर्यसे - वि + स्मृ + लट् (कर्मणि)।

**कौसल्या -** जाते जानकि! किं करोमि? दृढ़वज्रलेपघटितबन्धिनश्चलं हतजीवितं मां मन्दभागिनीं न परित्यजति।

**अरुन्धती -** आश्वसिहि राजपुत्रि! बाष्पविश्रामोऽप्यन्तरे कर्तव्य एव। अन्यच्च किं न स्मरसि यदवोचदृष्यश्रृंगाश्रमे युष्माकं कुलगुरुर्भवतिव्यं तथेत्युपजातमेव किन्तु कल्याणोदर्कं भविष्यतीति।

**कौसल्या -** कुतोऽतिक्रान्तमनोरथाया ममैतत्?

**अरुन्धती-** तत्किं मन्यसे राजपत्नि! मृषोद्यं तदिति? न हीदं सुक्षत्रियेऽन्यथा मन्तव्यम्। भवितव्यमेव तेन।

**आविर्भूतज्योतिषां ब्राह्मणानां ये व्याहारास्तेषु संशयो मा भूत्।**

**भद्रा ह्येषां वाचि लक्ष्मीर्निषक्ता नैते वाचं विप्लुतार्थां वदन्ति।।18 ।।**

**अन्वयः -** आविर्भूतज्योतिषां ब्राह्मणानां ये व्याहाराः तेषु संशयो मा भूत्। हि एषां वाचि भद्रा लक्ष्मीः निषक्ता। एते विप्लुतार्थां वाचां न वदन्ति।**।18।।**

☐ **अर्थ- कौसल्या-**हे बच्ची जानकी! क्या करूँ? कड़े वज्रलेप से रचित बन्धन वाला निश्चल (मेरा) निगोड़ा जीवन मुझ अभागिन को नहीं छोड़ रहा है।

**अरुन्धती-**हे राजपुत्री! धैर्य धारण करो। बीच में आँसुओं को रोकना भी चाहिए। और भी क्या स्मरण नहीं करती हो जो कि तुम्हारे कुलगुरु (वसिष्ठ) ने ऋष्यश्रृंग के आश्रम में कहा था - 'जो होना था, वैसा हो ही गया, किन्तु भविष्य में इसका परिणाम मंगलमय होगा।

**कौशल्या-**(सीता दर्शन रूप) मनोरथ के नष्ट हो जाने पर मेरे लिए यह कैसे सम्भव है?

**अरुन्धती-** हे राजपुत्नी! तो क्या यह मानती हो कि यह मिथ्यावचन है? हे सुक्षत्रिये! इसे झूठ न समझना चाहिए, उसे तो होना ही है (वह होकर ही रहेगा)।

जिन्हें ब्रह्म का प्रकाश प्रकट हो चुका है, ऐसे तत्त्वदर्शी ब्राह्मणों के जो वचन हैं, उनमें तुम (कौसल्या) को सन्देह नहीं करना चाहिए। इनके वचन में मंगलस्वरूपा सिद्धि(लक्ष्मी) नित्य सन्निहित होती है। ये अयथार्थ वचन नहीं बोलते हैं।।18।। इसमें अर्थान्तरन्यास अलंकार तथा शालिनी छन्द है।

□**व्याख्या-**विप्लुतार्थाम्-विप्लुत का अर्थ होता है - इधर-उधर बहा हुआ, डूबा हुआ, निमग्न, बाढ़-ग्रस्त। अतः यहाँ अर्थ है - मिथ्या, झूठ, अयथार्थ।

□**टिप्पणी-** उदर्कः - उदर्क्यते, उदर्च्यते वा, उद्च्यते वा इति उदर्कः।

व्याहाराः - वि + आ +हृ+घञ् । संशयः - सम् +शी + अच्। निषक्त - नि +सञ्ज् +क्त ।

विप्लुतः - वि +प्लु + क्त।

(नेपथ्ये कलकलः। सर्वे आकर्णयन्ति)

**जनकः -** अये! अद्य खलु शिष्टानध्यायः इत्युद्धतं खेलतां वटूनां कलकलः।

**कौसल्या** – (निरुप्य) सुलभसौख्यं तावद् बालत्वं भवति। अहो! एतेषां मध्ये क एष रामभद्रस्य कौमारलक्ष्मीसदृशैः सावष्टम्भैर्मुग्धललितैरंगैरस्माकं लोचनानि शीतलयति।

**अरुन्धती** – (अपवार्य सहर्षबाष्पम्) इदं नाम तद् भागीरथीनिवेदितरहस्यं कर्णामृतम् । न त्वेवं विप्रः कतरोऽयमायुष्मतोः कुशलवयोरिति। (प्रकाशम्) -

**कुवलय दलस्निग्धश्यामः शिखण्डकमण्डनो**

**वटुपरिषदं पुण्यश्रीकः श्रियेव सभाजयन्।**

**पुनरपि शिशुर्भूतो वत्सः स मे रघुनन्दनो**

**झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृताञ्जनम्।।19 ।।**

**अन्वयः -** कुबलयदलस्निग्धश्यामः, शिखण्डकमण्डनः, पुण्यश्रीकः, श्रिया वटुपरिषदं सभाजयन्निव, स मे वत्सः रघुनन्दनः पुनरपि शिशुर्भूतः (एवं प्रतीयमानः) अयं कः (यः) दृष्टः (सन्) झटिति दृशोः अमृताञ्जनं कुरुते।।**19 ।।**

□ **अर्थ-** (नेपथ्य में कोलाहल होता है सब सुनते हैं)

**जनक**-अरे! आज निश्चय ही शिष्टजनों के आ जाने से (आश्रम में) अनध्याय है, अतः अनियन्त्रित भाव से खेलते हुए ब्रह्मचारियों का कोलाहल हो रहा है।

**कौसल्या-**बचपन वास्तव में सुलभ सुखवाला होता है। (भली-भाँति देखकर)

आश्चर्य है, इनके बीच में यह कौन (बटु) है, जो रामभद्र के शैशवकालीन सुषमा के समान प्रतीत होने वाले, सुगठित, मनोज्ञ एवं सुकुमार अंगो से हमारे नेत्रों को शीतल करता है।

**अरुन्धती-(**छिपा कर, हर्षाश्रु के साथ) कानों के लिए अमृतरूप गंगा द्वारा कहा हुआ वह

रहस्य सभवतः यही है। किन्तु हम यह नहीं जानतीं कि चिरंजीव कुश और लव में यह कौन-सा है।

(प्रकाश) नीलकमलदल के समान कोमल और साँवला, काकपक्ष से भूषित, पवित्र शोभा वाला, शोभा से बटुओं की परिषद् को अलंकृत करता हुआ-सा तथा वह मेरा वत्स रघुनन्दन (राम) पुनः बालक हो गया है (ऐसा प्रतीत होता हुआ) यह कौन दिखलायी देता हुआ सहसा नेत्रों में अमृताञ्जन कर रहा है।।**19**।। यहाँ पर उपमा, उत्प्रेक्षा की संसृष्टि तथा हरिणी छन्द है।

□ **व्याख्या-**सावष्टम्भैः-अवष्टम्भ का अर्थ होता है - शरीर के अवयवों की विशेष ढंग से हुई संरचना ;'अवष्टम्भस्तु संस्थानविशेषे गर्वतोषयोः')। अवष्टम्भेन सह इति सावष्टम्भानि तैः, अर्थात् सुगठित, उत्कृष्ट, शानदार।

अपवार्य-किसी के प्रति गोपनीय समझ कर, उससे अन्यत्र हट कर उसकी ओर पीठ करके, दूसरे पात्र-विशेष के किसी रहस्य का प्रकाशन किया जाता है, उसे 'अपवारित' कहते हैं। दर्पणकार के शब्दों में - 'तद्भवेदपवारितम्। रहस्यं तु यदन्यस्य परावृत्य प्रकाशते'।। (6/138)।

निवेदितरहस्यम्-मालूम होता है कि गंगाजी ने अरुन्धती से सीताजी के जीवित रहने तथा कुश और लव के पैदा होने का वृत्तान्त बतला दिया था। यह वृत्तान्त केवल अरुन्धती को ही मालूम था, अतः इसे 'रहस्य' कहा गया है। इस श्लोक में क्षत्रिय ब्रह्मचारी के लक्षणों का प्रतिपादन किया गया है, जिनका उल्लेख मनुस्मृति (2/40-45) में किया गया है।

□ **टिप्पणी-** उधृतम् - उद् +हन् +क्त। अवष्टम्भः - अव +स्तम्भ + घञ्। कौमारम् - कौमारस्य भावः, कुमार + अण्। शीतलयति - शीतलानि करोति, 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिच्। अपवार्य - अप +वृ + णिच्, ल्यप्। रहस्यम् - रहसि भवम्, रहस् + यत्। विद्मः - विद् + लट्। □

**कंचुकी -** नूनं क्षत्रियब्रह्मचारी दारकोऽयमिति मन्ये।

**जनकः** - एवमेतत्। अस्य हि -

**चूडाचुम्बितकंकपत्रमभितस्तूणीद्वयं पृष्ठतो**

**भस्मस्तोकपवित्रालाञ्छनमुरो धत्ते त्वचं रौरवीम्।**

**मौर्व्या मेखलया नियन्त्रितमधोवासश्च मंजिष्ठकं**

**पाणौ कार्मुकमक्षसूत्रवलयं दण्डोऽपरः पैप्पलः।।20 ।।**

**अन्वयः -** पृष्ठतः अभितः चूडाचुम्बितकंकपत्रं तूणीद्वयं (वर्तते)भस्मस्तोकपवित्र- लाञ्छनम् उरः रौरवीं त्वचं धत्ते। अध्: मौर्व्या मेखलया नियन्त्रितं मञ्जिष्ठकं वासः, पाणौ कार्मुकम्, अक्षसूत्रवलयम्, अपरः पैपलः दण्डः।।20 ।।

**कंचुकी-** मैं समझता हूँ कि यह बालक निश्चय रूप से क्षत्रिय ब्रह्मचारी है।

**जनक-** यह बात ऐसी ही है, क्योंकि-

इसके पृष्ठभाग में दोनों बगल दो तरकस हैं, जिनके (बाण में लगे) कंकपक्षों को शिखाएँ चूम रही हैं (छू रही हैं), भस्म के अल्पांश से पवित्र चिह्न से इसका वक्षःस्थल सुशोभित है, जो रुरुमृग के चर्म को धारण कर रहा है। उससे नीचे मूर्वा के बने हुए कटिसूत्र से कसा हुआ, मँजीठ के रंग से रंगा वस्त्र है, हाथ में धनुष, वलयाकार रुद्राक्षमाला तथा धनुर्दण्ड के अतिरिक्त पीपल का दण्ड है।।20।। इस पद्य में तुल्योगिता अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

☐ **व्याख्या-**दण्डं तथा पैप्पलम् (पाठा)-इस पाठ के अनुसार 'अयम्' कर्ता, 'धत्ते' क्रिया तथा त्वक् से लेकर दण्ड तक सभी कर्म होंगे और इन सभी त्वगादि प्रस्तुत पदार्थों का 'धत्ते' इस एक क्रिया के साथ सम्बन्ध होने से तुल्ययोगिता अलंकार होगा।

अपरे (पाठा.)-अपरे पाणौ अर्थात् दूसरे हाथ में।

☐ **टिप्पणी-** ब्रह्मचारी - ब्रह्म = वेदः, उपचारात् वेदाध्ययनव्रतमपि ब्रह्म, तच्चरितुं शीलमस्येति ब्रह्मचारी, ब्रह्मन् +चर् + णिनि (ताच्छील्ये)। पैप्पलः - पिप्पलस्य विकारः, पिप्पल + अण्।

**जनकः -** भगवत्यरुन्धति! किमुत्प्रेक्षसे कुतस्तयोऽयमिति।

**अरुन्धती -** अद्यैवागता वयम्।

**जनकः -** आर्य गृष्टे! अतीव मे कौतुकं वर्तते, तद् भगवन्तं वाल्मीकिमेव गत्वा पृच्छ। इमं च बालकं - 'ब्रूहि वत्स! केऽप्येते प्रवयसस्त्वां दिदृक्षव' इति।

**कंचुकी -** यदाज्ञापयति देवः। (इति निष्क्रान्तः)

**कौसल्या -** किं मन्यध्व एवं भणित आगमिष्यतीति?

**जनकः -** भिद्येत वा सद्वृत्तमीदृशस्य निर्माणस्य?

**कौसल्या** – (निरुप्य) कथं सविनयनिशामितगृष्टिवचनो विसर्जितर्षिदारक इतोभिमुखं प्रसृत एव स वत्सः।

**जनकः** – (चिरं निर्वर्ण्य) भोः! किमप्येतत्?

**महिम्नामेतस्मिन्विनयशिशुतामौग्ध्यमसृणो**

**विदग्धैर्निर्ग्राह्यो न पुनरविदग्धैरतिशयः।**

**मनो मे सम्मोहस्थिरमपि हरत्येष बलवा-**

**नयोधातुं यद्वत्परिलघुरयस्कान्तशकलः।।21 ।।**

**अन्वयः** - एतस्मिन् विनयशिशुतामौग्ध्यमसृणः विदग्धैः, न पुनः अविदग्धै, निर्ग्राह्यः महिम्नाम् अतिशयः (वर्तते) यद्वत् परिलघुः अयस्कान्तशकलः अयोधतुम् तद्वत् बलवान् एषः सम्मोहस्थिरमपि मे मनः हरति ।।21 ।।

**जनक**-भगवती अरुन्धती! 'यह कहाँ से आया है?' (यह किस माता-पिता से उत्पन्न हुआ?) इस विषय में आप क्या सम्भावना करती हैं?

**अरुन्धती**-हम लोग आज ही आये हैं (अतः कुछ कहा नहीं जा सकता)।

**जनक**-आर्य गृष्टि! मुझे अत्यन्त कुतूहल हो रहा है, अतः भगवान् वाल्मीकि के ही पास जाकर पूछो और इस बालक से कहो - 'वत्स! ये कुछ बूढ़े लोग तुमको देखना चाहते हैं'।

**कंचुकी**-महाराज की जो आज्ञा। (ऐसा कह कर चला गया)।

**कौसल्या**-क्या आप समझते हैं कि इस प्रकार से कहने पर (वह कुमार) आयेगा?

**जनक**-क्या इस प्रकार की आकृति का सदाचार टूट सकता है?

**कौसल्या**-(भली-भाँति देखकर) अहो! वह बच्चा विनयपूर्वक गृष्टि के वचन को सुनते (ही) मुनिकुमारों को त्याग कर, हम सब की ओर चल पड़ा।

**जनक-(**बहुत समय तक ध्यानपूर्वक देखकर) अरे! यह बड़ी विलक्षण बात है!

इस (बालक) में महिमाओं का (वह) उत्कर्ष है जो नम्रता, शिशुता तथा सरलता के कारण कोमल एवं मनोरम है तथा जो निपुण जनों द्वारा ही ज्ञेय है, न कि प्राकृत जनों के द्वारा। यह बलवान् (बालक) हर्षादि

के अतिरेक में भी स्थिर रहने वाले मेरे मन को आकृष्ट करता है, जैसे अत्यन्त छोटा-सा चुम्बक का टुकड़ा लोहपिण्ड को (खींचता है) ।।21।। इस पद्य में उपमा अलंकार तथा शिखारिणी छन्द है।

□**टिप्पणी**-कुतस्त्यः - कुतस् + ल्यप्। कौतुकम् - कुतुकमेव कौतुकम्, स्वार्थे अण् कुतुक + अण् = कौतुकम्।

□ **लवः** –(प्रविश्य) अज्ञातनामक्रमाभिजनान् पूज्यानपि स्वतः कथमभिवादयिष्ये? (विचिन्त्य) अयं पुनरविरुद्धः प्रकार इति वृद्धेभ्यः श्रूयते। (सविनयमुपसृत्य) एष वो लवस्य शिरसा प्रणामपर्यायः।

**अरुन्धती-जनकौ -** कल्याणिन्! आयुष्मान् भूयाः।

**कौसल्या -** जात चिरंजीव।

**अरुन्धती -** एहि वत्स! (लवमुत्संगे गृहीत्वात्मगतम्) दिष्टया न केवलमुत्संग श्चिरान्मनोरथोऽपि मे सम्पूर्णः।

**कौसल्या** – (उत्संगे गृहीत्वा)जात! इतोऽपि तावदेहि। अहो! न केवलं दरविकसन्नीलोत्पल-श्यामलोज्ज्वलेन देहबन्धेन कवलितारविन्दकेसरकषायकण्ठकलहंसनिनाद- दीर्घदीर्घेण स्वरेण च रामभद्रमनुहरति। ननु कठोरकमलगर्भपक्ष्मलः शरीरस्पर्शोऽपि तादृश एव वत्सस्य। जात! प्रेक्षे तावत्ते मुखपुण्डरीकम्। राजर्षे! किं न प्रेक्षसे निपुणं निरूप्यमाणमस्य मुखं वत्साया वध्वा मुखचन्द्रेण संवदत्येव?

**जनकः -** पश्यामि सखि! पश्यामि।

**कौसल्या** - अहो! उन्मत्तीभूतमिव मे हृदयं किमपीतोमुखं विप्रलपति।

**जनकः -वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते**
**सम्पूर्णप्रतिबिम्बितेव निखिला सैवाकृतिः सा द्युतिः।**
**सा वाणी विनयः स एव सहजः पुण्यानुभावोऽप्यसौ**
**हा हा दैव किमुत्पथैर्मम मनः पारिप्लवं धावति।।22 ।।**

**अन्वयः -** अस्मिन् शिशौ वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च सैव निखिला आकृतिः सा द्युतिः सम्पूर्णप्रतिबिम्बितेव अभिव्यज्ते सा वाणी, स एव सहजः, विनयः, पुण्यानुभावः अपि असौ, हा हा! दैव! मम पारिप्लवं मनः किम् उत्पथैः धवति**?** ।।22 ।।

□**अर्थ-** लव-(प्रवेश कर) जिनका नाम, प्रणामार्थ पूज्यानुक्रम तथा कुल अज्ञात है, ऐसे पूज्य जनों को भी अपनी बुद्धि से किस प्रकार प्रणाम करूँगा? (सोचकर) 'यह विरोध् रहित पद्धति है' - ऐसा बड़े-बूढ़ों से सुना जाता है। (विनयपूर्वक समीप जाकर) आप लोगों को लव के ये शिरसा प्रणाम हैं।

**अरुन्धती और जनक-**हे सौभाग्यशाली! आयुष्मान् होओ।

**कौसल्या-**हे पुत्र! बहुत समय तक जियो।

**अरुन्धती-**आओ बच्चा! (लव को गोद में लेकर, मन ही मन) भाग्य से न केवल गोद, मेरा (सीता के पुत्रों को अंक में लूँ – यह) मनोरथ भी(आज) बहुत समय के बाद पूरा हो गया।

**कौसल्या-**पुत्र! तनिक इधर भी आओ। (गोद में लेकर) अहो! न केवल कुछ खिले हुए नीलकमल के समान श्याम तथा सुन्दर शरीर की रचना से ही, अपितु कमलकेशर के खाने से सुमधुर कण्ठस्वर वाले राजहंस के स्वर के समान दीर्घस्वर भी रामभद्र का अनुकरण करता है तथा पूर्ण विकसित कमल के भीतरी भाग के समान कोमल शरीर-स्पर्श भी वत्स का वैसा ही है। पुत्र! तेरे मुखकमल को तो देखूं। (ठुड्डी को ऊपर उठा कर, ध्यानपूर्वक देख कर आँसू और विशेष अभिप्राय के साथ) राजर्षि! क्या देख नहीं रहे हो कि ध्यानपूर्वक देखा जाता हुआ इसका मुख वत्सा वधू(सीता) के मुखचन्द्र से मिलता-जुलता है।

**जनक-**देखता हूँ, सखि, देखता हूँ।

**कौसल्या**-अहो! विक्षिप्त-सा हुआ मेरा मन इस बालक के विषय में इस प्रकार का असम्भाव्य प्रलाप (विविध तर्क) करता है।

**जनक-**इस बालक में बेटी (सीता) की तथा रघुश्रेष्ठ (राम) की वही समग्र आकृति, वही कान्ति पूर्णरूप से प्रतिबिम्बित-सी स्पष्ट लक्षित हो रही है। वही वाणी है, वही नैसर्गिक विनय है, वही पावन प्रभाव भी है। हा! हा! दैव! मेरा चंचल मन क्यों विरुद्ध मार्गों से दौड़ रहा है**?।।22।।** प्रस्तुत पद्य में तुल्योगिता अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

□**व्याख्या-** हंसघोपघर्घरानुनादिना(पाठाú) - कलहंस के समान घर्घर अनुनाद करने वाला। ‘घर्घर’ यह अव्यक्तानुकरणात्मक शब्द है। वीरराघव ने इसका अर्थ ‘कांस्यध्वनि’ किया है।

उत्पथैः धावति-विरुद्ध मार्गों से दौड़ता है - सीता निस्सन्देह मर चुकी है, फिर भी इस बालक को सीता पुत्र होने की संभावना करता है।

□**टिप्पणी-** पर्यायः - परि +इ (गतौ) +घञ् । कल्याणिन् - कल्याण + ईनि (मतुबर्थक)। सम्पूर्णः - सम् +पृ+ (पालनपूरणयोः) +क्त ।

**कौसल्या -** जात! अस्ति ते माता, स्मरसि वा तातम्?

**लवः -** नहि, नहि।

**कौसल्या -** ततः कस्य त्वम्?

**लवः -** भगवतो वाल्मीकेः।

**कौसल्या -** अयि जात! कथयितव्यं कथय।

**लवः -** एतावदेव जानामि।(नेपथ्ये)

भो भोः सैनिकाः! एष खलु कुमार श्चन्द्रकेतुराज्ञापयति न केनचिदाश्रमाभ्यर्णभूमय आक्रमितव्या इति।

**अरुन्धती-**जनकौ - अये! मेध्याश्वरक्षाप्रसंगादुपागतो वत्सश्चचन्द्रकेतुरद्य द्रष्टव्य इत्यहो! सुदिवसः।

**कौसल्या** – वत्सलक्ष्मणस्य पुत्रक आज्ञापयतीत्यमृबिन्दुसुन्दराणि अक्षराणि श्रूयन्ते।

**लवः** - आर्य! क एष चन्द्रकेतुर्नाम।

**जनकः** - जानासि रामलक्ष्मणौ दाशरथी?

**लवः** - एतावेव रामायणकथापुरुषौ?

**जनकः** - अथ किम्?

**लवः** - तत्कथं न जानामि?

**जनकः** - तस्य लक्ष्मणस्यायमात्मजश्चन्द्रकेतुः।

**लवः** - ऊर्मिलायाः पुत्रास्तर्हि मैथिलस्य राजर्षेदौहित्राः।

**अरुन्धती**- (विहस्य) आविष्कृतं कथाप्रावीण्यं वत्सेन।

**जनकः** – (विचिन्त्य) यदि त्वमीदृशः कथायामभिज्ञस्तद् ब्रूहि तावत् पृच्छामस्तेषां दशरथात्मजानां कियन्ति किन्नामधेयान्यपत्यानि केषु केषु दारेषु प्रसूतानीति।

**लवः** - नायं कथाप्रविभागोऽस्माभिरन्येन वा श्रुतपूर्वः।

**जनकः** - किं न प्रणीत एव कविना?

**लवः** - प्रणीतो न प्रकाशितः। तस्यैव कोऽप्येकदेशः सन्दर्भान्तरेण रसवानभिनेयार्थः कृतः। तं च स्वहस्तलिखितं मुनिर्भगवान् व्यसृजद् भगवतो भरतस्य मुनेस्तौर्यत्रिकसूतकारस्य।

**जनकः** - किमर्थम्?

**लवः** - स किल भगवान् भरतस्तमप्सरोभिः प्रयोजयिष्यतीति।

**जनकः** - सर्वमिदमाकूततरमस्माकम्।

**लवः** - महती पुनरस्मिन् भगवतो वाल्मीकेरास्था। यतो येषामन्तेवासिनां हस्तेन तत्पुस्तकं भरताश्रमं प्रति प्रेषितं तेषामनुयात्रिक श्चापपाणिः प्रमादापनोदनार्थम् अस्मद्भ्राता प्रेषितः।

**कौसल्या** - जात! भ्राताऽपि तेऽस्ति?

**लवः** - अस्त्यार्यः कुशो नाम।

**कौसल्या** - ज्येष्ठ इति भणितं भवति।

**लवः** - एवमेतत्। प्रसवानुक्रमेण स ज्यायान्।

**जनकः -** किं यमजावायुष्मन्तौ?

**लवः -** अथ किम्?

**जनकः -** वत्स! कथय कथाप्रबन्धस्य कीदृशः पर्यन्तः?

**लवः -** अलीकपौरापवादोद्विग्नेन राज्ञा निर्वासितां देवयजनसम्भवां सीतादेवीमासन्न-प्रसववेदनामेकाकिनीमरण्ये परित्यज्य लक्ष्मणः प्रतिनिवृत्त इति।

**कौसल्या -** हा वत्से मुग्धचन्द्रमुखि! क इदानीं ते शरीरकुसुमस्य झटिति दैवदुर्विलासपरिणाम एकाकिन्या निपतितः।

**जनकः -** हा वत्से!

**नूनं त्वया परिभवं च वनं च घोरं**

**तां च व्यथा प्रसवकालकृतामवाप्य।**

**क्रव्याद्गणेषु परितः परिवारयत्सु**

**सन्त्रस्तया शरणमित्यसकृत् स्मृतोऽस्मि् ।।23 ।।**

**अन्वयः -** परिभवं च घोरं वनं च प्रसवकालकृतां तां व्यथां च अवाप्य क्रव्याद्गणेषु परितः परिवारयत्सु, सन्त्रस्तया त्वया नूनं शरणम् इति असकृत् स्मृतःअस्मि।।23।।

**कौसल्या-**पुत्र, तुम्हारी माता है? अथवा पिता को याद करते हो?

**लव-**नहीं, नहीं।

**कौसल्या-**तो तुम किसके (पुत्र) हो?

**लव-**भगवान् वाल्मीकि के।

**कौसल्या-**अरे बेटा, कहने योग्य बात ही कहो।

**लव-**इतना ही जानता हूँ।(नेपथ्य में)

अरे अरे सैनिको! ये कुमार चन्द्रकेतु आज्ञा दे रहे हैं कि किसी के द्वारा आश्रम की समीपवर्ती भूमियाँ आक्रान्त (पीडित) न की जायँ।

**अरुन्धती और जनक-**अरे यज्ञीय अश्व की रक्षा के सिलसिले में आये हुए चन्द्रकेतु का आज दर्शन होगा। इसलिए अहो, आज का दिन शुभ है।

**कौसल्या-**'वत्स लक्ष्मण का प्रिय पुत्र आज्ञा देता है' - ये अमृतबिन्दु के समान सुमधुर अक्षर सुने जा रहे हैं।

**लव-**आर्य! ये चन्द्रकेतु कौन हैं?

**जनक-**दशरथ के पुत्र राम और लक्ष्मण को जानते हो?

**लव-**क्या रामायणकथा के प्रधान पुरुष ये ही (दोनों) हैं?

**जनक-**और क्या?

**लव-**तब क्यों नहीं जानता हूँ?

**जनक-**उन्हीं लक्ष्मण का, यह चन्द्रकेतु पुत्र है।

लव-तो ये (चन्द्रकेतु) ऊर्मिला के पुत्र और मिथिलापति राजर्षि जनक के दौहित्रा हैं।

**अरुन्धती-**(हँसकर) बच्चे ने कथा में (अपना) नैपुण्य प्रकट कर दिया।

**जनक-(**सोचकर) तुम यदि कथा में ऐसे कुशल हो तो कहो, हम पूछते हैं - उन दशरथ-पुत्रों के कितने और किस-किस नाम वाले पुत्र किन-किन स्त्रियों से उत्पन्न हुए हैं।

**लव-**कथा का यह भागविशेष हमने या अन्य किसी ने पहले नहीं सुना है।

**जनक-**क्या कवि (वाल्मीकि)ने (उसे) रचा ही नहीं?

लव-रचा तो गया है, किन्तु (किसी पर) प्रकट नहीं किया गया है। उसी का कोई एक अंश (श्रव्य प्रबन्ध् से) भिन्न प्रबन्ध् (दृश्यरूपक) से सरस और अभिनय योग्य कथावस्तु वाला रचा गया है। अपने हाथ से लिखे हुए उसको भगवान् मुनि (वाल्मीकि) ने नाट्यशास्त्र प्रणेता भगवान् भरत मुनि के पास भेजा है।

**जनक-**किसलिए?

**लव-**सुना जाता है कि ये भगवान् भरत मुनि अप्सराओं से उसे अभिनीत करायेंगे।

**जनक-**हमारे लिए तो यह सब अतिशय गूढार्थक है।

**लव-**और उसमें भगवान् वाल्मीकि की बड़ी आस्था है, क्योंकि जिन शिष्यों के हाथों से उस पुस्तक को भरत के आश्रम पर भेजा है, उनकी अनवधानता को दूर करने के लिए उनका अनुयायी बना कर धनुष हाथ में लिये हुए हमारा भाई भेजा गया है।

**कौसल्या-**वत्स! भाई भी तुम्हारे हैं?

**लव-**पूज्य कुश नाम वाले(भाई) हैं।

**कौसल्या-**कहने से ध्वनित होता है कि वह ज्येष्ठ है।

**लव-**हाँ, यही बात है, उत्पत्ति के क्रम से वे (मुझसे) बड़े हैं।

**जनक-**क्या तुम दोनों आयुष्मान् जुड़वाँ हो?

**लव-**और क्या?

**जनक-**बेटा, कहो, कथा-प्रबन्ध् का अवसान किस प्रकार का है?

**लव-**पुरवासियों के मिथ्या अपवाद से उद्विग्न महाराज (राम) के द्वारा निर्वासित, यज्ञ भूमि से प्रकट हुई, प्रसव-वेदना से पीड़ित देवी सीता को अरण्य में अकेली छोड़कर लक्ष्मण लौट गये, ऐसा (कथा-प्रबन्ध् का अवसान है)।

**कौसल्या-**हाय! वत्से! भोली-भाली! चन्द्र के समान मुख वाली! तुझ जैसी असहाया के कुसुम-सदृश शरीर पर सहसा भाग्य के स्वेच्छाचार का कैसा परिणाम प्रकट पड़ा!

**जनक-**हाय बेटी, (पति द्वारा किये गये)तिरस्कार को, भयंकर वन को तथा प्रसवकाल की उस वेदना को पाकर, चारों ओर से कच्चे मांस खाने वाले (हिंसक जन्तुओं) के समूहों के घेरते रहने पर अत्यन्त डरी हुई तुमसे 'मैं रक्षक हूँ' ऐसा निस्सन्देह मैं अनेक बार स्मृत हुआ हूँगा ।।23।। इस पद्य में तुल्योगिता अलंकार तथा बसन्ततिलका छन्द है।

☐ **व्याख्या-** 'वत्सलक्ष्मणस्य पुत्रकः' इत्यादि कौसल्या के कथन और तदनन्तर लव के द्वारा किये गये प्रश्न 'क एष चन्द्रकेतुर्नाम' में संगति स्थापित करने के लिए कौसल्या के कथन को 'स्वगत' मानना पड़ेगा, अन्यथा लव का प्रश्न उपपन्न नहीं होगा।

अप्सरोभिः प्रयोजयिष्यति-सातवें अंक में कवि ने जो गर्भांक अथवा गर्भनाटक की योजना की है, जिसमें अप्सराएँ बाल्मीकि ऋषि रचित नाटक खेलेंगी, की सूचना यहाँ लव के मुख से सामाजिकों को दी गयी है।

**टिप्पणी -**कथयितव्यम् - प्रावीण्यम् - प्रवीणस्य भावः, प्रवीण + ष्यञ् । अभिनेयः - अभि +नी + यत् (अचो यत्')। शरीर-कुसुमस्य - शरीरं कुसुममिवेति शरीरकुसुमं तस्य, उपमित समास।

**लवः** – (अरुन्धतीं प्रति) आर्ये! कावेतौ?

**अरुन्धती -** इयं कौसल्या। अयं च जनकः।

**लवः** – (सबहुमानखेदकौतुकं पश्यति)

**जनकः -** अहो निद्रयता दुरात्मनां पौराणाम्! अहो रामस्य राज्ञः क्षिप्रकारिता!

**एतद्वैशसवज्रघोरपतनं शाश्वन्ममोत्पश्यतः**
**क्रोधस्य ज्वलितुं ध्गित्यवसरश्चापेन शापेन वा।**

**कौसल्या** – (सभय-कम्पनम्) भगवति! परित्रायस्व परित्रायस्व परित्रायस्व, प्रसादय कुपितं राजर्षिम्।

**लवः - एतद्धि परिभूतानां प्रायश्चित्तं मनस्विनाम्।**

**अरुन्धती - राजन्नपत्यं रामस्ते पाल्याश्च कृपणा जनाः।।24 ।।**

**अर्थ- लव-(**अरुन्धती से) आर्ये! ये दोनों कौन हैं?

**अरुन्धती-**यह कौसल्या हैं। ये जनक हैं।

**लव-(**अत्यधिक सम्मान, खेद और कौतूहल के साथ देखता है।)

**जनक-**ओह! दुरात्मा पुरवासियों की निर्दयता! ओह! रामभद्र की क्षिप्रकारिता (जल्दबाजी)!

(सीता पर किये गये) इस हिंसा रूपी घोर वज्रपात को निरन्तर सोचते हुए अब मेरे क्रोध् का धनुर्ग्रहण के रूप में अथवा शाप के रूप में धिक् से भड़क उठने का अवसर है।

**कौसल्या-**(भय से काँप कर) हे भगवती! (अरुन्धती) रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। कुपित राजर्षि (जनक) को प्रसन्न कीजिए।

**लव-**अपमानित किये गये मनस्वी जनों का यही (कोप ही)प्रायश्चित्त (प्रतीकार) है। (अर्थात् अपमानित होकर मनस्वी जन ऐसा कोप करते ही हैं)।

**अरुन्धती-**राजन्! राम तो आप के पुत्र हैं और दीन प्रजानन रक्षणीय है ।।24।। प्रस्तुत पद्य में अप्रस्तुत प्रशंसा, रूपक और काव्यलिंग की संसृष्टि तथा अनुष्टुप् छन्द है।

**व्याख्या-**धिगति-सुलगती हुई आग के सहसा भड़क उठने पर 'धक्' की आवाज उत्पन्न होती है, उसी 'धक् ' ध्वनि का यह अनुकरणात्मक शब्द है। जनक का भी कोपानल बहुत समय से भीतर ही भीतर सुलग रहा है, अब वह 'धक्' शब्द कर भड़कने ही वाला है।

**टिप्पणी-**वैशसम् - विशसः = घातकः,( वि +शस् +अच्) तस्य कर्म वैशसम् - विशस+अण्। मनस्विनाम्-प्रशस्तं मनो येषां ते मनस्विनः, तेषाम्। मनस् + विन् ;प्राशस्त्य अर्थ में

**जनकः - शान्तं वा रघुनन्दने तदुभयं तत्पुत्रभाण्डं हि मे।**

**भूयिष्ठद्विजबालवृद्धविकलस्त्रौणश्च पौरो जनः।।25 ।।**

**अन्वयः -** वा रघुनन्दने तद् उभपुत्रभाण्डम्,पौरोजनश्चभूयिष्ठद्विजबालवृद्धविकलस्त्रौणः, **पौरो जनः।।25 ।।**

**जनक-**अथवा ये दोनों (चाप और शाप)राम के प्रति शान्त हो जायँ, क्योंकि वे मेरे पुत्र रूप मूलधन हैं और प्रजाजनों में बहुत से ब्राह्मण, बालक, बूढ़े, विकलांग तथा स्त्री-समूह हैं (अतः वे भी दया के पात्र हैं) ।।25।। इसमें काव्यलिंग अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

☐ **टिप्पणी-** भूयिष्ठः - बहु + इष्ठन्, बहु के स्थान में भू आदेश, 'इष्ठस्य यिट् च' (6/4/159) के अनुसार प्रत्यय के आद्यावयव इकार का लोप और यिट् का आगम।

**सम्भ्रान्ता बटवः -** कुमार, कुमार! अश्वोऽश्व इति कोऽपि भूविशेषो जनपदेषु श्रूयते। सोऽयमधुनास्माभिः प्रत्यक्षीकृतः।

**लवः** – अश्व इति पशुसमाम्नाये सांग्रामिके च पठ्यते। तद् ब्रूत कीदृशः?

**बटवः -** श्रूयताम् -

**पश्चात् पुच्छं वहति विपुलं तच्च धूनोत्यजस्रं**

**दीर्घग्रीवः स भवतिखुरास्तस्य चत्वार एव।**

**शष्पाण्यत्ति प्रकिरति शकृत्पिण्डकानाम्रमात्रान्**

**किं वाऽऽख्यातैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि यामः।।26 ।।**

**अन्वयः -** पश्चात् विपुलं पुच्छं वहति, तच्च अजस्रं धूनोति। स दीर्घग्रीवः भवति। तस्य चत्वार एव खुराः। (सः) शष्पाणि अत्ति, आम्रमात्रात् शकृत्पिण्डकान् प्रकिरति। किं वा आख्यातैः, स पुनः दूरं व्रजति, एहि एहि यामः ।।26 ।।

☐ **अर्थ-** (प्रवेश करके)

घबड़ाये हुए बटु-कुमार, कुमार! घोड़ा है घोड़ा - इस प्रकार कोई प्राणीविशेष जनपदों में

सुना जाता है, वही यह आज हमसे प्रत्यक्ष देख लिया गया।

**लव-**'अश्व ऐसा पशुसमाम्नाय(वेद का वह भाग जिसमें पशुयागों का वर्णन है) में तथा युद्धकाण्ड में भी पढ़ा जाता है। तो कहो - 'वह कैसा है'?

**बटु** लोग-अरे, सुनिये-

वह (शरीर के) पीछे वाले भाग में पूँछ धारण करता है और उसे निरन्तर हिलाता रहता है। उसकी गर्दन लम्बी होती है और (अन्य पशुओं की ही तरह) उसके चार ही खुर होते हैं। वह घास खाता है और आम के फलों के बराबर लीद के गोले-गोले छोटे लोंदें गिराता है। बहुत कहने से क्या? वह फिर दूर चला जा रहा है, आओ आओ, हम सब (उसे देखने) चलें ।।26।। इस पद्य में स्वभावोक्ति अलंकार तथा मन्दाक्रान्ता छन्द है।

☐ **व्याख्या-** पशुसमाम्नाये-विद्यासागर ने इसका अर्थ 'पशुशास्त्रो' किया है। आचार्य शेषराजशर्मा के अनुसार यह शब्द निघण्टु के उस अंश का बोध् कराता है, जिसमें पशुओं के नाम गिनाये गये हैं। वीरराघव कहते हैं - 'पशुसमाम्नाये पशुद्रव्यकयागप्रतिपादकवेदभागे'। अर्थात् यह शब्द वेद के उस

भाग का बोध् कराता है, जिसमें पशुयागों का वर्णन है। लव के कहने का आशय है कि हमने अश्व शब्द पशुयागशास्त्र और संग्रामशास्त्र में पढ़ा है। लव के इस कथन से प्रतीत होता है कि उसने भी कभी प्रत्यक्ष रूप से घोड़ा नहीं देखा था।

☐ **टिप्पणी-** प्रत्यक्षीकृतः - अप्रत्यक्षः प्रत्यक्षः कृतः इति प्रत्यक्षीकृतः समाम्नायः - सम् +आ म्ना + घञ्, युक् का आगम।

(इत्युपसृत्याजिने हस्तयोश्च कर्षन्ति)

**लवः** – (सकौतुकोपरोध्विनयम्) आर्याः! पश्यत, पश्यत एभिर्नीतोऽस्मि। (इति त्वरितं पराक्रामति)।

**अरुन्धतीजनकौ -** पूरयतु कौतुकं वत्सः।

**कौसल्या -** भगवति! जानाम्येतमनालोकयन्ती न जीवामीव। अतोऽन्यतो भूत्वा प्रेक्षामहे तावद् गच्छन्तं दीर्घायुषम्।

**अरुन्धती -** अतिजवेन दूरमतिक्रान्तः स चपलः कथं दृश्यते?

**कंचुकी** – (प्रविश्य) भगवान् वाल्मीकिराह ज्ञातव्यमेतदवसरे भवद्भिरिति।

**जनकः -** अतिगम्भीरमेतत्किमपि। भगवत्यरुन्ध्ति! सखि कौसल्ये! आर्यगृष्टे! स्वयमेव गत्वा भगवन्तं प्राचेतसं पश्यामः।

(इति निष्क्रान्तो वृद्धवर्गः)

(प्रविश्य)

**बटवः -** पश्यतु कुमारस्तदाश्चर्यम्।

**लवः -** दृष्टमवगतं च। नूनमा श्वमेधिकोऽयमश्चः।

**बटवः -** कथं ज्ञायते?

**लवः -** ननु मूर्खाः! पठितमेव हि युष्माभिरपि तत्काण्डम्। किं न पश्यथ प्रत्येकं शतसंख्या कवचिनो दण्डिनो निषगिंणश्च रक्षितारः। तत्प्रायमेव बलमिदं दृश्यते। यदीह न प्रत्ययस्तद् गत्वा पृच्छत।

**बटवः -** भो भोः! किम्प्रयोजनोऽयमश्वः परिवृतः पर्यटति?

**लवः** – (सस्पृहमात्मगतम्) अये! अश्वमेध् इति नाम विश्वविजयिनां क्षत्रियाणामूर्जस्वलः सर्वक्षत्रापरिभावी महानुत्कर्षनिष्कर्षः।

(नेपथ्ये)

**योऽयमश्वः पताकेयमथवा वीरघोषणा।**

**सप्तलोकैकवीरस्य दशकण्ठकुलद्विषः।।27 ।।**

**अन्वयः -** अयं यः अश्वः, इयं सप्तलोकैकवीरस्य दशकण्ठकुलद्विषः पताका अथवा वीरघोषणा अस्ति ।।27 ।।

☐ **अर्थ-** (ऐसा कह कर निकट जाकर मृगचर्म और हाथों को पकड़ कर लव को खींचते हैं।)

**लव-**(कौतूहल, आग्रह और विनय के साथ) हे पूज्यजनो! देखें देखें, ये सब मुझे ले जा रहे हैं। (ऐसा कह कर शीघ्र घूमता है)

**अरुन्धती -**और जनक-बेटा (अपना) कौतूहल पूर्ण करे।

**कौसल्या-**भगवति! मुझे (ऐसा) अनुभव हो रहा है कि इसे न देखती हुई मैं मानो जी नहीं रही हूँ। अतः अन्यत्र स्थित होकर अब हम जाते हुए आयुष्मान् (लव) को देखें।

**अरुन्धती-**अत्यन्त वेग से दूर निकल गया हुआ वह चपल कैसे दिखलायी देगा?

**कंचुकी-**(प्रवेश कर) भगवान् वाल्मीकि कहते हैं कि (बालक किसका है') यह बात आप लोगों को समय पर मालूम हो जायेगी।

**जनक-**यह कोई बड़ी गम्भीर (रहस्यपूर्ण) बात है। हे भगवती अरुन्धती, सखी कौसल्या, आर्य गृष्टि! हम स्वयं चल कर भगवान् वाल्मीकि से मिलें।

(ऐसा कहकर वृद्धवर्ग निकल जाता है)

(प्रवेश कर)

**बटु लोग-कु**मार उस आश्चर्य (अद्भुत वस्तु) को देखें।

**लव-**देख लिया और समझ भी गया। अवश्य यह अश्वमेध में प्रयुक्त होनेवाला घोड़ा है।

**बटु लोग-**कैसे ज्ञात होता है?

**लव-**अरे मूर्खो! तुम सबने वह (अश्वमेध वाला) प्रकरण पढ़ा ही है। क्या कवच वाले, दण्ड वाले तथा तरकस वाले रक्षकों को जिनमें प्रत्येक की संख्या सौ है, देख नहीं रहे हो, प्रायेण वैसा ही तो यह सेना दीख रही है। यदि इसमें विश्वास न हो तो जाकर पूछ लो।

**बटु लोग-**अरे अरे! किस प्रयोजन वाला यह घोड़ा (तुम सबसे) घिरा हुआ घूम रहा है।

**लव-**(स्पृहा के साथ, स्वगत) ओह! 'अश्वमेध्' यह नाम विश्वविजेता क्षत्रियों का

शक्तिशाली तथा समस्त क्षत्रियों का अनादर करने वाला, उत्कर्ष का महान् सार (पराकाष्ठा) है।

(नेपथ्य में)

यह जो अश्व है, यह सातों लोकों में अद्वितीय वीर, रावणकुल के शत्रु (भगवान् राम) की विजयवैजयन्ती अथवा उनके वीरत्व की घोषणा है ।।27।। इस पद्य में अतिश्योक्ति अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

☐**व्याख्या-** एभिर्नीतोऽस्मि-लव के कहने का अभिप्राय है - आप लोगों की बिना अनुमति प्राप्त किये मैं आप लोगों के पास से सहसा चला जा रहा हूँ, मेरी इस अशिष्टता को क्षमा करेंक्योंकि मैं स्वयं अपनी इच्छा से नहीं जा रहा हूँ, ये मेरे साथी बलात् मुझे घसीट कर ले जा रहे हैं। इस प्रकार लव ने अपने वाककौशल से अपने को निर्दोष सिद्ध करते हुए सारा अपराध उन साथियों केसिर पर मढ़ दिया।

☐ **टिप्पणी-** आश्वमेधिक: - अश्वमेध्: प्रयोजनमस्य अश्वमेध् + ठन् (‘प्रयोजनम्’ 5/1/109)। वीरराघव के अनुसार - अश्वमेधय प्रभवति आश्वमेधिक:। सप्तलोकैकवीरस्य - सप्तसु लोकेषु एकः वीरः इति उत्तरपदद्विगुः (‘तद्धितार्थोत्तर- पदसमाहारे च’ - 2/1/51)।

**लवः** – (सगर्वमिव) अहो! सन्दीपनान्यक्षराणि।

**बटवः -** किमुच्यते? प्राज्ञः खलु कुमारः।

**लवः -** भो भोः! तत्किमक्षत्रिया पृथिवी, यदेवमुद्घोष्यते?

(नेपथ्ये) अरे रे! महाराजं प्रति कुतः क्षत्रियाः?

**लवः -** धिग्जाल्मान्।

**यदि ते सन्ति सन्त्येव केयमद्य विभीषिका।**

**किमुक्तैरेभिरधुना तां पताकां हरामि वः।।28 ।।**

**अन्वयः -** यदि ते सन्ति, सन्ति एव अद्य इयं विभीषिका का? एभिः उक्तैः अधुना किम्? वः तां पताकां हरामि।।**28 ।।**

☐ **अर्थ- लव-(**गर्व के साथ) अहो! ये अक्षर (क्रोध् और उत्साह के) उद्दीपक हैं।

**बटु-**क्या कहा जाय? कुमार (लव) निस्सन्देह बुद्धिमान् हैं।

**लव-**अरे, तो क्या पृथिवी क्षत्रिय-विहीन हो गयी जो इस तरह चिल्ला कर घोषणा की जा रही है?

(नेपथ्य में) अरे रे! महाराज (राम) के सामने क्षत्रिय कहाँ?

**लव**-बिना विचार किये बात कहने वाले (तुम) नीचों को धिक्कार है।

यदि वे (महाराज राम) हैं तो हैं ही, आज यह त्रासोत्पादन कैसा! (तुम लोगों के)इन वचनों से क्या? तुम्हारी उस विजयपताका को मैं अभी छीन लेता हूँ।**।28।**। इसमें अर्थापत्ति अलंकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

☐ **व्याख्या** -यदि नो सन्ति सन्त्येव (पाठाú) - यदि (तुम कहते हो) क्षत्रिय नहीं हैं, (तो मैं कहता हूँ) हैं ही।

शरसम्बाधम् (पाठाú) - पताका का विशेषण। शरैः सम्बाध्ः आच्छादनं यस्यास्ताम्, बाणों से आच्छादित पताका को।

☐ **टिप्पणी-** प्राज्ञः - प्रज्ञः ;प्र +ज्ञा + क, (आतश्चयोपसर्गे') एव प्राज्ञः - प्रज्ञ +अण् (स्वार्थे)। अक्षत्रिया - न क्षत्रिया यस्यां तथाविध (नञ् बहुव्रीहि)। ☐

भो भो बटवः! परिवृत्य लोष्ठैरभिघ्नन्तो नयतैनमश्वम्। एष रोहितानां मध्ये वराक श्चरस्तु।

(प्रविश्य सक्रोधदर्पः)

**पुरुषः** - धिक्चापलं किमुक्तवानसि? तीक्ष्णनीरसा ह्यायुधीयश्रेणयः शिशोरपि दृप्तां वाचं न सहन्ते। राजपुत्रश्चन्द्रकेतुररिमर्दनः सोऽप्यपूर्वारण्यदर्शनाक्षिप्तहृदयो ना यावदायाति तावत् त्वरितमनेन तरुणगहेनानपसर्पत।

**बटवः** - कुमार! कृतमनेनाश्वेन, तर्जयन्ति विस्फुरितशस्त्राः कुमारमायुधीयश्रेणयः। दूरे चाश्रमपदमितस्तदेहि हरिणप्लुतैः पलायामहे।

**लवः** – (विहस्य) किं नाम विस्फुरन्ति शस्त्राणि? (इति धनुरारोपयन्)

**ज्याजिह्वया वलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रमुद्गारिघोरघनघर्घरघोषमेतत्।**

**ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवक्त्रयन्त्रजृम्भाविडम्बिविकटोदरमस्तु चापम्।।29 ।।**

(इति यथोचितं परिक्रम्य निष्क्रान्ताः सर्वे)

**अन्वयः** - ज्याजिह्वया वलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रम् उद्गारिघोरघनघर्घरघोषम् एतत् चापं ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवक्त्रयन्त्रजृम्भाविडम्बिविकटोदरमस्तु।**।29 ।।**

☐ **अर्थ**-अजी बटु लोगो! इस घोड़े को घेर कर मिट्टी के ढेलों से पीटते हुए (आश्रम को) ले जाओ। यह बेचारा रोहित मृगों के बीच विचरण करे।

(प्रवेश करके, क्रोध और गर्व के साथ)

**पुरुष-(**तेरी) चपलता को धिक्कार! क्या कहा है तूने! प्रचण्ड और निर्दय शस्त्रजीवियों की पंक्तियाँ बच्चे की भी गर्वभरी बात को माफ नहीं करती हैं। राजकुमार चन्द्रकेतु शत्रुसंहारक है। उसका भी चित्त अपूर्व वन को देखने में आसक्त है, (इसलिए) जब तक वह आ नहीं रहा है, तब तक तुम सब (अपने प्राण बचाने के लिए) शीघ्र इन वृक्षों की झुरमुट से (होते हुए) भाग जाओ।

**बटु** लोग-कुमार! इस अश्व की आवश्यकता नहीं। चमकते शस्त्रों वाली शस्त्रजीवियों की पंक्तियाँ कुमार को डरा रही हैं। आश्रम भी यहाँ से दूर है। अतः आओ हरिण की चाल से भागें।

**लव-(**हँसकर) क्या शस्त्र चमक रहे हैं? (ऐसा कहकर धनुष पर डोरी चढ़ाता हुआ)

मौर्वी रूप जिह्वा से वेष्टित उग्र अग्रभाग रूप दाढ़ों वाला, उर्ध्वगामी भीषण मेघ के शब्द के समान घर्घर घोष करने वाला यह धनुष निगल लेने में लगा हुआ होने के कारण अट्टहास करता हुआ, यमराज के मुखयन्त्र की जम्हाई का अनुकरण करने के कारण भीषण उदर (अन्तराल) वाला होवे**।।29।।** प्रस्तुत पद्य में रूपक और उपमा का सांकर्य तथा वसन्ततिलका वृत्त है।

(यथोचित घूम कर सभी चले गये।)

**इति महाकवि-भवभूतिविरचित उत्तररामचरितेकौसल्याजनकयोगो नाम चतुर्थो अंकः**

**महाकवि भवभूति विरचित उत्तररामचरित में 'कौसल्याजनकयोग' नामक चतुर्थ अंक समाप्त।**

## □अभ्यास प्रश्न 1

1. पंचप्रसूति किसको और क्यों कहा गया है?

2. 'सकौतुकोपरोध्विनयम्' इस पद की व्याख्या पठित-पाठ्य केआधार पर कीजिए।

## अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित पद्यों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

क. आविर्भूतज्योतिषां....................विप्लुतार्थां वदन्ति।।

ख.योऽयमश्वः.....................दशकण्ठकुलद्विषः।।

ग.कन्यायाः किल पूजयन्ति..................पापस्थ धिग्जीवितम्।।

## 4.4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि वाल्मीकि के आश्रम परिसर में अश्वमेध यज्ञ के घोड़े का आगमन होता है। लव को घोड़ा दिखलाने के लिए बच्चे खींच ले जाते हैं। लव-अश्वरक्षक वीरों की घोषणा न सहन कर पाने के कारण बच्चों से कहता है कि अश्व को ढेलों से मारते हुए आश्रम में ले चलो, यह बेचारा मृगों के बीच में चरेगा। अन्य बच्चे सैनिकों को देखकर भाग जाते हैं, परन्तु लव शस्त्र लेकर खड़ा हो जाता है। इसके अतिरिक्त अश्व की रक्षा में संलग्न चन्द्रकेतु तथा वाल्मीकि के काव्यादि की चर्चा की गई है।

## 4.5 शब्दावली:-

शरसम्बाधम् बाणों से आच्छादित
पशुसमाम्नाय वेद का वह भाग जिसमें पशुयागों का वर्णन है
धिगति सुलगती हुई आग
विप्लुत बहा हुआ, डूबा हुआ,

## 4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1 एवं 2 के उत्तर इकाई में देखें।

## 4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1.उत्तररामचरितम् (भवभूति), एमúआरú काले (वीरराघवकृत टीका)मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1962
2.उत्तररामचरितम् (भवभूति), स्वरूप आनंद एवं जनार्दन शास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1977
3.उत्तररामचरितम् (भवभूति), ब्रह्मानन्द शुक्ल, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1987

## 4.8 सहायक व उपयोगी पुस्तकें:-

1.भवभूति और उनकी नाट्यकला, अयोध्या प्रसाद सिंह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1988
2.भवभूति ग्रन्थावली, राम प्रताप त्रिपाठी शास्त्री लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973
3.भवभूति के नाटक, ब्रज वल्लभ शर्मा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1973

## 4.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. चतुर्थ अंक के उत्तरार्द्ध का कथासार अपने शब्दों में लिखिये।

2. लव की चारित्रिक विशेषताओं को लिखिये।